THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY
OU_180119
UNIVERSAL LIBRARY

सुलभ साहित्य-माला ग्यारहवाँ पुष्प

शरत्-साहित्य

पण्डितजी, मँझली बहन

११

अनुवादकर्त्ता

रामचन्द्र वर्मा

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय
हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई

प्रथम बार
सितम्बर, १९३८

मूल्य दस आना

मुद्रक—
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
६ केलेवाडी, गिरगाँव, बम्बई नं. ४

निवेदन

अनेक अनिवार्य कारणोंसे शरत्साहित्यका यह ग्यारहवाँ पुष्प बहुत विलम्बसे प्रकाशित हो रहा है। इसके लिए उत्सुक पाठक हमें क्षमा करें। हम प्रयत्न कर रहे हैं कि आगेके पुष्पोंके लिए पाठकोंको इतनी राह न देखनी पड़े और वे यथासंभव जल्दी ही प्रकाशित हों।

—प्रकाशक

पण्डितजी

पहला परिच्छेद

कुंज वैष्णवकी छोटी बहन कुसुमकी बाल्यावस्थाका इतिहास इतना भद्दा है कि अब उसका केवल स्मरण करके ही वह मारे लज्जा और दुःखके जमीनमें गड़ जाती है। जब वह दो ही बरसकी थी तब पिताका देहान्त हो गया था और माँने भीख माँग माँगकर अपने लड़के और लड़कीका भरण-पोषण किया था। इसके बाद जब वह पाँच बरसकी हुई तब लड़कीको सुन्दर देखकर बाड़लग्रामके धनी गृहस्थ गौरदास अधिकारीने अपने पुत्र वृन्दावनके साथ उसका विवाह कर दिया। परन्तु, विवाहके थोड़े ही दिनों बाद कुसुमकी विधवा माँकी बहुत बदनामी फैली; इसलिए, गौरदासने कुसुमका परित्याग करके अपने लड़केका दूसरा विवाह कर लिया।

कुसुमकी माँ दुःखी और गरीब होनेपर भी बहुत अभिमानिनी थी। वह भी गुस्सेमें आकर अपनी कन्याको दूसरी जगह ले गई और उसी महीनेमें एक दूसरे असल बैरागीके साथ उसकी कण्ठी-बदल क्रिया कर दी। पर, छः महीनेके अन्दर ही वे असल बैरागीराम नित्यधामकी ओर सिधार गये। परन्तु, कुसुमकी माँको छोड़कर और कोई नहीं जानता था कि वे लोग कौन थे, या किस गाँवके रहनेवाले थे। यहाँतक कि कुंज भी नहीं जानता था। उसकी माँ किसीको भी अपने साथ नहीं ले गई थी। कुसुमकी सचमुच ही उस बैरागीसे कण्ठी बदली गई थी, या यह केवल लोगोंका कहना ही कहना था, सो भी कोई निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता था। इतनी सब बातें कुसुमकी सात वर्षकी

अवस्थामें ही हो गई। तभीसे कुसुम विधवा है। संक्षेपमें यही उसकी बाल्यावस्थाका इतिहास है। अब वह सोलह वर्षकी युवती है। रूप उसके अंग अंगसे फूटा पड़ता है। उसमें गुण भी वैसे ही हैं और काम-काज करनेमें भी वह वैसी ही चतुर है। और फिर, लिखना-पढ़ना भी जानती है। किसी बहुत बड़े आदमीके घरके लिए भी शायद वह अनुपयुक्त नहीं जँचती।

इधर वृन्दावनके पिता मर गये और स्त्री भी मर गई। इस समय उनकी अवस्था भी पचीस-छब्बीस वर्षसे अधिक नहीं है। अब वे कुसुमको फिरसे ग्रहण करना चाहते हैं। वे पचास रुपए नगद, पाँच जोड़े धोती-दुपट्टे, और कुसुमको पाँच-भर सोनेके और सौ-भर चाँदीके गहने देनेके लिए तैयार हैं। गरीब कुंजनाथ लालचमें पड़ गया है। वह बहुत चाहता है कि कुसुम राजी हो जाय, पर वह ध्यान ही नहीं देती। इन दोनोंके माँ-बाप नहीं हैं। दोनों भाई बहन मिलकर एक झोपड़ीमें रहते हैं जो गाँवमें ब्राह्मणोंके मुहल्लेके अन्दर ही है। बाल्यावस्थासे ही कुसुम ब्राह्मणोंकी कन्याओंके साथ खेलती-कूदती रही है, उन्हींके साथ रहकर वह सयानी हुई है और उन्हींके साथ हर पण्डितकी पाठशालामें पढ़ी है। आज भी उसकी सखियाँ-सहेलियाँ ब्राह्मणी ही हैं। इसीलिए, इन सब बातोंका ध्यान करके, उसका सारा शरीर घृणा और लज्जासे काँप उठता है। मलेरिया और हैजेसे पीड़ित बंगालमें स्त्रियोंको विधवा होते देर नहीं लगती। उसकी बाल्यावस्थाकी सखियोंमेंसे अनेक उसीके समान हाथोंकी चूड़ियाँ तोड़कर और माँगका सिन्दूर मिटाकर फिर अपने जन्म-स्थानमें लौट आई हैं। उनमेंसे कोई उसकी मकर-गंगाजल है और कोई महाप्रसाद। ×

छीः! छीः! यदि मैं अपने भाईकी बात मान लूँ, तो भला इस गाँवमें इस जनममें कभी अपना यह काला मुँह दिखला सकूँगी!

कुंजने कहा—बहन, तुम यह बात मान लो। सच पूछो तो वृन्दावन ही तुम्हारे असल पति हैं।

कुसुमने बिगड़कर उत्तर दिया—भाई, मैं असल-नकल नहीं जानती। केवल यही जानती हूँ कि मैं विधवा हूँ। मुझे भी क्या तुमने कुत्ता-बिल्ली समझ रखा

× बंगालमें स्त्रियाँ अपनी सखियोंका एक खास नाम रख लेती हैं और उन्हें उसी नामसे पुकारती हैं। गाढ़ी मित्रतामें ही यह नामकरण होता है।

है कि जो इच्छा होगी वही कर गुजरूँगी ! उधर ब्याह और इधर कण्ठी-बदली ! अब फिर ब्याह हो और फिर कण्ठी-बदली। जाओ, अब मेरे सामने ऐसी बातें न करना। बाइलवाले मेरे कोई नहीं हैं, मेरे स्वामी मर चुके हैं और मैं विधवा हूँ।

बेचारा कुंज इसके आगे और कुछ भी न कह सका। अपनी इस शिक्षिता तेजस्विनी बहनके आगे वह सिटपिटा जाता है। फिर भी वह सोचता है और एक तरहसे। वह बहुत गरीब है। उसके पास यही दो झोपड़ियाँ और उनसे सटी हुई आम और कटहलकी एक छोटी-सी बारीके सिवा और कुछ भी नहीं है, इसलिए, इतने नगद रुपए और इतनी धोतियाँ-दुपट्टे ये सब उसके लिए कोई मामूली बात नहीं। यदि इस प्रलोभनको छोड़ दिया जाय, तो भी, वह अपने स्नेहकी एक मात्र सामग्री अपनी बहनको किसी अच्छी जगह बैठाकर उसे सुखी देखकर आप भी सुखी होना चाहता है।

उन लोगोंके समाजमें कण्ठी बदलनेकी चाल है, इसीलिए उसकी माँ वह संस्कार करा गई थी। पर उसकी समझमें यह बात नहीं आती कि जब माँ मर गई है और कुसुमका स्वामी वृन्दावन उसे फिर अपने यहाँ रखनेके लिए इतना मना रहा है, तब कुसुम क्यों ऐसे अच्छे सुयोगको हाथसे छोड़ रही है ? क्यों उसकी ओर कोई ध्यान नहीं देती है ? सिर्फ समाजके फौजदारों और छड़ीदारोंकी सम्मति लेकर थोड़ा-सा मालसा-भोग* ही तो देना है ! विवाहका सारा व्यय तो वृन्दावन देंगे ही और इसके बाद वह सब दुःखों और कष्टोंसे छूटकर आनन्दसे रानी बनकर रहेगी। कुसुम भी कैसी मूर्ख है ! आहा, यदि वह स्वयं कुसुम होता !—बस, कुंज नित्य इसी प्रकारकी बातें सोचा करता है।

कुंज फेरीका काम करता है। एक बड़े दौरेमें सूतके नाड़े, माला, कँघी, सिन्दूर, तेलका मसाला, बच्चोंके खेलनेकी छोटी-बड़ी पुतलियाँ, आदि अनेक प्रकारकी चीजें सिरपर रखकर नित्य दो-चार गाँवोंमें फेरी लगाया करता है। दिन-भर चीजें बेचकर जो पैसे पाता है, सब सन्ध्या समय लाकर अपनी बहनके हाथोंमें दे देता है। वह न तो यह बात समझ ही सकता था और न समझनेकी चेष्टा ही करता था, कि कुसुम किस प्रकार मूल धन बनाये रखकर गृहस्थीका काम मजेसे चला लेती है।

---

* मालसा अर्थात् मिट्टीके कुँडेमें दही चिउड़ा आदि भरकर पहले भगवानको अर्पित करना और फिर वही सबको बाँट देना।

आज सबेरे ही वह घूमता-फिरता बाइल गाँवमें जा पहुँचा। रास्तेमें वृन्दावनके साथ उसकी भेंट हुई। वे कहीं बाहर कामसे जा रहे थे, पर, कुँजको देखकर लौट पड़े। वह अपने स्वजाति और रिश्तेदारको बड़े आदरसे अपने घर ले आये। उसे हाथ-पैर धोनेके लिए जल दिया और तमाखू चढ़ाकर उसकी खातिर की। दोपहरके समय उनकी माँने अनेक प्रकारके व्यंजन बनाकर कुंजको भर-पेट भोजन कराया और इतनी धूपमें उसे वहाँसे किसी प्रकार जाने न दिया।

सन्ध्याके बाद कुंज लौटकर घर आया और हाथ-पैर धोकर कुछ चना-चबेना खाने लगा। उस समय उसने अपनी बहनको दिन-भरकी सब बातें कह सुनाईं और अन्तमें यह भी कहा कि वे एक अच्छे गृहस्थ हैं। बाग बगीचा, तालाब, खेती-बारी किसी बातकी कमी नहीं है। उनके घरमें लक्ष्मी तो मानो फटी पड़ती है!

कुसुम सब बातें चुपचाप सुनती रही। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

कुंजने इसे एक अच्छा लक्षण समझा और तब उसने बहुत विस्तारके साथ बतलाया कि वृन्दावनकी माँने कैसी अच्छी अच्छी चीजें बनाईं और कैसे आदर-सत्कारसे भोजन कराया; और खिला-पिला चुकनेके बाद भी क्या वे मुझे छोड़ती थीं! बोलीं, इतनी धूपमें जाओगे तो सिरमें दरद होने लगेगा और बीमार हो जाओगे।

कुसुमने अपने भाईके मुँहकी ओर देखकर कुछ मुस्कराते हुए कहा—तो आज दिन-भर तुम इन्हीं कामोंमें लगे रहे! बस, खूब पेट-भर भोजन किया और सोए!

कुंजने भी हँसते हुए उत्तर दिया—तो फिर तुम्हीं बताओ बहन, मैं और क्या करता? जब वह किसी तरह छोड़ती ही नहीं थीं, तब जबरदस्ती कैसे चला आता?

कुसुमने कहा—अच्छा, पर अब तुम उस गाँवमें मत जाया करो।

कुंजकी समझमें यह बात अच्छी तरह नहीं आई। उसने पूछा—न क्यों जाया करूँ?

कुसुमने कहा—वे तो जब रास्तेमें मिलेंगे तभी तुम्हें पकड़ ले जायँगे। वे

बड़े आदमी ठहरे। उनका तो कोई हरज नहीं होगा; पर, इस तरह हम लोगोंका काम कैसे चलेगा?

बहनकी इस बातसे कुंज बहुत दुखी हुआ।

कुसुमने भी यह बात समझ ली और हँसते हुए कहा—नहीं भइया, मैं यह बात नहीं कहती। भला दो-एक दिन जानेमें कौन-सा बड़ा नुकसान हुआ जाता है! पर, वे लोग ठहरे बड़े आदमी और हम हैं गरीब। हमें उनसे ज्यादा मेल-जोल बढ़ानेकी जरूरत ही क्या है?

कुंजने उत्तर दिया—लेकिन बहन, कुछ मैं स्वयं चलकर तो उनके घर जाता नहीं।

कुसुम—सो ठीक है। तुम स्वयं नहीं जाते पर यदि वे स्वयं बुलाकर भी ले जायँ, तो भी हमें जानेकी क्या जरूरत है?

कुंज—अगर यही बात है तो फिर तुम इन ब्राह्मणोंकी लड़कियोंसे क्यों इतना मेल-जोल रखती हो? ये सब भी तो बड़े आदमियोंकी लड़कियाँ हैं, फिर क्यों जाती हो?

अपने भाईके मनका भाव समझकर कुसुम हँसने लगी। उसने कहा—उन लोगोंके साथ तो मैं बचपनसे ही खेलती आ रही हूँ। और फिर न तो वे हमारी जातिकी हैं और न हमारे समाजकी। उनके यहाँ जानेमें हमारे लिए कोई लज्जाकी बात नहीं है। पर उनकी बात दूसरी है।

कुछ देर तक चुप रहनेके उपरान्त कुंजने कहा—नहीं, उनके यहाँ जानेमें भी कोई लज्जाकी बात नहीं है। उनपर लक्ष्मीकी कृपा जरूर है, उनके पास चार पैसे भी हैं, पर उन लोगोंमें नामके लिए भी अहंकार या अभिमान नहीं है। सभी मानो मिट्टीके पुतले हैं। वृन्दावनकी माँने मेरे दोनों हाथ पकड़कर जिस तरहसे...

उसकी बात अभी पूरी भी न होने पाई थी कि बीचमें ही कुसुम विरक्त और व्यस्त होकर बोल उठी—फिर वही सब पुरानी बातें निकलीं! हमारी माँपर उन लोगोंने इतना बड़ा कलंक लगाया था, जान पड़ता है, भइया सब भूल गये?

कुंजने प्रतिवाद करते हुए कहा—उन्होंने किसीसे एक बात भी नहीं कही है। कुछ बदमाशोंने ईर्ष्या करके झूठमूठ बदनाम किया था।

कुसुमने कहा—तभी न उन लोगोंने हम लोगोंको घरसे निकालकर दूसरा ब्याह कर लिया था! क्यों?

कुंजने कुछ अप्रतिभ होकर कहा—यह ठीक है, पर इसमें बेचारे वृन्दावनका जरा भी दोष नहीं था। यदि था तो उनके बापका।

कुछ देर तक चुप रहनेके उपरान्त कुसुमने शान्त भावसे कहा—अच्छा भाई, चाहे किसीका दोष हो, पर जो होगी नहीं, होनेवाली नहीं, उस एक ही बातको बीस दफे दोहरानेकी क्या जरूरत है? मैं तुमसे बहस नहीं कर सकती; जाने दो।

कुंज पहले तो बहनकी इस बातका कोई जवाब नहीं दे सका; पर कुछ ठहरकर रुष्ट होकर बोला—तुम तो बहस नहीं कर सकतीं, पर मुझे तो सब तरफ देखना पड़ता है। जरा सोचो तो कि अगर आज मैं मर जाऊँ तो कलको तुम्हारी क्या दशा हो?

कुसुम विरक्त हो गई थी। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

कुंज फिर गम्भीर भावसे कहने लगा—अपने जितने परिचित और बड़े-बूढ़े हैं, उन सबसे मैं पूछ चुका हूँ। तुम्हारी सास नलडाँगेवाले बुड्ढे बाबाजी तकसे राय ले आई हैं। तुम जानती हो, उन सभी लोगोंने बहुत प्रसन्न होकर सम्मति दी है?

कुसुमके मुखका भाव सहसा कठिन हो गया; पर, वह संक्षेपमें इतना ही कहकर चुप हो गई—हाँ, जानती क्यों नहीं हूँ!

मेरे सम्बन्धमें, मेरी माँके सम्बन्धमें, मेरी कण्ठी बदलनेके सम्बन्धमें, समाजमें आलोचना हो रही है और अच्छे अच्छे लोगोंकी सम्मति ली जा रही है, इस संवादने कुसुमको अत्यन्त क्रुद्ध कर दिया, परन्तु, उसने अपना वह भाव दबाकर पूछा—क्यों भइया, इस समय तुम क्या खाओगे?

कुंजने बहनके मनका भाव समझ लिया और मुँह भारी बनाकर कहा—कुछ नहीं। मुझे भूख नहीं है।

कुसुमको और भी अधिक क्रोध हुआ; पर, वह उसे रोककर अपनी कोठरीमें चली गई।

कुंजने एक चिलम तमाखू चढ़ाकर वहीं बैठे बैठे पीया; और तब दीवारके सहारे हुक्का खड़ा करके पुकारा—कुसुम!

कुसुम अपनी कोठरीमें बैठी सिलाई कर रही थी। उसने वहीं बैठे बैठे पूछा—क्या है?

कुंज—मैं कहता हूँ, इतनी रात हो गई, कुछ खानेको नहीं बनाओगी ?

कुसुमने वहींसे उत्तर दिया—नहीं, आज कुछ न बनेगा।

कुंज—यही तो पूछता हूँ कि क्यों ?

कुसुमने बिगड़कर कहा—मुझसे सौ दफे नहीं कहा जाता।

बहनकी यह बात सुनकर कुंज धम धम करता हुआ उसकी कोठरीमें जा पहुँचा और चिल्लाकर बोला—देखो कुसुम, तुम मुझे बहुत मत जलाओ। अगर इसी तरह दिक किया करोगी, तो फिर जिधर मुँह उठेगा, मैं उधर ही चला जाऊँगा, यह कहे देता हूँ।

कुसुम—जाओ, अभी चले जाओ। मैं घरमें इस तरह डोम-चमारोंकी तरह चीखने-चिल्लाने न दूँगी। तुम्हारे जीमें आवे तो बाहर गलीमें जाकर जितना बने उतने जोरसे चिल्लाओ।

कुंजने बहुत अधिक क्रुद्ध होकर कहा—कम्बख्त, तू छोटी बहन होकर बड़े भाईको घरसे निकाल रही है ?

कुसुमने कहा—हाँ, निकाल रही हूँ। तुम बड़े हो, इसलिए क्या जो जीमें आवेगा, वही करोगे ?

बहनके मुँहकी ओर देखकर कुंज मन ही मन कुछ डर गया, उसने कुछ नरम होकर कहा—भला बता तो, मैंने कौन-सा काम किया है ?

कुसुम—तुम क्यों मुझसे बिना पूछे वहाँ चले गये और खा आये ?

कुंज—क्यों, इसमें हरज ही क्या हो गया ?

कुसुमने तीव्र भावसे कहा—इसमें हरज क्या हो गया ? बहुत बड़ा हरज हो गया। मैं आज मना कर देती हूँ, अब वहाँ कभी मत जाना।

कुंज बड़ा भाई था। लड़ाई-झगड़ेमें अपनी हार माननेमें उसे लज्जा हुई। उसने कहा—क्या तू मुझसे बड़ी है जो मुझपर हुकुम चलाती है ? मेरा जहाँ जी चाहेगा वहाँ जाऊँगा।

कुसुमने भी उसी प्रकार जोरसे कहा—नहीं, कभी नहीं जाने दूँगी। अगर मैंने सुन लिया तो फिर अच्छा न होगा भैया, मैं कहे देती हूँ !

अब कुंज सचमुच डर गया। तो भी उसने ऊपरसे साहस दिखलाते हुए कहा—जाऊँगा तो क्या करेगी ?

कुसुम सिलाईका काम फेंककर जल्दीसे उठ खड़ी हुई और चिल्लाकर बोली—

देखो, मैं कहे देती हूँ, मुझे गुस्सा मत चढ़ाओ। मेरे सामनेसे चले जाओ। कह रही हूँ, हट जाओ।

कुंज कुछ सिटपिटाकर कोठरीके बाहर निकल आया और दरवाजेकी आड़में खड़ा होकर धीरेसे बोला—तेरे डरके मारे हट जाऊँगा! यदि वहाँ जाऊँगा तो तू क्या कर लेगी?

कुसुमने कोई उत्तर नहीं दिया। दीपककी बत्ती कुछ और बढ़ाकर उसका प्रकाश तेज करके वह फिर सीने लगी। आड़में खड़े हुए कुंजका साहस फिर बढ़ गया और उसने अपना स्वर कुछ और तेज करके कहा—लोग एक मसल कहते हैं कि 'जाको जौन सुभाव, छुटै नहीं जीसों'। आप डाइनकी तरह चिल्लायगी सो कुछ नहीं; और मैं जरा जोरसे कुछ बोलूँगा तो...

यह कहकर कुंज रुक गया, पर, जब इस बातका अन्दरसे कोई प्रतिवाद नहीं हुआ, तब वह मन ही मन बहुत सन्तुष्ट हुआ। वह जाकर फिर अपना हुक्का उठा लाया और व्यर्थ ही दो फूँक खींचकर अपने गलेका सुर और एक परदा चढ़ाकर बोला—जब मैं बड़ा हूँ, जब मैं घरका मालिक हूँ, तब सब काम मेरे ही हुकुमसे होगा।

इतना कहकर कुंजने वह जली हुई चिलम उलट दी और फिरसे तमाखू चढ़ाते चढ़ाते खूब जोरसे कहा—मुझे किसीकी बात सुननेकी जरूरत नहीं है। मैं बीस दफे 'नहीं नहीं' नहीं सुनना चाहता। जब मैं घरका मालिक हूँ, जब घर-बार सब मेरा है, तब मैं जो कुछ कहूँगा, वही...

इतना कहते कहते उसने सहसा पीछे पैरोंकी आहट सुनी और जब मुँह फेरकर देखा, तब वह चुप रह गया।

कुसुम चुपचाप आकर तीव्र दृष्टिसे उसकी ओर देख रही थी। उसने कहा—यहाँ बैठे बैठे कलह करोगे, या जाओगे यहाँसे?

छोटी बहनकी उस तीक्ष्ण दृष्टिके सामने बड़े भाईका मालिक बननेका सारा हौसला जाता रहा। उसके मुँहसे जल्दी बात ही नहीं निकली। कुसुमने फिर उसी तरह कहा—भैया, बताओ, यहाँसे जाओगे या नहीं?

अब न तो वह कुंजनाथ रह गया था और न उसका वह गला। उसने भर्राये हुए स्वरसे कहा—कहा तो कि तमाखू चढ़ा लूँ, फिर जाता हूँ।

कुसुमने हाथ बढ़ाकर कहा—लाओ, मुझे दो।

इतना कहकर वह उसके हाथसे चिलम लेकर चली गई। फिर थोड़ी ही देरमें लौट आई और हुक्केपर चिलम रखकर देती हुई बोली—सुनारोंकी दूकानपर जाओगे न?

कुंजने सिर हिलाकर कहा—हाँ।

कुसुमने सहज भावसे कहा—अच्छा जाओ। पर देखो, बहुत रात न कर देना। मुझे रसोई बनानेमें देर नहीं लगेगी।

कुंजनाथ हाथमें हुक्का लिये हुए धीरे धीरे बाहर चला गया।

दूसरा परिच्छेद

उस दिन कुंजने अपनी बहनको वृन्दावनके घर-बारका जो कुछ परिचय दिया उसमें किसी प्रकारकी अत्युक्ति नहीं थी। सचमुच उनके घरमें लक्ष्मी उभड़ी पड़ती थी और उसके लिए उनके घरमें किसीको भी किसी प्रकारका अहंकार या अभिमान नहीं था।

उस गाँवमें कोई पाठशाला नहीं थी। वृन्दावनने बाल्यावस्थामें अपनी ही चेष्टासे थोड़ा-बहुत लिखना पढ़ना सीख लिया था और तभी अपने गाँवमें एक पाठशाला खोलनेका संकल्प किया था। पर उनके पिता गौरदास बड़े होशियार आदमी थे। यद्यपि वृन्दावन उनका एकलौता पुत्र था, तथापि उन्होंने ऐसे बाहियात कार्यमें अपने पुत्रको प्रश्रय नहीं दिया। पर उनकी मृत्युके उपरान्त वृन्दावनने अपने चण्डी-मण्डपमें एक ऐसी पाठशाला खोल दी जिसमें बालकोंसे कोई फीस नहीं ली जाती और इस प्रकार अपना वह पुराना संकल्प कार्यरूपमें परिणत किया।

उनके मुहल्लेमें एक पेन्शनयाफ्ता पुराने शिक्षक थे। उनको वृन्दावनने अँगरेजी सीखनेके लिए रख लिया। वे रातके समय आकर पढ़ा जाया करते थे इसलिए यह बात किसीपर खुली नहीं। गाँव-भरमें किसीको भी पता नहीं कि वैष्णव वृन्दावन अँगरेजी पढ़े हैं। आजसे पाँच बरस पहले, स्त्रीकी मृत्युके बाद, वे इसी लिखने-पढ़नेमें लगे रहते थे, प्रायः रातभर पढ़ा करते, सबेरे घरके काम-काज जमींदारी आदि देखते और दोपहरको अपनी स्थापित की हुई

पाठशालामें किसान-बालकोंको पढ़ाया करते। जब विधवा माता फिरसे विवाह करनेके लिए आग्रह करती तब वे अपने शिशु पुत्रको दिखलाकर कह दिया करते कि जिसके लिए ब्याह किया जाता है, वह तो हमारे पास है। तब फिर अब और ब्याह करनेकी क्या आवश्यकता है?

माँ बहुत कुछ रोती-झींकती, पर वे कुछ भी नहीं सुनते। इसी प्रकार दो बरस बीत गये।

इसके उपरान्त एक दिन वृन्दावनने सहसा कुंज वैष्णवके मकानके सामने कुसुमको देखा। कुसुम नदीसे स्नान करके कमरपर पानीकी कलसी रखे घर आ रही थी। उस समय उसने यौवनमें पैर ही रखा था। वृन्दावन मुग्ध नेत्रोंसे उसे देखते रह गये और जब कुसुम अपने घरमें चली गई, तब वे धीरे धीरे आगे बढ़ गये। इस गाँवके सभी घरोंको वे अच्छी तरह पहचानते थे, इसलिए, वे जान गये कि यह किशोरी कौन है।

एक सन्तान होनेपर माता-पुत्रमें जो सम्बन्ध होता है, वृन्दावन और उनकी मातामें भी वही सम्बन्ध था। उन्होंने घर वापस आकर बिना किसी संकोचके अपनी माँसे कुसुमकी बात कह दी। माँने कहा—अरे बेटा, भला ऐसा कहीं हो सकता है? उन लोगोंमें तो दोष है! वृन्दावनने जवाब दिया—वह हुआ करे माँ, फिर भी वह तुम्हारी बहू है। जब मुझे वहाँ ब्याहा था, तब यह बात क्यों नहीं सोची?

माँने कहा—वह सब तुम्हारे बाबूजी जानते थे। उन्होंने जो कुछ अच्छा समझा वह वे कर गये।

वृन्दावनने अभिमानपूर्वक कहा—अच्छा, तो फिर ऐसा ही सही माँ, मैं जैसा हूँ, वैसा ही रहूँगा। अब तुम मुझे ब्याहके लिए तंग मत करना।

इतना कहकर वृन्दावन बाहर चले गये।

इस बातको भी तीन बरस बीत गये। इस बीचमें वृन्दावनकी माताने कुसुमको अपने घर लानेकी अविश्राम चेष्टा की; पर, फल कुछ भी नहीं हुआ। कुसुम किसी प्रकार राजी ही नहीं की जा सकी। कुसुमके इस दृढ़ विरोधके दो बड़े कारण थे। एक तो यह कि अपने असमर्थ और अल्पबुद्धि भाईको अकेले छोड़कर और कहीं भी जाकर वह सुखी नहीं रह सकती और दूसरा कारण हम पहले ही बतला चुके हैं।

यदि वह किसी प्रकारका सामाजिक संस्कार किये बिना सहजमें अपने स्वामीके घर जाकर बस सकती होती, तो, शायद, उसका सारा शरीर और मन अपने भाईके अनुरोध और आग्रहके विरुद्ध इस प्रकार न खड़ा होता। पर वह सोचती कि अब फिर सब काम फिरसे करने होंगे, तरह तरहके वैष्णवोंके दल आकर खड़े होंगे, मेरी माँकी मिथ्या कलंककी चर्चा छिड़ेगी, मेरी अपनी बाल्यावस्थाकी बीती हुई घटनाओंकी बात होगी, और भी न जाने किन किन बातोंका जिक्र छिड़ेगा, हल्ला गुल्ला मचेगा, पास पड़ोसके लोग कुतूहलवश देखने आ जावेंगे। मेरी सखियाँ-सहेलियाँ कौतुक दृष्टिसे आ आकर इधर-उधरसे ताक-झाँक लगावेंगी और फिर अपने अपने घर जाकर हँसती हुई सीधी सादी भाषामें कहेंगीं कि 'डोम चमारोंकी तरह कुसुमका निकाह हो गया।' छीः! छीः! इन सब बातोंका ध्यान करके ही वह मारे लज्जाके गड़ जाती है। भले आदमियोंकी जिन सब लड़कियोंके साथ बैठकर उसने लिखना-पढ़ना सीखा है, जिनके साथ साथ वह इतनी सयानी हुई है, दरिद्र होनेपर भी वह अपने मनमें इस बातको स्थान नहीं दे सकी कि आचार-विचार आदिमें मैं उन लोगोंसे किसी तरह छोटी हूँ।

कल सन्ध्याको अपने भाईके साथ कुसुमकी कहा-सुनी हुई थी। उसने नाराज होकर काठके सन्दूककी चाबी अपने भाईके पैरोंके पास फेंक दी थी और क्रोधपूर्वक कहा था कि अब चाहे कुछ हो जाय, मैं इस संसारमें ही नहीं रहूँगी। आज प्रातः काल जब वह नदीसे स्नान करके लौटी, तब उसने देखा कि भाई घरमें नहीं है, कहीं चला गया है। उसका फेरीवाला दौरा भी घरमें नहीं है। कुसुमने मन ही मन कुछ हँसते हुए कहा—भइया कल रातको झिड़कियाँ खाकर आज सबेरे ही भाग खड़े हुए हैं। इसमें सन्देह नहीं कि अपनी कलकी भूल सुधारनेके लिए ही वह आज चल दिया है; पर, कुसुमने जो अनुमान किया सो नहीं, वह भूल और ही थी और थोड़ी देर बाद ही वह प्रकट हो गई।

कुसुमको नित्य तड़के उठकर घरके सब काम करने पड़ते। सारा घर और आँगन गोबरसे लीपना पड़ता, आँगन खूब अच्छी तरहसे बुहारकर साफ करना पड़ता, नदीसे स्नान करके जल भर लाना पड़ता और तब अपने भाईके लिए रसोई बनानी पड़ती। जब कुंज भोजन करके फेरीके लिए बाहर चला जाता, तब वह पूजा-पाठ करने बैठती। जिस दिन कुंज सबेरे बिना भोजन किये चला जाता

उस दिन वह दोपहर तक ही लौट आया करता। कुसुमने सोचा कि अभी भाईके आनेमें बहुत देर है, इसलिए, वह फूल चुनने लग गई। आँगनमें एक ओर फूलोंके कुछ पौधे थे। चमेली और जूहीके भी कुछ पेड़ थे। उन्हींसे वह अपनी नित्यकी पूजाके लिए फूल चुन लिया करती। फूल तोड़कर तथा और सब आयोजन करके ज्यों ही वह पूजापर बैठी, त्यों ही उसके द्वारपर कई बैलगाड़ियाँ आ खड़ी हुई और उसके बाद ही एक प्रौढ़ा स्त्री धक्केसे दरवाजा खोलती हुई अन्दर आ गई। थोड़ी देर तक दोनों ही एक दूसरीको देखती रहीं। कुसुमने इसे पहले कभी नहीं देखा था; पर नाकपर तिलक और गलेमें माला देखकर समझ लिया कि यह हो कोई, पर मेरी जातिकी ही है।

प्रौढ़ाने कुसुमके पास पहुँचकर हँसते हुए कहा—बेटी, तुम तो मुझे न पहचानती होगी, पर तुम्हारे भाई पहचानते हैं। कुंजनाथ कहाँ हैं?

कुसुमने उत्तर दिया—वह तो आज सबेरेसे ही कहीं बाहर चले गये हैं। जान पड़ता है, देरसे आवेंगे।

आगन्तुक स्त्रीने विस्मयपूर्वक कहा—हैं! देरसे आवेंगे! अभी कल तो वे अपने बहनोईको तथा और भी चार-पाँच लड़कोंको,—वे सब भी हमारे आपसके ही हैं, रिश्तेमें भानजे होते हैं,—खानेका न्योता दे आये हैं। इसलिए मैंने भी आज सबेरे ही वृन्दावनसे कह दिया कि बेटा, गाड़ीवानसे कह दो कि बैलगाड़ी जोतकर ले आवे। मैं भी चलकर जरा बहूको देख आऊँ और आशीर्वाद दे आऊँ।

यह सुनकर कुसुम स्तम्भित हो गई। पर तुरन्त ही अपने आपको सँभालकर, माथेका आँचल थोड़ा और आगे खींचकर, जल्दीसे प्रणाम करके उठ खड़ी हुई। कोठरीमेंसे आसन लाकर बिछा दिया और आप चुपचाप खड़ी हो गई। कुसुमने समझ लिया कि ये सास हैं। वे आसनपर बैठकर हँसती हुई बोलीं—कल खा पी चुकनेके बाद वृन्दावनने हँसते हुए कहा कि मैं ऐसा अभागा हूँ कि कुंज भइया हैं तो मेरे बड़े भाईके समान, पर इन्होंने आज तक कभी मुझसे यह भी न कहा कि तुम कल आकर हमारे यहाँ एक लुटिया जल पी आना। इधर कई दिनोंसे मेरी ननदके लड़के भी मेरे ही यहाँ हैं। इसपर कुंजनाथने हँसते हुए उन सबको भी निमन्त्रण दे दिया, इसलिए वे सब भी आ गये हैं।

कुसुम सिर झुकाये हुए चुपचाप खड़ी रही।

वृन्दावनकी माँ निम्न श्रेणीकी साधारण स्त्रियोंके समान नहीं थी। वह बहुत समझदार थी। कुसुमका भाव देखकर सहसा उसे सन्देह हुआ कि जरूर कोई न कोई गोलमाल हुआ है। उसने सन्दिग्ध भावसे पूछा—क्यों बहू, कुंजनाथ क्या तुमसे कुछ भी नहीं कह गये?

कुसुमने घूँघटके अन्दरसे ही सिर हिलाकर सूचित किया, नहीं।

पर वृन्दावनकी माँ यह नहीं समझ सकीं, बल्कि उन्होंने सोचा कि वह कह कर ही गया है। इसीलिए सन्तुष्ट होकर कहा—तब तो ठीक है। इसके उपरान्त कुंजनाथके उद्देश्यसे स्नेहपूर्वक कहा—डर था कि कहीं मेरा पागल बेटा सब बातें भूल न गया हो! अब तो मैं समझती हूँ कि वह कुछ सौदा सुलुफ खरीदने गया है, थोड़ी देरमें ही आ जायगा। लो, ये सब भी आ गये।

वृन्दावनने एक बार बाहरसे ही पुकारा—कुंज भइया! और इसके बाद वे चट आँगनमें आ खड़े हुए। उनके साथ और भी तीन लड़के थे। यही उनके फुफेरे भाई थे। उनकी माँने कहा—कुंजनाथ अभी कहीं बाहर गया है। और बहू, जरा अन्दर शतरंजी बिछा दो, ये लोग बैठ जायँ।

कुसुमने कुछ व्यस्त होकर अपने भाईकी कोठरीमें एक कम्बल बिछा दिया और हाथमें चिलम लेकर तमाखू चढ़ानेके लिए वह रसोईघरमें चली गई।

यह देखकर वृन्दावनने हँसते हुए कहा—रहने दो, हम लोग तमाखू नहीं पीते।

कुसुम हाथसे चिलम रखकर रसोईघरमें एक खम्भेके सहारे चुपचाप खड़ी हो गई। उसका विवेकहीन नासमझ भाई कैसी विपत्तिमें डालकर खिसक गया! क्रोध, अभिमान, लज्जा और अवश्यम्भावी अपमानकी आशंकासे उसकी आँखोंमें जल भर आया। कल ही उसके भण्डारकी सब चीजें खतम हुई हैं। आज सबेरे स्नान करने जानेके पहले ही वह सोचती गई थी कि लौटकर जाऊँगी तो भइयाको हाट भेजूँगी। पर लौटकर देखा तो भाईका कहीं पता ही न था। जब कुंज कोई दोष या अपराध कर बैठता है, तब वह अपनी छोटी बहनसे इतना अधिक डरता है, जितना कोई नौकर अपने दुष्ट मालिकसे भी न डरता होगा। जिन बड़े आदमियोंके घर केवल भोजन कर आनेके ही अपराधमें कुसुमने इतना अधिक क्रोध प्रकट किया था, तावमें आकर कुंज उन्हीं बड़े आदमियोंको दलबलसहित निमन्त्रण दे आया है! यह अपराध उस पहले

अपराधसे भी अधिक भारी था; इसलिए अपनी बहनसे कुछ कहनेका उसे साहस ही नहीं हुआ। और इसीलिए वह सबेरे उठकर भाग गया। और अब वह, चाहे जो हो, रातसे पहले घर न लौटेगा। यह निश्चित रूपसे समझ लेनेके कारण कुसुम आशंकासे विकल हो गई। और सबसे बढ़कर विपत्ति यह हुई कि जिस सन्दूकमें उसके इकट्ठे किये हुए थोड़ेसे रुपये थे, उसकी चाबी भी उसके पास नहीं थी और न ऊपर हाथमें ही एक पैसा था।

कुसुम निरुपाय होकर प्रायः पाँच मिनट तक खड़ी रही। इसके बाद सहसा उसका सारा क्रोध वृन्दावनपर बरस पड़ा। वास्तवमें सारा दोष इन्हींका है। क्यों ये मेरे नासमझ भाईको रास्तेमेंसे पकड़कर अपने घर ले गये और क्यों उन्होंने यह सब परिहास किया? और ये होते कौन हैं जो भइया इन्हें अपने घर बुलाकर भोजन करावेंगे?

इधर तीन बरससे कितने ही बहानोंसे, कितनी ही तरकीबोंसे वृन्दावन इधर आते-जाते रहे हैं, कितने ही उपायोंसे भाई-बहनके मनकी थाह लेनेकी चेष्टा करते रहे हैं, कई बार सबेरे-सन्ध्या बिना प्रयोजन भी मकानके सामनेसे निकल गये हैं। हम लोग किस दुरवस्थामें हैं, यह वे अच्छी तरह जानते हैं और जानते हैं इसीलिए इन्होंने सब कुछ जान बूझकर हमें नीचा दिखानेके लिए यह कौशल रचा है।

काठकी मूरतके समान खड़ी हुई कुसुम अपनी आँखोंसे आँसू पोंछने लगी। वह बड़ी अभिमानिनी है, पर इस समय वह अकेली है, क्या करे?

वृन्दावनकी माँ तो उठकर अन्दर कोठरीमें जाकर लड़कोंके साथ बातचीत करने लगी; पर, उसके लड़केके नेत्र कोठरीके बाहर इधर उधर भटक रहे थे। एकाएक वे रसोईघरमें खड़ी हुई कुसुमपर जाकर ठहर गये। जब आँखें चार हुई, तब वृन्दावनने समझा कि शायद वह संकेतसे अपने पास बुला रही है। पल-भरके लिए उनका सारा हृत्पिंड उन्मत्तकी भाँति उछलकर फिर स्थिर हो गया। उन्होंने सोचा कि यह असम्भव है, यह मेरी आँखोंकी भूल है।

वृन्दावन सोचने लगे कि संयोगवश कभी सामना हो जानेपर जो घूँघट खींचकर जल्दीसे सामनेसे चली जाती है, मेरे प्रति जिसकी निदारुण अरुचिकी बात अनेक बार कुंजनाथ सुना चुका है, वह क्या मुझे कभी अपनी इच्छासे अपने पास बुलावेगी? यह कभी हो ही नहीं सकता। वृन्दावनने अपनी दृष्टि दूसरी

ओर फेर ली। पर वह वहाँ भी ठहर न सकी। जिस जगह आँखें चार हुई थीं, फिर उसी ओर चली गई। ठीक बात है, कुसुम उन्हींकी ओर देख रही है। उसने उन्हें हाथके संकेतसे बुलाया।

लड़खड़ाते हुए पैरोंसे वृन्दावनने रसोईघरके दरवाजेके पास आकर कोमल स्वरसे पूछा—मुझे बुलाया है ?

कुसुमने भी उसी प्रकार कोमल स्वरसे कहा—हाँ।

वृन्दावनने और भी खिसककर पूछा—क्यों ?

कुसुमने थोड़ी देर तक चुप रहकर भारी गलेसे कहा—मैं तुमसे यह पूछती हूँ कि हमारे जैसे दीन दुखियोंको इस प्रकार सतानेमें तुम्हारे जैसे बड़े आदमियोंकी कौन-सी बहादुरी है ?

हैं ! सहसा यह कैसा अभियोग ! वृन्दावन चुपचाप खड़े रहे।

कुसुमने और अधिक कठोर भावसे कहा—क्या तुम जानते नहीं हो कि हम लोग किस प्रकार अपने दिन बिताते हैं ! तब क्यों भइयासे ऐसी हँसी की ! क्यों इतने आदमियोंको लेकर खानेके लिए आये ?

पहले तो वृन्दावनकी समझमें ही न आया कि इस उलहनेका क्या उत्तर दूँ; परन्तु, स्वभावतः वे धीर प्रकृतिके आदमी हैं। किसी भी कारणसे अधिक विचलित नहीं होते। थोड़ी देरतक चुप रहनेके उपरान्त उन्होंने अपने आपको सँभाला और अन्तमें बहुत ही सहज शान्त भावसे पूछा—कुँज भइया कहाँ हैं ?

कुसुमने कहा—मालूम नहीं। मुझसे कुछ कहे-सुने बिना ही सबेरे उठकर कहीं चले गये हैं।

वृन्दावनने थोड़ी देर तक चुप रहनेके उपरान्त कहा—अच्छा, वे गये तो जाने दो। मैं तो हूँ। क्या घरमें खाने-पीनेको कुछ भी नहीं है ?

"नहीं, कुछ भी नहीं है। सब चीजें खतम हो गई हैं; और एक पैसा भी इस समय मेरे हाथमें नहीं है।"

वृन्दावनने कहा—इस गाँवमें तुम्हारी तरह मुझे भी सब लोग जानते हैं। मैं सब चीजें खरीदकर मोदीके हाथ भिजवा देता हूँ। मुझे एक अँगोछा दे दो। मैं अभी स्नान करके आता हूँ। यदि माँ पूछें, तो कह देना कि नहाने गये हैं। अब तुम यहाँ खड़ी मत रहो। जाओ।

कुसुमने अन्दर कोठरीमेंसे अँगोछा लाकर दे दिया।

वह अँगोछा माथेपर लपेटते हुए वृन्दावनने हँसकर कहा—तुम कुंज भइयाकी बहन हो, इसीलिए वे तुम्हें इस प्रकार छोड़कर भाग सके हैं। यदि और कोई होतीं, तो शायद, इस प्रकार न छोड़ सकते।

कुसुमने बहुत ही धीरेसे उत्तर दिया—सब लोग तो इस तरह नहीं छोड़ सकेत, पर कोई कोई खूब मजेमें छोड़ सकते हैं!

इतना कहकर कुसुमने आड़मेंसे ही वृन्दावनकी ओर देखा कि इस बातने वास्तवमें उनके हृदयपर किस प्रकार आघात किया है।

वृन्दावनने वहाँसे चलनेके लिए पैर उठाया ही था कि फिर रुककर धीरेसे कहा—तुम्हारा यह भ्रम शायद किसी दिन भंग हो जायगा। बचपनमें अपनी माँके किसी दोषके लिए जिस प्रकार तुम जिम्मेवार नहीं हो, उसी प्रकार अपने पिताकी भूलके लिए मैं भी जिम्मेवार नहीं हूँ। पर जाने दो, इन सब झगड़ोंके लिए अभी समय नहीं है। जाओ और रसोईका इन्तजाम करो।

कुसुमने कहा—भला बताओ, मैं रसोईका क्या इन्तजाम करूँ? यदि अपना सिर काटकर पकाऊँ और उससे तुम लोगोंका पेट भर सके, तो कहो, मैं वह भी करनेके लिए तैयार हूँ।

तबतक वृन्दावन दो-एक कदम चलकर फिर लौट आये। इस बातका कोई उत्तर न देकर अपना स्वर और भी धीमा करके बोले—तुम्हारी जो इच्छा हो मुझसे कह सकती हो। मुझे तो सहना ही पड़ेगा। पर इस क्रोधकी हालतमें अपनी साससे कोई कटु बात न कह बैठना। उन्हें जरा-सी बात भी बहुत लगती है।

कुसुमने क्रोधसे भरे हुए गलेसे फिस फिस करते हुए कहा—मैं कोई जानवर नहीं हूँ, मुझमें भी थोड़ी बहुत बुद्धि है।

वृन्दा०—यह तो मैं जानता हूँ, पर साथ ही यह भी जानता हूँ कि बुद्धिकी अपेक्षा क्रोध कहीं अधिक है। हाँ कुसुम, एक बात और है। माँ स्नान करके ही चली आई हैं। अभी तक उन्होंने पूजन आदि कुछ भी नहीं किया है। उनसे पूछ लो, और सबसे पहले उनका प्रबन्ध कर दो। मैं जाता हूँ।

कुसुम—जाओ, पर देखो, कहीं गप लड़ाने न बैठ जाना।

वृन्दावनने कुछ हँसते हुए कहा—नहीं। किन्तु, जी तो चाहता है कि देर

करके तुमसे कुछ झिड़कियाँ खाऊँ। यदि तुम और किसी दिनके लिए आशा दिलाओ, तो यह हो सकता है कि आज जल्दी ही लौट आऊँ।

"सो तब देखा जायगा।"

इतना कहकर कुसुम रसोईघरके भीतर जा रही थी कि सहसा वृन्दावनने एक ठण्ढी साँस लेते हुए कोमल स्वरसे कहा—आश्चर्य है! मुझे एक बार भी यह नहीं जान पड़ा कि आज तुम पहले पहल ही बातें कर रही हो। मानो तुम युग-युगान्तरसे इसी प्रकार मुझपर शासन करती आ रही हो। ईश्वरके हाथका बाँधा हुआ यह कैसा विलक्षण बन्धन है, कुसुम!

कुसुम खड़ी खड़ी सुनती रही। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

जब वृन्दावन चले गये, तब उनकी यह पिछली बात स्मरण करके सहसा कुसुमका सारा शरीर काँप उठा। वह रसोईघरमें जाकर स्थिर होकर बैठ गई। अपनी शिक्षाके अभिमानसे आजतक जिसे वह एक अशिक्षित खेतिहर समझकर किसी गिनतीमें ही नहीं लाती थी, आजकी बातचीत और व्यवहारके बाद उसके सम्बन्धमें एक नये आनन्द और नई चाहसे वह उत्सुक हो उठी।

तीसरा परिच्छेद

उस दिन संध्यासे पहले घर लौटनेके समय वृन्दावनकी माँने कुसुमको अपने पास बुलाकर अश्रु-गद्गद कण्ठसे कहा—बहू, मैं तो कह ही नहीं सकती कि आजका सारा दिन कैसे आनन्दसे बीता! बेटी, तुम सदा सुखी रहो। इतना कहकर उन्होंने अपने आँचलमेंसे एक जोड़ा सोनेके कड़े निकालकर अपने हाथसे कुसुमके हाथोंमें पहना दिये।

वृन्दावनकी माँने यह जान लिया था कि कुसुमने आजका सारा आयोजन वृन्दावनकी गुप्त सहायतासे ही निर्वाह किया है और विशेषतः इसी कारण उसका हृदय आशा और आनन्दसे परिपूर्ण हो गया था। कुसुमने गलेमें आँचल डालकर प्रणाम किया और उनके पैरोंकी धूल अपने माथेपर चढ़ाकर वह चुपचाप खड़ी हो गई। सास और बहूमें, इस सम्बन्धमें, और कोई बात नहीं हुई। गाड़ीपर बैठकर उन्होंने बहूसे कहा—बेटी, कुंजनाथ तो सारा दिन

दिखाई ही नहीं दिया। न जाने वह पागल सारे दिन कहाँ भागा रहा। कल उसे एक बार मेरे पास भेज देना।

कुसुमने सिर हिलाकर प्रकट किया कि अच्छा।

वृन्दावनके पितामहने अपने घरमें गौरांग-महाप्रभुकी मूर्ति स्थापित की थी। जिस कमरेमें उक्त मूर्ति थी उसमें बैठकर वृन्दावनकी माँ नित्य बहुत रात तक जप किया करती थी। आज भी कर रही थी। उसका पोता गोदमें सिर रखकर सो गया था। ये लोग जिस जगह बैठे हुए थे वहाँ दीपककी छाया पड़ रही थी; इसीलिए, जब वृन्दावन उस कमरेमें आये तब वे इन लोगोंको न देख सके। वे वेदीके पास पहुँचकर घुटने टेककर बैठ गये। थोड़ी देर तक मन ही मन प्रार्थना करके उन्होंने जमीनपर झुककर प्रणाम किया और जब वे उठकर खड़े हुए तब उनकी दृष्टि अपनी मातापर गई। वे मन ही मन लज्जित होकर हँस पड़े और उन्होंने पूछा—माँ, तुम इतने अँधेरेमें क्यों बैठी हो?

माँने स्नेहपूर्वक कहा—यों ही बैठी हूँ, बेटा। तू जरा मेरे पास बैठ। वृन्दावन पास जाकर बैठ गये।

वृन्दावनके लज्जित होनेका एक कारण था। उस समय रात एक पहरसे अधिक बीत चुकी थी। ऐसे बेवक्त वे पहले कभी मूर्तिके दर्शन करनेके लिए नहीं आते थे। जिस आशातीत सौभाग्यके कारण मारे आनन्दके उनका हृदय परिपूर्ण हो रहा था और आजका दिन उन्हें सार्थक जान पड़ा था, आज आये थे उसीको नम्र हृदयसे, गुप्त रूपसे ठाकुरजीके निकट निवेदन करनेके लिए। पर कहीं माँ अनुमानसे मेरे मनकी बात न जान ले, इस लज्जासे वे संकुचित हो पड़े थे।

थोड़ी देर बाद माँने अपने सोए हुए पोतेके माथेपर हाथ फेरते हुए उच्छ्वसित स्नेहपूर्ण स्वरसे कहा—बिना माँके अपने इस एक-मात्र वंशधरको छोड़कर कहीं जानेके लिए मैं पैर भी नहीं उठा सकती। पर आज मुझे ऐसा जान पड़ता है वृन्दावन, कि मानो मेरे सिरपरसे किसीने भारी बोझा उतार दिया है। बेटा, अब तो उसे जल्दी अपने घर ले जाओ जिससे मैं बहूके हाथ सब कुछ सौंपकर जरा छुट्टी पाऊँ और कुछ दिन काशी और वृन्दावन घूम आऊँ।

आज वृन्दावनके हृदयमें भी आशा और विश्वासका वैसा ही स्रोत प्रवाहित हो रहा था। तो भी उन्होंने लजाते हुए कहा—माँ, वह आवेगी क्यों?

माँने दृढ़ता और निश्चय प्रकट करते हुए कहा—क्यों, आवेगी क्यों नहीं?

वह आवेगी तभी तो मुझे छुट्टी मिलेगी। वृन्दावन, यह मेरी भूल थी जो मैं इतने दिन वहाँ स्वयं नहीं गई। आते समय मैंने अपने हाथके सोनेके कड़े उसे पहनाकर आशीर्वाद दिया और वह मेरे पैरोंकी धूल माथेपर चढ़ाकर चुपचाप खड़ी हो गई। तभी मैंने समझ लिया कि अब मेरे सिरसे सारा भार उतर गया। तुम देख लेना, अब पहले पहल जो अच्छा दिन आवेगा, उसी दिन मैं घरकी लक्ष्मी घर ले आऊँगी।

वृन्दावनने कुछ देरतक चुप रहनेके उपरान्त पूछा—पर वह आकर तुम्हारे इस वंशधर लालको देखे सुनेगी तो?

माँने तुरन्त उत्तर दिया—देखे सुनेगी क्यों नहीं? वह डर मुझे नहीं है।

"क्यों, डर क्यों नहीं है?"

"बेटा, मैं सोना पहचानती हूँ। अभी यह तो नहीं कह सकती कि वह बिलकुल खरा सोना है, पर यह बात निश्चयपूर्वक कह सकती हूँ कि पीतल नहीं है, मुलम्मा नहीं है। यदि यह बात न होती तो मैं उसे अपनी सोने-सी गृहस्थीमें लानेका नाम भी न लेती। हाँ वृन्दावन, क्या बहू तुमसे हमेशा बातें किया करती है?

वृन्दा०—नहीं माँ, कभी नहीं। पर जान पड़ता है कि आज संकटमें पड़कर ही—। यह कहकर वृन्दावन कुछ हँसे और चुप हो गये।

माँने थोड़ी देर तक चुप रहनेके उपरान्त कुछ गम्भीर भावसे कहा—बेटा, यह ठीक है, इसमें उसका कोई दोष नहीं। सभी ऐसा करते हैं। जब मनुष्य विपत्तिमें पड़ता है, तब जो वास्तवमें अपना है उसीके पास दौड़कर जाता है। मैं तो औरत हूँ, फिर भी, उसने अपने संकटकी बात मुझसे नहीं कही, तुम्हींसे कही।

वृन्दावन चुपचाप सुनते रहे।

माँने फिर कहा—अभी मुझे एक और काम करना है, और वह यह कि कुंजनाथका भी ब्याह हो जाय।

इतना कहकर वे आप ही आप हँस पड़ीं। अन्तमें बोलीं—वह भी खूब है, महल्ले-भरको न्योता देकर आप घर छोड़कर भाग गया,—पीछे जो होना हो सो हो।

वृन्दावन चुपचाप हँसने लगे।

माँने कहा—सुना है, बहूसे वह बहुत डरता है। बड़ा भाई है, फिर भी

छोटे भाईकी तरह रहता है। किसी किसीकी राशि ही भारी होती है वृन्दावन। उससे बिना डरे काम ही नहीं चलता, चाहे आदमी उससे उमरमें बड़ा ही क्यों न हो। हमारी बहू भी उसी धातुकी बनी है—बहुत ही शान्त फिर भी सख्त। मैं भी ऐसी ही चाहती हूँ कि उसपर कोई भार दे दिया जाय तो वह उसे उठा सके। तभी न मैं गृहस्थी छोड़कर निश्चिन्त हो कहीं बाहर जा सकूँगी?

थोड़ी देर तक चुप रहनेके उपरान्त वे कह उठीं—मैं तो कह ही नहीं सकती कि एक ही दिनकी बातचीत और देखने-सुननेसे मैं उसे कितना अधिक चाहने लगी हूँ। सन्ध्यासे बराबर यही सोच रही हूँ उसे कब अपने घर लाऊँ, कब उसे फिर देखूँ।

वृन्दावन मन ही मन लज्जित होने लगे। वे इस बातको दबानेके अभिप्रायसे बोले—हाँ माँ, कुंजनाथकी क्या बात कह रही थीं?

माँने कहा—हाँ, वह बात तो रह ही गई। बहूको घर लानेसे पहले कुंजनाथकी गृहस्थी बसा देना भी हमारा कर्तव्य है। तुम गोपालसे कह दो कि वह कल खूब सबेरे गाड़ी ले आवे। मैं जरा नलडाँगे जाऊँगी। वहाँके गोकुल बैरागीकी लड़की मुझे बहुत पसन्द है। देखने-सुननेमें भी बुरी नहीं है। इसके सिवा...।

बात समाप्त होनेके पहले ही वृन्दावनने हँसकर कहा—इसके सिवा वह घरमें अकेली ही लड़की है! क्यों माँ, वह बैरागी भी तो कुछ धन-सम्पत्ति छोड़कर मरा है?

माँ भी हँस पड़ीं। बोलीं—हाँ बेटा, तुम्हारा कहना सच है। कुंजके लिए उसकी सबसे अधिक जरूरत है। खाली ब्याह करनेसे तो काम चलेगा नहीं। खाने-पहननेको भी तो कुछ होना चाहिए। और फिर वह लड़की भी बुरी नहीं है। जरा काली है, फिर भी चेहरा अच्छा है। अब देखो, कल सबेरे वहाँ जानेपर क्या होता है!

वृन्दावनने सिर झुकाकर कहा—अच्छा तो माँ, मैं भी मुहूर्त दिखलवा लूँ। और यह तो निश्चय है कि जब तुम स्वयं ही जा रही हो, तब खाली न लौटोगी।

चौथा परिच्छेद

कुञ्जनाथके ब्याहकी, लेन-देनकी और खिलाने-पिलाने तककी सभी बातें बिलकुल ठीक करके वृन्दावनकी माँ तीसरे पहर घर लौट आईं।

उस समय चण्डीमण्डपके सामने सब लड़के एक पंक्तिमें खड़े होकर पहाड़ा पढ़ रहे थे और वृन्दावन एक ओर खड़े खड़े सुन रहे थे। ज्यों ही बैलगाड़ी सामने आकर रुकी, त्यों ही उनका शिशु पुत्र चरण उसपरसे उतरकर शोर मचाता हुआ अपने पिताके पास आ पहुँचा। आज वह भी अपनी दादीके साथ अपने लिए मामी पसन्द करने गया था। वृन्दावन उसे गोदमें लेकर गाड़ीके पास आकर खड़े हो गये। माँ उस समय गाड़ीपरसे उतर ही रही थीं। उनका प्रसन्न मुख देखकर बोले—क्यों माँ, कबका मुहूर्त्त ठहरा?

माँ—बस इसी महीनेके अन्तमें। अब ज्यादा दिन नहीं हैं। तुम अन्दर चलो, बहुत-सी बातें करनी हैं। इतना कहकर वे हँसती हुई अन्दर चली गईं।

वे इस आनन्दके मारे फूली नहीं समाती थीं कि अब मेरे घरमें बहू आवेगी। इसके सिवा कुसुमको उस दिन घर-गृहस्थीके काममें निपुण देखकर वे बहुत ही चाहने लगी थीं और स्पष्ट देख रही थीं कि अब मैं भी सुखी होऊँगी, अपने एकमात्र पुत्रको यथार्थमें सुखी देखूँगी और बहूको घर-गृहस्थी सौंपकर आनन्दसे यात्रा करनेके लिए बाहर जा सकूँगी। इसी कारण अब उनके लिए और सब काम सहज हो गये थे। इसीलिए वे गोकुलकी विधवा स्त्रीके सभी प्रस्ताव स्वीकृत करके ब्याहका सारा खर्च अपने ऊपर लेकर और ब्याह बिलकुल पक्का करके आई थीं।

उस समय तक उनका भोजन नहीं हुआ था। वृन्दावन जानते थे कि माँ कहीं जाकर भोजन करनेके लिए जल्दी तैयार नहीं होतीं। उन्होंने पाठशालाके लड़कोंको छुट्टी दे दी और अन्दर आकर देखा कि वे रसोई बनानेका कोई उद्योग न करके एक ओर चुपचाप बैठी हैं। वृन्दावनने कहा—भूखा रहकर सोचनेसे सब कुछ गड़बड़ हो जाता है। दूसरोंकी चिन्ता पीछे करना, पहले अपनी रसोईकी चिन्ता करो।

माँने कहा—अब रसोई सन्ध्याको होगी। बेटा, मैं हँसी नहीं करती। अब समय बिलकुल नहीं है। उस पागलके पास न तो रुपया पैसा है और न आदमी हैं।

सब कुछ हम लोगोंको ही करना पड़ेगा। लड़कीकी माँ तो, देखा, बड़ी कड़ी है। जल्दी किसी बातपर राजी होना जानती ही नहीं। पर मैं भी तो छोड़नेवाली नहीं थी। अरे लो, यह भी आ गया। तुम्हारी हजार बरसकी आयु हो बेटा, अभी तुम्हारी ही बात हो रही थी। आओ बैठो। एकाएक इस समय कैसे चले आये?

वास्तवमें एक गाँवसे दूसरे गाँवमें किसीके घर जानेका यह समय नहीं था।

कुंजनाथ कमरेमें पहुँचते ही इस प्रकारका आदर-सत्कार देखकर पहले तो सिटपिटा गया फिर कुछ अप्रतिभ भावसे पास जाकर प्रणाम करके बैठ गया।

वृन्दावनने परिहास करते हुए कहा—क्यों कुंज भइया, तुम्हें खबर कैसे मिली? रात-भरके लिए भी चुप नहीं बैठ सके? अरे कल सबेरे आकर ही सुन लेते तो क्या हरज था?

वृन्दावनकी माँ भी कुछ मुस्कराई। पर कुंजका ध्यान उनकी बातोंकी ओर नहीं गया। उसने आँखें चढ़ाकर कहा—बाप रे! यह कोई बहन है कि दरोगा!

वृन्दावनने मुँह फेरकर हँसी छिपाई। उनकी माँने हँसी दबाकर पूछा—जान पड़ता है, बहूने कुछ कहकर भेजा है?

कुंजने इस प्रश्नका कोई उत्तर नहीं दिया और बहुत गम्भीर होकर कहा—भला माँ, तुम्हारी भी यह कैसी भूल है! मान लो अगर कुसुमकी निगाह न पड़ती, किसी औरकी ही निगाह जा पड़ती, तो फिर तुम्हीं बताओ, क्या होता?

माँ उसकी बातका अभिप्राय न समझकर उद्विग्न भावसे देखती रह गई।

वृन्दावनने पूछा—कुंज भइया, बताओ तो आखिर बात क्या है?

चटपट बतलाकर कुंज अपने आपको हलका नहीं करना चाहता था, इसी लिए उसने वृन्दावनके प्रश्नपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और माँसे कहा—पहले यह बतलाओ कि क्या खिलाओगी, तब बतलाऊँगा।

इसपर माँ हँस पड़ीं और बोलीं—बेटा, यह तो और भी अच्छी बात है। यह घर तुम्हारा ही है। बतलाओ, क्या खाओगे?

कुंजने कहा—अच्छा, यह फिर किसी दिन देखा जायगा। पहले यह बतलाओ कि तुम्हारी कौन-सी चीज खोई गई है?

वृन्दावनकी माँ चिन्तित हुई। कुछ ठहरकर सन्दिग्ध स्वरसे बोलीं—मेरी तो कोई चीज नहीं खोई।

यह सुनकर कुंज ठठाकर हँस पड़ा। फिर उसने अपने दुपट्टेमेंसे एक जोड़ी सोनेके कड़े निकाले और कहा—तो फिर ये कड़े तुम्हारे नहीं हैं ?

इतना कहकर कुंज बड़े भारी आह्लादसे आप ही आप हँसने लगा।

ये वही कड़े थे जो कल ठीक इसी समय वृन्दावनकी माँने परम स्नेहसे अपनी बहूके हाथोंमें पहनाकर उसे आशीर्वाद दिया था। आज वही कड़े, वही आशीर्वाद, कुसुमने अपने नासमझ भाईके हाथ लौटा दिये हैं !

वृन्दावनने क्षण-भर तक इस ओर देखकर जब अपनी माँकी ओर आँख उठाई तो वे डर गये ! उनके मुखपर एक बूँद भी रक्त नहीं रह गया था। तीसरे पहरके उस म्लान प्रकाशमें वह किसी मृतकके चेहरेके समान पीला दिखाई पड़ा। वृन्दावनके कलेजेमें उस समय क्या हो रहा था, यह अन्तर्यामी ही जानते हैं, पर उन्होंने पल-भरमें ही प्रबल चेष्टा करके अपने आपको सँभाल लिया और माँके कुछ और पास खिसककर बहुत ही सहज और शान्त भावसे कहा—माँ, यह हम लोगोंका बड़ा भाग्य है कि भगवान्‌ने हम लोगोंकी चीज हमको ही लौटा दी। यह तो तुम्हारे हाथके कड़े हैं माँ, भला उसकी मकदूर है कि वह इन्हें पहिन सके ?

इतना कहकर वृन्दावनने कुंजसे कहा—चलो भाई, हम लोग बाहर चलकर बैठें। इसके बाद वे उसे हाथ पकड़कर खींचते हुए बाहर ले गये।

कुंज ठहरा सीधा आदमी; इसीलिए, खुशीके मारे असमयमें इतना रास्ता चलकर आया था। आज दोपहरके समय, खा-पी चुकनेके बाद, जब कुसुमने म्लान मुखसे कड़ोंकी वह जोड़ी हाथमें लेकर शुष्क मृदु स्वरसे कहा—कल वे लोग यहाँ कड़ोंकी जोड़ी भूलसे छोड़ गये हैं, सो तुम्हें उनके यहाँ जाकर दे आना पड़ेगा, तब कुंजको मारे प्रसन्नताके इस बातका अवकाश भी न मिला कि वह अपनी बहनके म्लान मुखकी ओर ध्यान देता।

वह दाव-पेंच नहीं समझ सकता था। बहनका कहना ठीक नहीं है, या आदमी आदमीको इतनी कीमती चीज दे सकता है, और यदि कोई दे भी, तो दूसरा आदमी उसे ग्रहण नहीं करता, लौटा देता है, ये सब असम्भव बातें उसकी बुद्धिके अगोचर थीं। इसीलिए वह रास्तेभर केवल यही सोचता आया है कि

वे लोग अकस्मात् अपनी यह खोई हुई चीज पाकर कैसे प्रसन्न होंगे और मुझे कितना आशीर्वाद देंगे, इत्यादि इत्यादि।

पर कहाँ, वैसा तो कुछ हुआ नहीं। जो कुछ हुआ वह अच्छा हुआ या बुरा, सो भी वह ठीक तौरसे नहीं समझ सका। इतना बड़ा काम करके भी वृन्दावनकी माँके मुँहसे कोई अच्छी बात, कोई आशीर्वाद न पाकर उसका मन बहुत उदास हो गया, बल्कि धीरे धीरे उसे इस तरहकी एक लज्जाजनक अनुभूति दबाने लगी कि वृन्दावन उनके सामनेसे मुझे जबरदस्ती बाहर खदेड़ लाये हैं। वह लज्जित और दुःखी होकर चुप बैठा रहा। वृन्दावनने भी उसके पास बैठकर कोई बात नहीं की। उस समय उनकी बातचीत करने जैसी अवस्था भी नहीं थी। उनका हृदय अपमानकी अग्निमें जल रहा था। वह अपमान स्वयं उनका नहीं उनकी माँका था।

उन्हें अपने भले-बुरे या मान-अपमानका कोई खयाल नहीं था। जिस प्रकार मृत्युकी यातना और सब प्रकारकी यातनाओंको दबाकर केवल अकेली ही सब कुछ बन जाती है, माताके अपमानित विवर्ण मुखकी स्मृति ठीक उसी प्रकार उनकी समस्त अनुभूतियोंको निगल कर एक सघन भीषण अग्निशिखाके समान जलने लगी।

सन्ध्याका अन्धकार और भी गहरा हो गया। कुंजने धीरेसे कहा—अच्छा भाई वृन्दावन, तो अब मैं जाता हूँ।

वृन्दावनने विह्वलोंकी भाँति देखकर कहा—अच्छा जाओ, पर और किसी दिन जरूर आना।

कुंज चला गया और वृन्दावन वहीं औंधे होकर पड़ गये। वे सोचने लगे कि माँकी कैसी कैसी आशाएँ, भविष्यत्की कैसी कैसी कल्पनाएँ, पल-भरमें मिट्टीमें मिल गईं। अब मैं किस प्रकार उन्हें सुस्थ शान्त करूँ, उनके पास चलकर कौन-सी सान्त्वनाकी बात कहूँ?

और सबसे बढ़कर निष्ठुर परिहास यह कि जिसने इस प्रकार समस्त आशाओंको निर्मूल करके उनकी उपवासिनी, शान्त, संन्यासिनी माताके हृदयको ऐसा आघात पहुँचाया, वह उन्हींकी स्त्री है, उसीको वे प्यार करते हैं!

पाँचवाँ परिच्छेद

जिस प्रकार कल एक दिनके मेल-मिलापसे कुसुमने अपनी सास और स्वामीको पहचान लिया था ठीक उसी तरह वे भी उसे पहिचान गये हैं, इस विषयमें उसे जरा भी संशय न था।

जो पहचानना जानते हैं, उनके निकट इस तरह अपने आपको दिन-भर उलझाये रखनेसे कुसुमका हृदय केवल अभूतपूर्व आनन्दसे फूल ही नहीं उठा था, बल्कि उसने अनजानमें ही अपने आपको एक दुश्छेद्य स्नेहके बन्धनमें बाँध डाला था।

उसी बन्धनको आज अपने हाथसे तोड़कर जब कुसुमने कड़ोंकी जोड़ी लौटा देनेको दी और निरीह कुंजनाथ उसे लेकर बड़े आनन्दसे चल दिया, तब क्षण-भरके लिए उसे वह क्षत-वेदना असह्य मालूम हुई। वह कोठरीमें जाकर रोने लगी। मानो उसे अपनी आँखोंके सामने यह स्पष्ट दिखाई देने लगा कि मेरा यह निष्ठुर आचरण उनके लिए कितना अप्रत्याशित, आकस्मिक और अत्यन्त मर्मान्तक होगा और मेरे सम्बन्धमें उन लोगोंका भाव कैसा हो जायगा!

सन्ध्या कभीकी उत्तीर्ण हो गई है। कुंज लौट आया। उसने चारों ओर अन्धकार देखकर अपनी बहनकी कोठरीके सामने जाकर पूछा—कुसुम, दीया नहीं जलाया?

कुसुम तब भी चुपचाप जमीनपर बैठी हुई थी। वह कुछ व्यस्त और लज्जित होकर उठ खड़ी हुई और बोली—अभी जला देती हूँ भइया, तुम कब आये?

बस अभी चला आ रहा हूँ।—कहकर कुंजनाथ हुक्का-चिलम ढूँढ़कर तमाखू चढ़ाने लगा।

दीपकमें तेल भरने और बत्ती बनाने आदिमें उसे कुछ विलम्ब हो गया। आकर देखती है तो कुंजनाथ तमाखू चढ़ाकर चला गया है।

नित्यकी भाँति आज रातको भी कुसुम अपने भाईको रसोई परोस कर कुछ दूर बैठ गई। कुंज गम्भीर होकर भोजन करने लगा। उसने कोई भी बात नहीं की। जिसे बातोंके आगे और कुछ नहीं भाता, उसे आज सहसा इस प्रकार मौनावलम्बी देखकर कुसुमका हृदय आशंकासे भर गया।

इसमें तो कोई सन्देह नहीं रहा कि कुछ अप्रीतिकर घटना हुई है, पर वह

कैसी और कहाँ तक हुई है, यह जाननेके लिए वह छटपटाने लगी। उसे यही खयाल होने लगा कि भइयाका उन्होंने बहुत अपमान किया है, क्योंकि, वह निश्चितरूपसे जानती है कि छोटे मोटे अपमानको मेरा भाई समझ ही नहीं पाता और यदि समझ लेता है तो इतनी देरतक मनमें रख नहीं सकता।

भोजन करनेके उपरान्त जब कुंज जाने लगा, तब कुसुमसे चुप नहीं रहा गया। उसने कोमल स्वरसे पूछा—भइया, वे कड़े किसके हाथमें दे आये?

कुंजने विस्मित होकर कहा—भला और किसके हाथमें देता? माँके हाथमें दे आया।

"उन्होंने क्या कहा?"

"कुछ भी नहीं।" कहकर कुंज बाहर चला गया।

दूसरे दिन जब कुंज फेरीके लिए बाहर जाने लगा, तब स्वयं ही कुसुमको पुकारकर बोला—कुसुम, तुम्हारी सासको न जाने क्या हो गया है। ऐसी चीज हाथमें दे आया, पर एक बात भी वे न बोलीं। बल्कि वृन्दावनको भला कहना होगा, जो खुश होकर कहने लगे कि 'माँ, मकदूर है कि कोई ऐसा वैसा आदमी तुम्हारे कड़े अपने हाथोंमें पहिन सके! हमारा बड़ा भाग्य है मा, इसीलिए भगवानने हम लोगोंकी चीज हमें लौटाकर सावधान कर दिया,'—हैं! यह क्या कुसुम?

कुसुमका गोरा गोरा चेहरा बिलकुल पीला पड़ गया था। उसने जोरसे सिर हिलाकर कहा—नहीं, कुछ नहीं। यह बात स्वयं उन्होंने कही?

कुंज०—हाँ, उन्हींने कही। माँ तो मुँहसे बोलीं ही नहीं। इसके सिवाय सबेरेसे ही वे न जाने कहाँ गईं थीं, तब तक उन्होंने न कुछ खाया ही था न नहाया ही था। वे इस ढंगसे मेरे मुँहकी ओर देखती रहीं, मानो उनकी समझमें ही न आया कि उन्हें क्या दिया और क्या कहा।

इतना कहकर कुंज अपने मनसे ही एक-दो बार गर्दन हिलाकर दौरेको सिरपर रखकर बाहर चला गया।

तीन-चार दिन बीत गये। रसोई ठीक नहीं बनी थी, इसलिए कुंजने परसों और कल मुँह फुलाया था। आज स्पष्ट रूपसे शिकायत करनेसे भाई-बहनमें बहुत झगड़ा हो गया।

कुंज रसोई फेंककर उठ खड़ा हुआ और बोला—कभी यह जल जाता है, कभी वह खराब हो जाता है, आजकल तुम्हारा मन कहाँ रहता है कुसुम?

कुसुमने भी बहुत क्रुद्ध होकर उत्तर दिया—मैं किसीकी खरीदी हुई लौंडी ाहीं हूँ। मुझसे रसोई नहीं होगी। जो अच्छी रसोई बनावे, उसे जाकर ले आओ।

कुंजका पेट जल रहा था, आज वह डरा नहीं। उसने हाथ मटकाकर कहा—हले तू यहाँसे चली जा, तब देखना कि मैं लाता हूँ या नहीं।

इतना कहकर वह दौरा लेकर स्वयं ही जल्दीसे चल दिया।

कुसुम उसी दिनसे जी भरकर रोनेके लिए व्याकुल हो रही थी। आज ऐसा भच्छा सुयोग उसने नहीं छोड़ा।

भाईकी परोसी हुई थाली पड़ी रही, सदर दरवाजा वैसा ही खुला रहा, वह ाँचल बिछाकर रसोईघरकी चौखटपर सिर रखकर इस तरह रोने लगी जैसे ोई मर गया हो।

उस समय शायद दस बजे थे। घण्टेभर तक खूब अच्छी तरह रो-धोकर वह बेलकुल थककर सो गई थी कि उसने चौंककर आँखें खोलते ही देखा कि ृन्दावन आँगनमें खड़े हुए 'कुंज भइया' 'कुंज भइया' कहकर पुकार हे हैं। उनके साथ उनकी उँगली पकड़े हुए पाँच-छः बरसका एक हृष्टपुष्ट सुंदर ालक है। कुसुमने घबराकर घूँघट खींच लिया और वह चट आकर किवाड़की आड़में खड़ी हो गई। उस समय वह और सब कुछ भूलकर किवाड़के छेदमेंसे टक लगाकर उसी सुन्दर बालककी ओर देखने लगी।

उसने देखते ही पहचान लिया कि यह मेरे स्वामीकी सन्तान है। देखते देखते सहसा उसकी आँखोंमें जल भर आया और उसके दोनों हाथ मानों हजार हाथ बनकर उसे छीन लेनेके लिए उसका वक्षपञ्जर फोड़कर आगे बढ़ने लगे। तो भी न तो वह आवाज ही दे सकी और न उस ओर पैर ही बढ़ा सकी। वह पत्थरकी मूरतके समान टक लगाये उस बालककी ओर देखती रही। किसीकी भी आहट न पाकर वृन्दावन कुछ विस्मित हुए।

आज सबेरे ही वे अपने किसी कामसे इधर आये थे और काम निबटाकर लौट रहे थे। देखा कि दरवाजा खुला है और कुंज घरमें होगा, इसलिए गाड़ीपरसे उतरकर भीतर चले आये थे। कुंजसे उन्हें जरूरी काम था। बैलगाड़ी जोती जाती देखकर उनका पुत्र चरण सबेरे ही सवार हो गया था; इसीलिए वह भी उनके साथ था।

वृन्दावनने फिर पुकारा—क्या कोई घरमें नहीं है ?

फिर भी कोई उत्तर नहीं।

चरणने कहा—बाबूजी खूब प्यास लगी है। पानी पिऊँगा।

वृन्दावनने बिगड़ते हुए धमकाया—नहीं, प्यास नहीं लगी, जाते वक्त नदीपर पीना।

बेचारा बालक सूखा मुँह करके चुप रह गया।

उस दिन तो कुसुम लज्जाके पहले वेगको दबाकर स्वच्छन्दतापूर्वक वृन्दावनके सामने बाहर आई थी, और आवश्यक बातचीत बहुत सहज़में ही कर सकी थी, पर आज उसका सारा शरीर लज्जासे अवश होने लगा।

यदि चरणने पानी न माँगा होता तो शायद आज वह किसी प्रकार बाहर न निकल सकती। पहले क्षण-भरके लिए तो उसे कुछ दुविधा हुई, पर फिर उसने एक छोटा आसन लाकर बरण्डेमें बिछा दिया और फिर वह पास आकर चरणको गोदमें उठाकर चुपचाप भीतर चली गई।

वृन्दावनने यह संकेत तो समझ लिया, पर उनकी समझमें यह बात न आई कि चरण क्या सोचकर बिना कुछ कहे-सुने चुपचाप इस नितान्त अपरिचितकी गोदमें चला गया। पिता अपने पुत्रका स्वभाव बहुत अच्छी तरह जानते थे।

इधर चरण हतबुद्धि-सा हो गया। एक तो अभी उसने अपने पिताकी घुड़की खाई थी, ऊपरसे एक बिलकुल अपरिचित जगहमें न जाने कौन कहाँसे आकर उसे इस प्रकार अचानक उठा ले गया जिस प्रकार पहले और किसीने उसे नहीं उठाया था।

कुसुमने चरणको अन्दर ले जाकर बताशे दिये, फिर थोड़ी देरतक टकटकी लगाकर उसकी ओर देखा और तब सहसा बड़े जोरसे उसे छातीपर खींच लेकर और दोनों हाथोंसे उसे दबोचकर रोना आरम्भ कर दिया।

चरण जब अपने आपको उस कठिन बाहुपाशसे छुड़ानेकी चेष्टा करने लगा, तब कुसुमने आँसू पोंछकर कहा—यह क्या बेटा, मैं तो तुम्हारी माँ हूँ !

कुसुम सदासे बालकोंको चाहती थी। यदि कभी कोई बालक उसके हाथमें आ जाता, तो वह जल्दी उसे छोड़ती ही न थी। परन्तु, उसके हृदयमें आज जैसी विश्वग्रासी भूखकी आँधी शायद और कभी नहीं उठी थी। उसकी छाती मानो टूट-फूटकर गिरने लगी। यह सुन्दर, स्वस्थ और सबल बालक मेरा ही

हो सकता था, पर क्यों न हुआ ? किसने यह बाधा डाली ? सन्तानसे माताको वंचित करनेका इस प्रकारका अनधिकार संसारमें किसे है ? चरणको वह जितना ही अपनी छातीपर अनुभव करने लगी, उतना ही उसका वंचित, तृषित मातृ-हृदय किसी प्रकार भी सान्त्वना नहीं पाने लगा। उसे यही जान पड़ने लगा कि मेरा धन किसीने बलपूर्वक, अन्यायपूर्वक मुझसे छीन लिया है।

पर चरणके लिए यह असह्य हो उठा था। यदि वह यह जानता तो शायद नदीपर ही जाकर जल पीता। उसके लिए इस स्नेहके पीड़नकी अपेक्षा प्यास कदाचित् अधिक सह्य होती। उसने कहा—छोड़ दो।

कुसुमने अपने दोनों हाथोंमें उसका मुँह लेकर कहा—'माँ' कहो, तो छोड़ दूँ।

चरणने सिर हिलाकर कहा—नहीं।

"तो फिर नहीं छोड़ूँगी।" यह कहकर कुसुमने उसे फिर जोरसे छातीसे चिमटा लिया। उसे खूब दबाकर खूब अच्छी तरह चूमा लेकर हँफा दिया और कहा—माँ न कहोगे, तो किसी तरह भी न छोड़ूँगी।

तब चरणने रुआसा होकर कहा—माँ।

अब तो चरणको छोड़ना कुसुमके लिए बिलकुल ही असम्भव हो गया। वह उसे अपनी छातीसे चिमटाकर रोने लगी।

विलम्ब हो रहा था। बाहरसे वृन्दावनने कहा—अरे चरण, तूने पानी पी लिया ?

तब चरणने रोते हुए बोला—यह तो छोड़ती ही नहीं।

कुसुमने आँसू पोंछकर बैठे हुए गलेसे कहा—आज चरण मेरे पास रहेगा।

वृन्दावनने द्वारके पास आकर कहा—भला वह कैसे रह सकेगा ? और फिर उसने अभी तक खाया भी नहीं है। माँ बहुत घबरायँगी।

कुसुमने उसी प्रकार उत्तर दिया—नहीं, वह यहीं रहेगा। आज मेरी तबीयत बहुत खराब हो रही है।

वृन्दा०—क्यों, क्या हुआ है ?

कुसुमने कोई उत्तर नहीं दिया।

थोड़ी देर बाद कहा—तुम गाड़ी लौटा दो, देर बहुत हो गई है। मैं नदीपर जाकर चरणको स्नान करा लाती हूँ।

इतना कहकर कुसुम किसी प्रकारके उत्तर या प्रतिवादकी प्रतीक्षा किये बिना

अँगोछा तथा तेलकी कटोरी हाथमें लेकर चरणको गोदमें लिये हुए नदीको चल दी।

घरके नीचे ही एक स्वच्छ छोटी नदी थी। उसे देखते ही चरण प्रसन्न हो गया। उसके गाँवमें नदी नहीं, एक छोटा-सा कच्चा तालाब है। उसे कोई उस तालाबमें उतरने नहीं देता था, इसलिए, उसे ऐसा सौभाग्य इसके पहले कभी प्राप्त नहीं हुआ था। घाटपर बैठकर स्थिर भावसे उसने तेल मला और फिर वह घुटने-भर पानीमें कूद पड़ा। फिर थोड़ी देर उछल-कूद मचाकर स्नान करके कुसुमकी गोदमें चढ़कर जब लौटा तब माता और पुत्रमें एक विलक्षण सद्भाव उत्पन्न हो गया था।

कुसुम लड़केको गोदमें लिये हुए सामने आई। उसका सारा मुँह खुला हुआ था, सिरका कपड़ा केवल ललाटको छू रहा था। जाते समय वह तबीयत खराब होनेकी बात कह गई थी पर अब तो उसके मुखपर दुःख या कष्टका आभास भी नहीं था। बल्कि ताजे खिले हुए गुलाबके समान उसके होंठ दबी मुस्कराहटसे खिले पड़ते थे। उसके आचरणमें किसी प्रकारके संकोच या कुण्ठाका नाम भी न था। उसने बहुत ही सहज भावसे कहा—अच्छा, अब तुम जाओ और स्नान कर आओ।

"उसके बाद।"

"भोजन होगा।"

"उसके बाद?"

"भोजन करके जरा आराम करना।"

"फिर उसके बाद?"

"जाओ, मैं नहीं जानती। लो, अँगोछा लो और देर मत करो।"

यह कहकर कुसुमने हँसते हँसते अँगोछेको वृन्दावनके ऊपर फेंक दिया।

वृन्दावनने अँगोछा पकड़ लिया और मुँह फेरकर एक लम्बी साँस लेकर कहा—बल्कि तुम्हीं देर मत करो। चरणको कुछ खिला-पिला दो। मुझे घर जाना ही होगा!

"क्यों जाना ही होगा? गाड़ीके लौट जानेपर माँ आप ही समझ जायँगी।"

"ठीक इसीलिए गाड़ी नहीं लौटाई है, वह आगे पेड़के नीचे खड़ी है।"

यह सुनकर कुसुमका हँसता हुआ चेहरा मलिन हो गया। सूखे मुँह कुछ

देर तक खड़ी रहकर उसने मुँह उठाकर कहा—तब तो माँसे बिना पूछे तुम्हारा यहाँ आना ही उचित नहीं हुआ।

गूढ़ अभिमानसे भरे हुए कुसुमके स्वरका ध्यान करके वृन्दावन हँस पड़े, परन्तु, उस हँसीमें आनन्द नहीं था। इसके बाद सहज भावसे बोले—कुसुम, मैं इस तरह बड़ा हुआ हूँ कि माँकी आज्ञाके बिना इस घरकी कौन कहे, इस गाँवमें भी पैर नहीं रख सकता। पर खैर, जाने दो। जो बात बीत गई है उसे फिरसे उठानेमें किसी भी पक्षका कोई लाभ नहीं, न तुम्हारा और न मेरा। जाओ, अब देर मत करो। लड़केको खिला-पिला दो। यह कहकर वृन्दावन फिर आसनपर बैठ गये।

कुसुम बड़ी कठिनतासे आँसू रोककर चुपचाप नीचा मुँह किये लड़केको लेकर कोठरीमें चली गई।

घण्टे-भर बाद जब पिता-पुत्र गाड़ीपर बैठकर घरको लौट चले तब रास्तेमें चरणने पूछा—बाबूजी, माँ इतना रोती क्यों थीं ?

वृन्दावनने चकित होकर पूछा—क्यों रे, तुझसे यह किसने कहा कि वह तेरी माँ है।

चरणने जोर देते हुए कहा—वह मेरी माँ तो हुई हैं। क्या वह माँ नहीं हैं ?

वृन्दावनने इस बातका कोई उत्तर न देकर पूछा—तू अपनी माँके पास रह सकता है ?

चरणने बहुत प्रसन्न होकर सिर हिलाते हुए कहा—हाँ, रह सकता हूँ।

'अच्छा' कहकर वृन्दावन गाड़ीमें एक ओर मुँह फेरकर लेट गये और सूर्यकी किरणोंसे तपे हुए स्वच्छ आकाशकी ओर देखने लगे।

दूसरे दिन तीसरे पहर नदीसे जल लाने जाते समय कुसुम अपने सदर दरवाजेकी सिकड़ी लगा रही थी। इतनेमें बारह-तेरह बरसके एक बालकने इधर उधर देखते हुए पास आकर पूछा—तुम कुंज बैरागीका मकान बतला सकती हो ?

कुसुमने कहा—हाँ, बतला सकती हूँ। कहाँसे आये हो ?

"बाड़लसे। पण्डितजीने चिट्ठी दी है।"

यह कहकर उसने अपने मैले दुपट्टेमेंसे एक चिट्ठी निकालकर दिखलाई।

कुसुमकी रगोंका लहू उबल उठा। देखा, ऊपर स्वयं उसीका नाम है। चिट्ठी खोलकर देखी। बहुत-कुछ लिखा हुआ है—स्वयं वृन्दावनके हाथका।

क्या लिखा है यह जाननेके उन्मत्त आग्रहको प्राणपणसे दबाकर वह लड़केको बुलाकर अन्दर ले गई और उसने पूछा—तुम 'पण्डितजी' किसे कह रहे थे? तुम्हें चिट्ठी किसने दी?

बालकने कुछ चकित होकर कहा—पण्डितजीने दी है।

कुसुमको पाठशालाका हाल मालूम नहीं था; इसलिए, वह कुछ समझ न सकी। उससे पूछा—तुम चरणके पिताको जानते हो?

"हाँ जानता हूँ। वही तो पण्डितजी हैं।"

"तुम उनसे पढ़ते हो?"

"मैं पढ़ता हूँ और पाठशालामें और भी बहुतसे लड़के पढ़ते हैं।"

कुसुम और भी उत्सुक हो गई और उसने अनेक प्रश्न करके इस सम्बन्धकी सब बातें जान लीं। उसे मालूम हो गया कि पाठशाला पण्डितजीके घरमें ही स्थापित है। उसमें लड़कोंको फीस नहीं देनी पड़ती। पण्डितजी बालकोंको स्वयं पुस्तकें, स्लेट-पेन्सिल आदि खरीद देते हैं। जिन गरीब छात्रोंको दिनके समय अवकाश नहीं मिलता वे सन्ध्या समय पढ़ने आते हैं, और जब ठाकुरजीकी आरती हो जाती है तब प्रसाद लेकर हँसते-खेलते अपने अपने घर लौट जाते हैं। दो लड़के उमरमें बड़े भी हैं जो पाठशालामें अँगरेजी पढ़ते हैं, इत्यादि सारी बातें कुसुमने जान लीं और लड़केको फुटाने-बताशे देकर बिदा कर दिया। इसके बाद वह चिट्ठी खोलकर पढ़ने बैठी।

कुसुमका सुख स्वप्न मानो किसीने एक प्रबल धक्का देकर भंग कर दिया। पत्र उसीको लिखा गया था; पर उसमें किसी प्रकारका सम्बोधन नहीं, स्नेहकी कोई बात नहीं, यहाँतक कि एक आशीर्वाद तक नहीं। और तिसपर यह उसका पहला पत्र था! यद्यपि इससे पहले और किसीने कभी उसे कोई पत्र नहीं भेजा था, पर उसने अपनी सखी सहेलियोंके अनेक पत्र देखे थे। उन पत्रोंसे इस पत्रमें कितना अधिक अन्तर है! इसमें आदिसे अन्ततक केवल कामकी बातें हैं। मुख्य है कुंजनाथके ब्याहकी बात। यह बात कहनेके लिए ही वे कल आये थे। उन्होंने सूचित किया है कि माँने कुंजनाथके ब्याहकी बातचीत पक्की कर ली है और ब्याहका सारा व्यय भी वही अपने पाससे देंगी। सभी दृष्टियोंसे यह ब्याह हो जाना चाहिए; क्यों कि, इससे कुंजनाथके और उसके साथ स्वयं

कुसुमके भी सांसारिक कष्ट दूर हो जायँगे। यह संकेत प्रायः स्पष्ट रूपसे ही उसमें किया गया है।

एक बार समाप्त कर चुकनेपर उसने फिर उसे एक बार पढ़नेकी चेष्टा की, पर इस बार सब अक्षर मानो उसकी आँखोंके सामने नाचने लगे। चिट्ठी बन्द करके वह किसी तरह अपनी कोठरीमें जाकर पड़ गई। अपने इतने बड़े सौभाग्यकी संभावना भी उसके मनमें आनन्दका तनिक भी आभास न ला सकी।

छठा परिच्छेद

कोई महीना भर हुआ, कुंजनाथका ब्याह हो गया है। उस दिनसे वृन्दावन फिर नहीं आये। वे विवाहके दिन भी यह कहकर अनुपस्थित रहे कि मुझे ज्वर आ गया है। उनकी माँ केवल चरणको लेकर उसी एक दिनके लिए आई थीं क्यों कि अपने गृहदेवताको छोड़कर वह कहीं दूसरी जगह नहीं रह सकतीं। केवल चरण पाँच-छः दिन और भी वहाँ रहा। अपने मनके मुताबिक माँ पाकर हो अथवा नदीमें स्नान करनेके लोभसे हो, उसने लौटकर अपने घर नहीं जाना चाहा। पीछे जबरदस्तीसे उसे घर ले जाना पड़ा। तभीसे कुसुमका जीना दूभर हो गया है।

विवाहसे पहले कुसुमने जो जो आशंकाएँ की थीं, अब उन सबके अक्षरशः पूरे होनेका उपक्रम दिखाई पड़ता था। वह अपने भाईको बहुत अच्छी तरह पहचानती थी। वह जानती थी कि भइया अपनी सासके परामर्शसे यह कष्टपूर्ण गृहस्थी छोड़कर अपनी ससुरालमें जा रहनेके लिए व्यग्र होंगे। ठीक वही हुआ। जिस सिरपर सेहरा बाँधकर कुंज अपना विवाह करने गया था, अब उसपर उसने टोकरा ढोना पसन्द नहीं किया। यदि नलडाँगेके लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे? विवाहके समय वृन्दावनकी माँने चतुराईसे उसे कुछ नगद रुपये दिये थे। उन्हींसे कुछ माल खरीद करके बाहर रास्तेपर एक छप्पर डालकर वह एक मनिहारीकी दूकान खोलकर बैठ गया। परन्तु, वहाँ एक पैसेकी भी बिक्री नहीं हुई। इस एक मासके बीच वह नये कपड़े और नये जूते पहनकर तीन-चार बार ससुराल आया-गया है। पहले वह कुसुमसे बहुत डरा करता था, पर अब नहीं डरता। जब उससे कहा जाता कि घरमें चावल-दाल कुछ भी

नहीं हैं, तब वह चुपचाप जाकर दूकानपर बैठ जाता, अथवा कहीं इधर-उधर खिसक जाता और फिर दिन-भर घर न आता। चारों ओर देखकर कुसुम बहुत घबराई। उसके पास जो थोड़ेसे जमा किये हुए रुपये थे, वे भी सब खर्च होकर समाप्त होने आये। फिर भी कुंजने आँखें न खोलीं। वह अपनी नई दूकानपर बैठकर सारे दिन तमाखू पिया करता और ऊँघता रहता। जब दो-चार आदमी आ बैठते, तब वह उन्हें ससुरालकी बातें सुनाता और अपनी नई जमीन-जायदादकी फेहरिस्त तैयार करता।

उस दिन कुंज सबेरे उठकर अपने नये वार्निशदार जूतोंमें तेल लगाकर उन्हें चमका रहा था। कुसुम रसोईघरसे बाहर निकलकर कुछ देर तक उसे देखती रही और फिर बोली—जान पड़ता है आज फिर नलडाँगे जाओगे?

कुंज केवल 'हूँ' करके अपने काममें लग गया।

कुछ देर बाद कुसुमने कोमल स्वरसे कहा—भइया, अभी तो तुम उस दिन वहाँ गये ही थे, आज जरा जाकर मेरे चरणको न देख आओ! बहुत दिनोंसे लड़केकी कोई खबर नहीं मिली है। मेरा जी घबरा रहा है।

कुंजने चिढ़कर कहा—तुम्हारा जी तो सभी बातोंमें घबराता है। वह अच्छी तरह है।

कुसुमको क्रोध आ गया, पर उसने उसे रोककर कहा—वह अच्छा ही रहे; फिर भी, जाकर उसे एक बार देख आओ। ससुराल कल चले जाना।

कुंजने गरम होकर कहा—कल जानेसे कैसे चलेगा? वहाँ कोई मरद मानुस तक तो है नहीं। घर-द्वार जमीन-जायदाद, क्या होता है, क्या नहीं होता, यह सब भार मेरे ही सिर तो है। मैं अकेला आदमी किधर किधर देखूँ और सँभालूँ?

भाईकी बातचीतके रंग-ढंगसे अबकी बार कुसुम क्रोधित होकर भी हँस पड़ी। उसने हँसते हँसते कहा—नहीं भइया, तुम सब सँभाल लोगे। मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, आज एक बार चले जाओ। सचमुच न जाने क्यों आज उसके लिए मेरा जी बहुत घबरा रहा है।

कुंज जूतोंको हाथोंसे हटाकर अतिशय रूखे स्वरमें बोला—मुझसे नहीं जाया जायगा। वृन्दावन मेरे ब्याहके समय नहीं आये; क्यों, वह क्या हमसे इतने अधिक बड़े आदमी हैं जो हमारे यहाँ आ नहीं सके?

यद्यपि कुंजकी बातें कुसुमके लिए उत्तरोत्तर असह्य होती जा रही थीं, फिर भी उसने शान्त भावसे कहा—उस दिन उन्हें ज्वर आ गया था।

कुंज०—नहीं आया था। नलडाँगेमें बैठे हुए इस खबरको सुनकर मेरी सासने तत्काल ही कहा था—झूठ बात है, चालाकी है। उन्हें धोखा देना कोई सहज बात नहीं है। जानती हो, वह घर बैठीं बैठीं सारे देशकी खबर बतला सकती हैं। नमकहराम और किसे कहते हैं? इसे ही तो कहते हैं! मैं उनका मुँह भी नहीं देखना चाहता।

इतना कहकर कुंजने गम्भीर भावसे खड़े होकर पैरमें जूता पहना।

कुसुम थोड़ी देर तक इस प्रकार स्तब्ध रही मानो उसपर वज्रपात हो गया हो। फिर उसने धीरेसे कहा—वे नमकहराम हैं! तुमने उस दिन उनको खूब नमक खिलाया था न जिस दिन अपने घर बुलाकर खुद भाग गये थे! भइया, मैं स्वप्नमें भी नहीं सोच सकती थी कि तुम ऐसे हो जाओगे।

इस अभियोगका कुंजके पास कोई उत्तर नहीं था; इसीलिए, वह ऐसे भावसे चुपचाप खड़ा रहा मानो कुछ सुना ही नहीं।

कुसुमने फिर कहा—जिसे तुम अपनी जमीन-जायदाद कहते हो, वह किसकी होती? तुम्हारा ब्याह किसने करा दिया?

कुंजने मुड़कर उत्तर दिया—कौन किसका ब्याह करा देता है? माँ (=सास) कहती हैं कि जब फूल फूलना चाहता है, तब उसे कोई रोक नहीं सकता। ब्याह अपने आप हो जाता है।

"अपने आप हो जाता है?"

"होता ही तो है।"

कुसुमने अब और कुछ नहीं कहा। वह चुपचाप अपनी कोठरीमें चली गई। मारे लज्जा और घृणाके उसकी छाती फटने लगी।—छीः! छीः! यदि कहीं वे ये सब बातें सुन पावें! सुनेंगे तो सबसे पहले यही समझेंगे कि दोनों बहन-भाई एक ही साँचेमें ढले हैं!

प्रायः बीस मिनट बाद जब कुसुमने नये जूतोंका चरमर शब्द सुना, तब उसने बाहर आकर पूछा—कब तक लौटोगे?

"कल सबेरे।"

" मुझे इस तरह घरपर अकेले छोड़ जानेमें तुम्हें भय नहीं लगता, लज्जा नहीं आती ? "

" क्यों, क्या यहाँ कोई बाघ-भालू बैठा है जो तुम्हें खा जायगा ? मैं सबेरे ही तो लौट आऊँगा । " यह कहकर कुंज ससुरालको चल दिया ।

कुसुमने लौटकर जलते हुए चूल्हेमें पानी डाल दिया और वह जाकर बिछौनेपर पड़ रही ।

सातवाँ परिच्छेद

जिस प्रकार कोई दुष्कर्म करनेवाला अनुतप्त और निरुपाय होकर अपना अपराध स्वीकार कर लेता है, ठीक उसी प्रकारकी आकृति बनाकर वृन्दावनने अपनी माँके पास जाकर कहा—माँ, तुम मुझे क्षमा करो और मुझे आज्ञा दो कि मैं ढूँढ़ढाँड़कर तुम्हारे लिए एक दासी ले आऊँ । मुझसे यह नहीं देखा जाता कि तुम हमेशा गृहस्थीका बोझ ढोती ढोती ही मर जाओ ।

माँ ठाकुर-घरमें पूजाकी सामग्री ठीक कर रही थीं । सिर उठाकर बोलीं—क्या करेगा ?

" तुम्हारे लिए एक दासी ले आऊँगा । वह चरणको देखेगी, तुम्हारी सेवा करेगी और आवश्यकता होनेपर ठाकुरजीकी सेवा-पूजाका काम भी कर देगी । बस, आज्ञा दे दो ।

इतना कहकर वृन्दावन उत्सुक और व्यथित दृष्टिसे अपनी माताके मुखकी ओर देखने लगा ।

अब माँने अपने पुत्रकी बातका मतलब समझा; क्योंकि, स्वजातीय छोड़कर साधारण दासी इस घरमें नहीं आ सकती थी । कुछ देर चुप रहनेके उपरान्त माँने पूछा—यह क्या तू सत्य कह रहा है ?

" सत्य नहीं तो और क्या झूठ कह रहा हूँ ? तुम जानती हो कि होश सँभालनेके बाद मैंने कभी तुम्हारे सामने झूंठ नहीं बोला । "

" अच्छा, जरा सोच-समझ लूँ । " कहकर वृन्दावनकी माँ कुछ हँसीं और अपने काममें लग गईं ।

वृन्दावन सामने जा बैठे और बोले—नहीं माँ, यह न होगा । मैं तुम्हें सोचने-

समझनेका समय नहीं दूँगा। यही सोचकर आया हूँ कि तुमसे आज्ञा लेकर ही इस कोठरीसे बाहर निकलूँगा। आज्ञा लेकर ही जाऊँगा।

"सोचने-समझनेके लिए क्यों समय नहीं दोगे?"

"माँ, उसका एक कारण है। तुम सोच-समझकर जो कुछ कहोगी, वह तुम्हारी निजकी ही बात होगी, मेरी माताकी आज्ञा नहीं होगी। मैं भला-बुरा परामर्श नहीं चाहता, केवल अनुमति चाहता हूँ।

माँने सिर उठाकर और थोड़ी देरतक देखते हुए कहा—किन्तु, जब एक दिन अनुमति दी थी, तुझे मनाया था, तब तो तूने सुना नहीं वृन्दावन!

"यह मैं जानता हूँ। उसी पापके फलसे तो मैं इस समय चारों ओरसे घिर गया हूँ।" यह कहकर वृन्दावनने सिर झुका लिया।

लड़केने यह प्रस्ताव केवल मुझको ही सुख पहुँचानेके लिए किया है; और, इसे कार्य रूपमें परिणत करते हुए उसे कैसा लगेगा यह निश्चित रूपसे समझकर माताकी आँखोंमें जल भर आया। उन्होंने संक्षेपमें कहा—अभी रहने दो वृन्दावन, दो-एक दिन बाद कहूँगी।

वृन्दावनने जिद करते हुए कहा—जिस कारण तुम आनाकानी कर रही हो माँ, वह दो दिन बाद भी न होगा। जिसने तुम्हारा अपमान किया है, यदि इच्छा हो तो तुम उसे क्षमा कर दो, पर मैं न करूँगा। माँ, अब मैं नहीं सह सकता, मुझे आज्ञा दे दो जिससे मैं सुस्थ होकर जीता रहूँ।

माँने सिर उठाकर फिर देखा और थोड़ी देर तक सोचकर ठण्ढी साँस लेते हुए कहा—अच्छा जाओ, अनुमति देती हूँ।

वृन्दावनने इस ठण्ढी साँसका मतलब समझ लिया, लेकिन उन्होंने फिर और कोई बात नहीं कही। चुपचाप चरणोंकी धूल सिरपर लगाकर वे कोठरीके बाहर आकर खड़े हो गये।

इतनेमें पाठशालाके एक छात्रने आकर उनके हाथमें एक पत्र दिया और कहा—पण्डितजी, यह आपकी चिट्ठी है।

माँने अन्दरसे पूछा—वृन्दावन, किसकी चिट्ठी है?

"मालूम नहीं। देखता हूँ माँ।"

यह कहकर वृन्दावन कुछ अन्यमनस्क होकर अपने कमरेमें चले गये। खोलकर देखा, किसी स्त्रीके हाथके सुन्दर और स्पष्ट अक्षर हैं। उसमें न कहीं

काटकूट है, और न कहीं वर्णोंकी अशुद्धि। ऊपर 'श्रीचरणकमलेषु' लिखा हुआ है पर नीचे हस्ताक्षर नहीं हैं। पहले कभी कुसुमके अक्षर नहीं देखे थे, फिर भी तत्काल समझ लिया कि यह उसीका पत्र है।

उसने लिखा है—"मेरे भाईको देखोगे तो अब तुम शायद पहचान ही न सकोगे। क्यों, सो दूसरेसे किसी तरह नहीं कहा जा सकता, यहाँ तक कि तुमसे कहनेमें भी मैं मारे लज्जाके गड़ी जाती हूँ। आज वे फिर ससुराल गये हैं। शायद कल सबेरे लौटेंगे। सम्भव है, कल भी न आवें। क्यों कि वे कह गये हैं कि यहाँ बाघ-भालू नहीं बैठे हैं। मुझे अकेली पाकर कोई खा जायगा, यह आशंका उन्हें नहीं है। तुममें इतना साहस यदि न हो, तो मेरे चरणको दे जाना।"

सबेरे भाईसे रंज होकर कुसुमने जलते हुए चूल्हेमें पानी डाल दिया और फिर उसे नहीं जलाया। सारे दिन भूखी पड़ी रही। डर और चिन्ताके मारे वह हजारों बार अन्दर-बाहर आई-गई। पर जब सन्ध्या हो गई और यह आशा न रह गई कि कोई आवेगा, और इस कल्पनासे कि इस निर्जन निस्तब्ध घरमें उसे अकेले ही सारी रात बितानी पड़ेगी, जब उसके शरीरमें बारबार काँटे उठने लगे तभी उसने सुना कि बाहर चरण जोर-जोरसे 'माँ माँ' पुकार रहा है। उस समय उसका अतल जलमें डूबता हुआ मन मानो जमीनपर पैर रखकर खड़ा हो गया।

वह दौड़ी हुई बाहर निकल आई और चरणको गोदमें लेकर और उसके मुँहपर अपना मुँह रखकर इसी बातको जी भरकर अनुभव करने लगी कि मैं अकेली नहीं हूँ।

चरण नौकरके साथ आया था। रातको भोजनादिके बाद कुंजकी नई दूकानमें उसके सोनेकी व्यवस्था की गई। बिछौनेपर लेटकर, चरणको छातीके निकट खींचकर कुसुमने अनेक प्रकारके प्रश्न किये। अन्तमें उसने धीरेसे पूछा—हाँ रे चरन, तेरे बाबूजी क्या करते हैं?

चरण चटपट वहाँसे उठकर चला और अपने कोटके जेबमेंसे वह एक छोटी-सी पोटली निकाल लाया। फिर उसे कुसुमके हाथपर रखकर बोला—माँ, मैं भूल गया था। बाबूजीने यह तुम्हें देनेके लिए दी है।

कुसुमने उस पोटलीको हाथमें लेते ही समझ लिया कि इसमें रुपये हैं।

चरणने कहा—बस, इसे देकर ही बाबूजी चले गये।

कुसुमने व्यग्र होकर पूछा—वह कहाँसे चले गये रे ?

चरणने हाथ उठाकर बतलाया—वहाँसे, उस जगहसे।

"नदीके इस पार तक आये थे ?"

चरणने सिर हिलाकर कहा—हाँ, आये तो थे।

कुसुमने फिर कोई प्रश्न न किया। वह मारे अभिमानके स्तब्ध होकर पड़ रही। उस दिन जब वे दोपहरके समय बिना एक बूँद जल पिये चरणको लेकर चले गये, और उसने भी मारे गुस्सेके दोबारा अनुरोध नहीं किया, बल्कि ऊपरसे कुछ कड़ी बातें सुना दीं, तबसे कभी एक दिन भी वे दिखाई नहीं दिये। पहले इस रास्तेसे आने-जानेके उनके सैकड़ों काम रहा करते थे, पर अब इधर आनेका कोई प्रयोजन ही नहीं रहा। उनका न रहा हो, पर अन्तर्यामी जानते हैं कि वह किस प्रकार एक एक करके अपने दिन बिताती है और सबेरेसे राह देखते देखते सन्ध्या कर देती है। रास्तेमें किसी आती-जाती बैलगाड़ीका शब्द सुनते ही उसकी नसोंका रक्त किस प्रकार तेजीसे दौड़ने लगता है और वह कैसी आशासे आड़में खड़ी होकर टक लगाकर देखा करती है। वे भइयाके ब्याहकी रात नहीं आये और आज आकर भी दरवाजेके बाहरसे चुपचाप लौट गये !

फिर उसे उस दिनकी बात याद आई जिस दिन कुंज कड़ोंकी जोड़ी लौटाने गया था और उनके मुँहसे सुन आया था कि भगवानने उन लोगोंकी चीज उन्हें ही लौटाकर सतर्क कर दिया है।

वह सोचने लगी कि यदि सचमुच ही उनके मनका यही भाव हो गया हो तो ! उसने अपनी ओरसे तो आघात पहुँचानेमें कोई बात उठा नहीं रक्खी है। बार बार प्रत्याख्यान किया है। माँका अपमान करनेमें भी कसर नहीं की है। क्षण-भरके लिए भी उसकी समझमें यह बात किसी प्रकार न आई कि उस दिन मेरी ऐसी दुर्मति किस तरह हो गई थी। जिस सम्बन्धको वह इतने दिनोंसे प्राणपणसे अस्वीकृत करती आई है, उसीके विरुद्ध आज उसका सारा शरीर और मन विद्रोह कर उठा। वह बहुत ही क्रुद्ध होकर तर्क करने लगी—क्यों, यह क्या मेरे हाथसे गढ़ा हुआ सम्बन्ध है, जो मेरे 'नहीं नहीं' कहनेसे उड़ जायगा ! और यदि उड़ जाय, यदि सचमुच वे मेरे स्वामी नहीं हैं, तो फिर मेरे हृदयकी सारी भक्ति, अन्तरकी सारी कामना, क्यों उन्हींके ऊपर इस प्रकार एकाग्र हो उठी है ? केवल एक दिनकी तुच्छ सांसारिक बातचीतसे, एक ही बारकी अति-

शय क्षुद्र सेवासे, उनके लिए हृदयमें इतना प्रेम कहाँसे आ गया ? वह बार बार जोर देकर कहने लगी—मैं चाहे जैसी शपथ खाकर कह सकती हूँ कि वह कभी सत्य नहीं है, मेरी बदनामीकी बात किसी तरह सच्ची नहीं हो सकती। माँ केवल अपमानकी ज्वालाके मारे आपेसे बाहर होकर यह अमिट कलंक मेरे सिर मढ़ गई हैं।

कुछ देर तक चुप रहनेके उपरान्त वह फिर मन ही मन कहने लगी—माँ मर गई हैं, सच-झूठ प्रमाणित होनेका अब कोई मार्ग नहीं रहा। पर मैं चाहे कुछ भी क्यों न कहूँ, पर वे स्वयं भी तो जानते हैं कि मैं ही उनकी धर्मपत्नी हूँ। तो फिर वे क्यों मेरी यह अनुचित ढिठाई बरदाश्त करते हैं ? क्यों जोर करके नहीं आते ? वे क्यों मेरा सारा दर्प पैरोंसे कुचल कर जहाँ इच्छा हो वहाँ खींचकर नहीं ले जाते ? मैं अस्वीकार या प्रतिकार करनेवाली कौन हूँ ? और, उस अस्वीकृतिको मान लेनेका अधिकार उन्हें भी तो नहीं है।

सहसा उसका सारा शरीर काँप उठा जिसके कारण उसके साथ लिपट कर सोये हुए चरणकी तन्द्रा भंग हो गई। उसने कहा—क्या है माँ ?

कुसुमने उसे कलेजेसे लगाकर धीरेसे कहा—बेटा चरण, बतला तो, तू किसे ज़्यादा प्यार करता है ? बाबूजीको या मुझको ?

चरणने तुरन्त उत्तर दिया—तुमको।

" बड़ा होनेपर अपनी माँको खानेको देगा चरण ? "

" हाँ, दूँगा। "

" जब तेरे बाबूजी मुझे निकाल देंगे, तब तू अपनी माँको आश्रय देगा ? "

" हाँ, दूँगा। "

चरण यह तो नहीं समझता था कि माँको किस अवस्थामें क्या देना होगा, पर, इतना अवश्य समझ गया था कि किसी भी अवस्थामें अपनी नई माँके लिए कुछ भी अदेय नहीं हो सकता।

कुसुमकी आँखोंसे आँसुओंकी बूँदें निकल निकलकर बहने लगीं। जब चरण सो गया, तब वह आँसू पोंछकर उसकी ओर देखती हुई मन ही मन कहने लगी—मेरे लिए डर क्या है ! मेरा लड़का है, चाहे और कोई मुझे आश्रय न दे, यह तो देगा ही।

दूसरे दिन सूर्योदयके कुछ ही उपरान्त जब माता और पुत्र नदीमें स्नान करके

घर लौटे तब उन्होंने देखा कि एक प्रौढा स्त्री आँगनमें खड़ी हुई अनेक प्रकारके प्रश्न कर रही है और कुंजनाथ विनयपूर्वक यथायोग्य उत्तर दे रहा है। वह कुंजनाथकी सास थी। वह केवल कुतूहलवश ही अपने दामादका घर-बार देखने नहीं आई थी बल्कि स्वयं अपनी आँखोंसे देखकर इस बातका निर्णय करने आई थी कि अपने एक-मात्र कन्या-रत्नको किसी दिन यहाँ भेजना निरापद है या नहीं।

सहसा कुसुमको आते देखकर वह अवाक् होकर उसके मुँहकी ओर देखने लगी। यौवन-श्री उसके गीले वस्त्रोंमें नहीं समाती थी। शरीरका कंचनका-सा रंग गीली धोतीमेंसे फूटकर बाहर निकला पड़ता था। उसके गीले बाल सारी पीठपरसे होते हुए घुटनोंको स्पर्श करते झूल रहे थे। बाईं ओर उसकी कमरपर एक भरा हुआ घड़ा था और दाहिने हाथसे वह चरणका बायाँ हाथ पकड़े हुए थी। चरणके हाथमें भी पानीसे भरा हुआ एक छोटा लोटा था। संसारमें ऐसी मातृमूर्ति शायद ही कभी दिखाई पड़ती है और जब पड़ती है तब अवाक् होकर ही उसकी ओर देखते रह जाना पड़ता है। कुंजनाथ भी टक लगाकर उसकी ओर देख रहा है, यह देखकर कुसुमको बहुत लज्जा हुई। वह जल्दीसे वहाँसे जा ही रही थी कि कुंजकी सास बोल उठी—यही कुसुम है शायद?

कुंजने प्रसन्न होकर कहा—हाँ माँ, यह मेरी बहन है।

सारा आँगन गोबरसे लिपा हुआ था, इसीलिए, कुसुमने पानीका घड़ा वहीं रखकर उसे प्रणाम किया। माँकी देखादेखी चरणने भी प्रणाम किया।

वह बोली—मुझे याद आता है कि मैंने इस लड़केको कहीं देखा है। लड़केने तुरन्त ही अपना परिचय दिया—मैं चरण हूँ। मैं दादीके साथ तुम्हारे घर मामाजीकी बहू देखनेके लिए गया था।

कुसुमने स्नेहपूर्वक हँसते हुए चरणको अपने पास खींच लिया और कहा—नहीं बेटा, ऐसे नहीं कहना होता। ऐसे कहना होता है कि मामीको देखने गया था।

कुंजकी सासने कहा—शायद वृन्दा वैष्णवका लड़का है? इस बित्ते-भरके लड़केकी बातें तो सुनो!

दारुण विस्मयके कारण कुसुमका हँसता हुआ चेहरा तुरन्त काला पड़ गया। उसने एक बार अपने भाईके मुँहकी ओर देखा, एक बार उस अतिशय

अशिक्षिता अप्रियवादिनीके मुँहकी ओर देखा और तब घड़ा उठाकर और लड़केका हाथ पकड़कर वह रसोईघरमें चली गई। अकस्मात् यह क्या हो गया!

कुंज निर्बोध है, तथापि सासकी ऐसी रुखाईकी बात उसके कानोंमें भी खटकी। विशेषतः इस कारण कि वह अपनी बहनके स्वभावसे भली भाँति परिचित है। उसका चेहरा देखकर उसने अनुमान कर लिया कि इस समय उसके मनका भाव कैसा हो गया है। वह मन ही मन उद्विग्न हो उठा।

उसने समझ लिया कि अब कुसुम इसे किसी तरह नहीं देख सकेगी। उसकी सास भी मन ही मन लज्जित हुई। ठीक इस तरह वह भी नहीं कहना चाहती थी। केवल शिक्षा और अभ्यासके दोषसे ही उसके मुँहसे निकल गया था।

रसोईघरमेंसे कुसुमने गोकुलकी विधवाकी ओर भली भाँति देखा। अवस्था अभी पूरे चालीस वर्षकी नहीं हुई है। उसकी धोती तो बिना किनारीकी सादी ही है, परन्तु गलेमें सोनेका हार, कानोंमें बालियाँ, बाँहोंमें अनन्त और बाजूबन्द हैं। अपनी साससे तुलना करनेपर उसे घृणा-सी हो आई।

उसकी कुंजसे बातें हो रही थीं। क्या बातें थीं, सो न सुन सकनेपर भी उसने यह अच्छी तरह समझ लिया कि मेरे ही सम्बन्धमें हो रही हैं।

कुंजकी सास पान और सुरती कुछ अधिक खाती है। यह काम सबेरेसे ही शुरू होकर सारे दिन दनादन चलने लगा। स्नानके उपरान्त उसने तिलक-सेवाका* अनुष्ठान अच्छी तरह सम्पन्न किया। इन दोनों अनुष्ठानोंकी सारी सामग्री वह अपने साथ ही लेती आई है। यहाँ तक कि मुँह देखनेकी छोटी आरसी तक नहीं भूली है।

कुसुम नित्य-पूजा समाप्त करके रसोई करने बैठी थी कि वह भी पास आ बैठी और इधर उधर देखकर कुछ हँसकर बोली—क्यों जी, न तो तुम्हारे गलेमें माला है और न तुमने तिलक-सेवा ही की है। तुम कैसी वैष्णवकी लड़की हो बेटी?

कुसुमने संक्षेपमें उत्तर दिया—मैं यह सब नहीं करती।

"'नहीं' कहनेसे कैसे काम चलेगा? तब तो कोई तुम्हारे हाथका पानी भी न पियेगा!"

कुसुमने मुड़कर पूछा—तो फिर मैं आपके लिए रसोईका अलग इन्तजाम कर दूँ?

---

* वैष्णवोंकी सारे अंगोंको चन्दन-तिलकसे चर्चित करनेकी क्रिया।

"मैं तो घरकी ठहरी, तुम्हारे हाथका खा ही लूँगी। पर दूसरा कोई तो नहीं खायगा ?"

कुसुमने कोई उत्तर नहीं दिया।

इतनेमें कुंजने आकर पूछा—कुसुम, चरण कब आया ?

कुसुम—कल सन्ध्याको।

कुंजकी सासने कहा—अभी अभी तो सुना है कि अब वृन्दा वैष्णव इसे नहीं ग्रहण करेगा, पर लड़केको तो नौकरके साथ भेज दिया है !

कुंजने चकित होकर पूछा—यह बात तुमने कहाँ सुनी माँ ?

सासने गम्भीर होकर कहा—मेरे और भी चार कान और चार आँखें हैं। बेटा, जो कुछ सुना है बिलकुल ठीक सुना है। उन लोगोंने इतना कहा-सुना, समझाया, दौड़-धूप की, फिर भी तुम्हारी बहन राजी नहीं हुई। लोग तो दस तरहकी बातें कहेंगे ही। मुहल्लेमें कई जवान लड़के हैं। तुम्हारी बहनकी यह चढ़ती अवस्था है, ऐसा बढ़िया कंचन-सा रंग है। लोग कहते हैं—मन और मोती एक ही जैसा होता है। पैर फिसलनेमें, मन डिगनेमें, कितनी देर लगती है बेटा ?

कुंजने समर्थन करते हुए कहा—हाँ, ठीक ही कहती हो माँ।

कुसुमने सहसा सिर उठाकर और आँखें तरेरकर कहा—भइया, तुम यहाँ बैठे क्या कर रहे हो ? उठ जाओ यहाँसे।

कुंज तो सहमकर वहाँसे उठने लगा, पर उसकी सासने गरम होकर कहा—भइयाकी ढँकनेसे तो और लोगोंकी आँखोंपर परदा पड़ नहीं जायगा बेटी! अभी तुम नदीसे स्नान करके, सिरके बाल खोले, गीली धोतीसे घर आई हो, अब तुम्हारे भाई ही छातीपर हाथ रखकर कहें कि तुम्हें इस अवस्थामें देखकर मुनियोंका मन भी डोल जाता है या नहीं ?

कुसुमने ज़ोरसे चिल्लाकर कहा—तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ भइया, खड़े खड़े सुनते मत रहो,—चले जाओ यहाँसे !

उसका यह चिल्लाना और मुँह-आँखें देखकर कुंज घबराकर भागा। कुसुम चूल्हेपरसे तरकारीकी कड़ाही धमसे नीचे पटककर जल्दीसे रसोईघरके बाहर हो गई।

कुंजकी सासका मुँह स्याह पड़ गया, वह वहीं बैठी रही। उसका खयाल था कि मुझसे बढ़कर कलह-वीर संसारमें और कोई नहीं है। उसने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि यह निस्सहाय और गरीब लड़की भी मुझे इस प्रकार हतप्रभ करके चली जायगी।

आठवाँ परिच्छेद

क्यों, सो तो कुसुम नहीं समझ सकी, पर इस बातमें उसे सन्देह नहीं रहा कि उस दिन भाईकी सास झगड़ा करनेका संकल्प करके ही आई थी। इसके सिवा उसके कहनेका मतलब यही जान पड़ा कि मानो वृन्दावनकी ग्रहण करने और ले जानेकी इच्छा रहनेपर भी कुसुम किसी विशेष और गूढ कारणसे ही नहीं गई है। वह गूढ़ कारण संभवतः क्या है, यह उससे तो छिपा है ही नहीं, वह तो जानती ही है, स्वयं वृन्दावनने भी उसका आभास पाकर ले जानेका प्रस्ताव परित्यक्त कर दिया है। इस संकेतने ही कुसुमको इतना आपेसे बाहर कर दिया था। पर साथ ही वह यह भी समझ गई थी कि मेरा इस प्रकार रसोईघरमेंसे उठकर चला आना अच्छा नहीं हुआ।

कुंजकी सासने सारे दिन भोजन नहीं किया, अन्तमें बहुत-कुछ मनाने-थपाने और खुशामद करनेपर रातको किया। उसकी मान-रक्षाके लिए कुंज दिन-भर अपनी बहनको बुरा-भला कहता रहा, पर गुस्सा और मान-अभिमान समाप्त हो जानेपर भी उसने बहनसे एक बार भी भोजन करनेके लिए नहीं कहा। दूसरे दिन सबेरे जब कुंजकी सास अपने घर जाने लगी, तब कुसुमने प्रणाम किया और उसके पैरोंकी धूलि सिरपर चढ़ाकर वह उसके सामने खड़ी हो गई। पर कुंजकी सास बोली नहीं। बल्कि उसने अपने दामादको लक्ष्य करके कहा—तुम्हें अपना घर-बार जमीन-जायदाद देखनी चाहिए। यहाँ बहनके पास बैठे रहनेसे तो काम नहीं चलनेका!

कुसुमकी ओरसे इस बातका कोई उत्तर नहीं था, इसीलिए वह चुपचाप सिर झुकाकर सुन गई थी। सच तो है! भला भाई-यहाँ, वहाँ दोनों जगहका काम कैसे सँभालेगा?

इस बातको प्रायः दो मास बीत गये। इस बीचमें ही कुंजको उसकी सासने मानो बिलकुल ही तोड़-फोड़कर नये सिरेसे गढ़ डाला है। अब वह प्रायः यहाँ नहीं रहता। और जब रहता है, तब अच्छी तरह बात नहीं करता। कुसुम सोचती है कि ऐसा आदमी एकदम ऐसा कैसे हो गया! यदि वह जानती कि संसारमें ऐसे ही लोग ऐसे हो जाते हैं, इतना परिवर्तन कुंज सरीखे सरल और अल्पबुद्धि लोगोंमें ही हो सकता है, तो दुःख उसे शायद इतना अधिक असह्य

न होता। भाई-बहनमें वह स्नेह नहीं रहा है, अब लड़ाई झगड़ा भी नहीं होता। लड़ने-झगड़नेकी न तो कुसुमकी प्रवृत्ति ही होती है और न साहस ही। उस दिन घरमें केवल एक रातके लिए अकेले रहनेमें वह भयके मारे व्याकुल हो गई थी, पर अब न जाने कितनी रातें अकेले ही काट देनी पड़ती हैं। अवश्य ही दुःखमें पड़नेके कारण उसका भय भी मिट गया है।

इन सब दुःखोंकी भी वह इतनी परवा नहीं करती, किन्तु, उसके मनमें उठते-बैठते यह बात काँटेकी तरह चुभती है कि मैं भाईकी गलग्रह बन गई हूँ। रह रहकर वह सोचती है कि यदि अब मैं एकाएक मर जाऊँ तो भी शायद भाईकी आँखमेंसे एक बूँद आँसू न निकलेगा। भविष्यमें होनेवाली भाईकी इस निष्ठुर त्रुटिको तब वह अपनी आँखोंके जलसे धोनेके लिए घरके किवाड़ बन्द करके बैठ जाती और फिर दिन-भर नहीं खोलती। जब जी बहुत भारी हो जाता, तब चरणकी बातें सोचने लगती। केवल वही जब तब 'माँ माँ' करता हुआ दौड़ा आता और किसी प्रकार उसे छोड़कर जाना नहीं चाहता।

उसीके हाथसे एक दिन उसने सारे संकोचसे छुट्टी लेकर वृन्दावनको एक पत्र भेजा था। उसमें जो संकेत था, वृन्दावनके निकट वह बिल्कुल निष्फल हुआ। कारण, जिस प्रत्युत्तरकी कुसुम आशा और प्रतीक्षा कर रही थी, वह तो आता ही क्या, कागजपर लिखा हुआ दो सतरका जवाब भी न आया। आये केवल कुछ रुपये, और विवश होकर, निरुपाय होकर कुसुमको वे ले लेने पड़े।

कल रातको कुंज घर आया है। आज सबेरे ही लौट जानेके लिए तैयार होकर बाहर आते ही कुसुम उसके पास आकर खड़ी हो गई। आजकल न तो वह किसी बातके लिए भाईसे अनुरोध करती है और न किसी बातके लिए उसे मना ही करती है। न जाने आज क्या हुआ कि वह कोमल स्वरसे कह बैठी—भइया, क्या इतनी जल्दी चले जाओगे? रसोई बननेमें देर नहीं होगी। दो कौर खाकर ही जाओ न?

कुंजने मुँह फेरकर और आकृति बिगाड़कर कहा—जो सोचा था वही हुआ, मुझे चलते समय टोक दिया!

लाचारीमें पड़कर कुसुमने बहुत-कुछ सहन करना सीख लिया था, पर इस अकारण मुँह बनानेने उसके सारे शरीरमें मानो आग लगा दी। उत्तरमें उसने उसी प्रकार मुँह तो नहीं बिगाड़ा, पर बहुत ही कठोर स्वरमें कहा—डरो मत

भइया, तुम मरोगे नहीं। नहीं तो आज तक मैंने तुम्हें चलते समय जितने बार टोका है, उतनेमें, यदि आदमी होते तो कभीके मर गये होते!

"मैं आदमी नहीं हूँ?"

"नहीं। बिल्ली-कुत्ते भी नहीं हो—वे तुम्हारी अपेक्षा अच्छे होते हैं,—ऐसी नमक हरामी नहीं करते।" यह कहकर वह जल्दीसे कोठरीमें चली गई और जोरसे द्वार बन्द कर लिया। कुंज कुछ समय मूढ़के समान खड़ा रहकर धीरे धीरे चला गया।

बाहरका दरवाजा वैसा ही खुला पड़ा रहा। कोई घण्टे-भर बाद उसी खुले हुए दरवाजेसे वृन्दावन चुपचाप प्रवेश करके चकित हो गये।

कुंजकी कोठरीमें ताला बन्द, कुसुमकी कोठरी अन्दरसे बन्द और रसोईघर खुला हुआ। उसके भीतर झाँकते ही एक कुत्ता खाना छोड़कर 'केऊँ केऊँ' करता, लज्जा और आक्षेप प्रकट करता हुआ जल्दीसे बाहर हो गया।

रसोई कुछ तो हो चुकी थी और कुछ बाकी थी—चूल्हा ठण्ढा हो गया था। चरण नौकरके साथ पैदल आ रहा था, इसलिए कुछ पिछड़ गया था। कोई दस मिनट बाद वह जोर जोरसे माँ माँ चिल्लाता हुआ और पास-पड़ोसके लोगोंको अपने आनेका समाचार देता हुआ अन्दर आ पहुँचा। सहसा लड़केकी पुकारसे कुसुमके दरवाजा खोलकर बाहर होते ही आँसुओंसे भरी हुई उसकी आँखोंकी श्रान्त विपन्न दृष्टि सबसे पहले वृन्दावनके विस्मय-विह्वल जिज्ञासु नेत्रोंपर जा पड़ी।

न तो कुसुमने आशा ही की थी और न कल्पना ही कि ये इस प्रकार अकस्मात् आ जायँगे। एक कदम पीछे हटकर उसने आँचलसे माथा ढका और कोठरीमेंसे एक आसन लाकर बिछा दिया कि इतनेमें चरण दौड़कर आया और पैरोंसे लिपट गया। कुसुमने गोदमें उठाकर उसका मुँह चूमा और वह हटकर एक खम्भेकी ओटमें खड़ी हो गई।

माँके मुँहकी ओर देखकर चरणने रुआसे स्वरमें कहा—बाबूजी, माँ तो रो रही है।

वृन्दावन यह जान गये थे। पूछा—क्या बात है? किस लिए बुला भेजा था?

कुसुम उस समय तक भी अपने आपको सँभाल नहीं सकी थी, इसलिए, उत्तर न दे सकी।

वृन्दावनने फिर पूछा—चिट्ठीमें लिखा था कि आकर भइयासे भेट कर लेना। वे कहाँ हैं ?

कुसुमने रुँधे हुए गलेसे कहा—मर गये !

“ अरे, मर गये ? क्या हुआ था ?

उनके गम्भीर स्वरमें जो व्यंग्य छिपा हुआ था, वह इस दुःखके समय कुसुमको बहुत लगा। वह अपनी अवस्था भूलकर जल उठी और बोली—देखो, हँसी मत करो। मेरी देह जल-भुन रही है। इस समय यह सब अच्छा नहीं लगता। तुम्हें बुला भेजा था, इसलिए तुम उसका बदला इस तरह चुकाने आये हो ?

यह कहकर उसने रो दिया।

उसका दबा हुआ रोना वृन्दावनने साफ सुन लिया, फिर भी वह उन्हें तनिक भी विचलित न कर सका। थोड़ी देर बाद उन्होंने पूछा—मुझे किस लिए बुलवा भेजा है ?

कुसुमने आँसू पोंछते हुए भारी स्वरसे कहा—आओ ही नहीं, तो मैं कहूँ किससे ? पहले तो तुम अपने कामसे भी इधर आया-जाया करते थे, पर अब तो भूलकर भी इस रास्ते पैर नहीं रखते।

वृन्दावनने कहा—भूल नहीं सकता, इसी लिए नहीं रख सकता। भूल सकता तो शायद आता। खैर, इन सब बातोंको जाने दो, कहो क्या बात है ?

कुसुम—इस तरह ताने मारनेसे कहीं कहा जाता है !

वृन्दावन हँसे और शान्त भावसे बोले—ताने नहीं मारता, भले भावसे ही जानना चाहता हूँ। अच्छा तो जिस तरह कहनेमें सुभीता हो, तुम उसी तरह कहो।

कुसुमने कहा—मैं बहुत दिनोंसे अपेक्षा कर रही हूँ कि तुमसे एक बात पूछूँगी,—भला यह बात किसने फैलाई थी कि मैं सिरके बाल खोले राह-बाटमें अपना रूप दिखाती फिरती हूँ ?

यह प्रश्न सुनकर वृन्दावन कुछ देर तक अवाक् हो रहे और फिर बोले—मैंने। उसके बाद ?

“ मैंने यह नहीं कहा कि तुमने यह बात फैलाई थी, ऐसा कभी सोचा भी नहीं। पर—”

वृन्दावन बात समाप्त होनेके पहले ही बोल उठे—पर उस दिन तो कहा भी था और सोचा भी था। मैं बड़ा आदमी होकर उस दिन तुम्हें सतानेके लिए ही अपनी माँ और भाइयोंको लेकर तुम्हारे यहाँ खाने आया था,—उस दिन जो कर सका, आज नहीं कर सकता? उस अपराधका दण्ड मेरी माँको देनेमें तुम भी नहीं चूकीं!

कुसुमने बहुत ही व्यथित और लज्जित होकर धीरे धीरे कहा—मुझसे बहुत ही बड़ा अपराध हो गया। उस समय मैं तुम्हें पहचान नहीं सकी थी।

"अब पहचान लिया?"

कुसुम चुप हो रही। वृन्दावन भी कुछ देरतक चुप रहनेके उपरान्त सहसा बोल उठे—अच्छी बात है। अभी एक कुत्ता तुम्हारे रसोईघरमें घुसकर सारे बरतन-भाँडे और सारी रसोई खराब कर गया है!

कुसुमने कुछ भी उद्वेग या चंचलता प्रकट न करके बहुत ही शान्त भावसे उत्तर दिया—कर जाने दो। मैं तो खाऊँगी नहीं,—पहले मालूम होता तो रसोई भी नहीं करती।

"शायद आज एकादशी* है?"

कुसुमने सिर झुकाकर कहा—मालूम नहीं। वह सब मैं नहीं करती।

"एकादशी नहीं करतीं?"

कुसुम उसी प्रकार सिर झुकाये हुए निरुत्तर खड़ी रही।

वृन्दावनने सन्दिग्ध स्वरसे कहा—आगे तो करती थीं। अब एकाएक क्यों छोड़ दी?

बार बार आघात पाकर कुसुम अधीर हो उठी थी। उसने खिसिया कर कहा—नहीं करती, मेरी खुशी। कोई जान-बूझकर अपना सर्वनाश नहीं करना चाहता, इसी लिए नहीं करती। भइयाका व्यवहार असह्य हो गया है, पर सच कहती हूँ, तुम्हारे व्यवहारसे तो जी चाहता है कि गलेमें फाँसी लगाकर मर जाऊँ।

वृन्दावनने कहा—नहीं, ऐसा मत करना। मेरे व्यवहारका विचार फिर कभी हो जायगा, न होगा, तो भी कोई हानि नहीं। पर भइयाका व्यवहार क्यों असह्य हो गया?

---

* बंगालमें विधवायें ही एकादशी करती हैं, सधवायें नहीं।

कुसुमने बहुत ही उत्तेजित होकर उत्तर दिया—उसकी बड़ी भारी कहानी है। उसे सुनानेका धैर्य मुझमें नहीं है। सार यह है कि अब वे अपना घर-बार छोड़कर मेरी फिकर नहीं कर सकते। उनकी सासका हुकम नहीं है। मुझे खाने-पहननेको देना भी बन्द कर दिया है। यदि चरण अपनी माका भार अपने ऊपर न ले लेता तो अबसे बहुत पहले ही मैं सूखकर मर गई होती। इस समय मैं—इतना कहकर वह सहसा रुक गई और सोचने लगी कि और कुछ कहना उचित है या नहीं; और तब फिर बोली—अब मैं पूर्णरूपसे तुम्हारी गलग्रह हूँ। इसीलिए यहाँ एक दिन,—एक क्षण-भर भी नहीं रहना चाहती।

वृन्दावनने हँसते हुए पूछा—इसीलिए नहीं रहना चाहतीं?

कुसुमने एक बार आँखें उठाकर फिर नीचा सिर कर लिया। इस सहज सहास्य प्रश्नमें जो तीक्ष्ण ताना था, उसने उसे गहरी चोट पहुँचाई।

वृन्दावनने कहा—चरण अपनी माँका भार अवश्य लेगा, पर तुम कहाँ रहना चाहती हो?

कुसुमने उसी प्रकार सिर झुकाये हुए कहा—मैं कैसे जानूँ? वे ही जानें।

"वे ही कौन?—मैं?"

कुसुमने मौन रहकर ही मानो प्रकट किया—हाँ।

वृन्दावनने कहा—सो नहीं हो सकता। मैं तुम्हारी किसी बातमें हाथ नहीं डाल सकता। केवल माँ डाल सकती हैं। उनके साथ तुमने चाहे जो आचरण किया हो, फिर भी तुम चरणका हाथ पकड़कर उनके पास चली जाओ,—उपाय वे अवश्य कर देंगी।—पर, तुम्हारे भाई?

कुसुमकी आँखोंसे आँसू झर पड़े। उसने उन्हें पोंछते हुए कहा—मैंने कहा तो कि भइया मर गये हैं। पर यह तो बतलाओ कि मैं किस प्रकार दिनके समय पैदल चलकर भिक्षुककी भाँति तुम्हारे गाँवमें जाऊँगी?

वृन्दावनने कहा—यह तो मैं नहीं जानता, पर जा सकतीं, तो अच्छा होता। इसके सिवा और कोई सीधा रास्ता मुझे नहीं दिखाई देता।

कुसुमने कुछ देरतक चुप रहनेके उपरान्त कहा—मैं नहीं जाऊँगी।

"तुम्हारी खुशी।"

बहुत ही संक्षिप्त और सीधा सादा उत्तर था। इसमें कोई छिपा हुआ अर्थ या अस्पष्टता नहीं थी। अब कुसुम सचमुच ही डर गई।

थोड़ी देर तक सिर उठाये वह इस बातकी प्रतीक्षा करती रही कि वृन्दावन और कुछ कहते हैं या नहीं। इसके उपरान्त उसने बहुत ही नम्र और कुण्ठित भावसे कहा—पर अब यहाँ भी तो मेरे खड़े रहनेके लिए कोई स्थान नहीं है। मैं भइयाको भी दोष नहीं देना चाहती; क्योंकि, जो अपना अनिष्ट करके दूसरोंका भला नहीं करना चाहता; उसे दोष नहीं दिया जा सकता। पर तुम तो मुझे इस प्रकार झाड़कर नहीं फेंक दे सकते?

वृन्दावन कोई उत्तर न देकर उठ खड़े हुए और बोले—अब देर हो रही है। चरण, तू यहाँ रहेगा या चलेगा? रहेगा? अच्छा रह।—और तुम्हारी इच्छा हो तो आना। मेरा विश्वास है कि यदि तुम चरणका हाथ पकड़कर माँके सामने जा खड़ी होतीं, तो तुम्हारा कोई बहुत बड़ा अपमान न होता। खैर, अब मैं चलता हूँ। यह कहकर ज्यों ही वृन्दावनने पैर बढ़ाया, त्यों ही सहसा कुसुमने चरणको गोदसे उतार दिया और सीधे खड़े होकर कहा—आज मैं सब समझ गई। अपने इतने बड़े दुःखकी बात मुँह खोलकर कहनेपर भी जब तुमने खड़े होकर कहा 'देर हो रही है, जाता हूँ।' और मैं कितनी निराश्रय हूँ, यह जानते हुए भी जब आश्रय नहीं देना चाहा, तब अब न तो मुझे तुमसे कुछ कहना है और न कोई आशा ही है। फिर भी, मैं एक बात पूछती हूँ। बतलाओ, ठीक ठीक जवाब दोगे?

वृन्दावनने क्षुब्ध और विस्मित होकर सिर उठाकर कहा—दूँगा। मैंने आश्रय देनेसे इन्कार नहीं किया; बल्कि, तुमने ही आश्रय ग्रहण करनेसे बार बार इन्कार किया है।

कुसुमने दृढ़तापूर्वक कहा—झूठ बात है। उस समय मेरे भाग्यके दोषसे न जाने मुझमें क्या दुर्मति आ गई थी कि मैं माँके मनपर आघात करके बहुत बड़ा अपराध कर बैठी। अन्तर्यामी जानते हैं कि उसका दुःख मरनेपर भी दूर न होगा। इसीलिए आज मैं सास, स्वामी, पुत्र, घर-बार सब कुछ रहते हुए भी दूसरेके सिरका भार बनी हुई हूँ, निराश्रय हूँ। आज तक ससुरालका मुँह न देख सकी। मेरा अपराध कितना ही बड़ा क्यों न हो, फिर भी मैं उस घरकी बहू हूँ। तुम मुझसे कैसे कह रहे हो कि मैं भिखारियोंके समान दिनके समय सब लोगोंके सामने पैदल चलकर वहाँ जाऊँ? तुम्हें और कोई सीधा रास्ता दिखाई ही नहीं दिया।—क्यों नहीं दिखाई दिया, जानते हो?—हमलोग बहुत गरीब हैं; मेरी माँने

भीख माँग माँगकर हम दोनों भाई-बहनको पाला-पोसा और बड़ा किया और भइया उञ्छ वृत्ति करके अपने दिन बिताते रहे। इसीलिए तुमने सोचा कि भिखारिणीकी लड़की यदि भिखारिणीके ही समान जायगी तो इसमें कौन-सी बड़ी बात है! पर यह तुम्हारी केवल बड़ी भारी भूल ही नहीं है, असह्य दर्प भी है। मैं यहीं रहकर भूखों मर जाऊँगी, पर तुम्हारे आगे हाथ फैलाकर तुम्हारी हँसी-मज़ाकके लिए सामग्री न जुटाऊँगी।

वृन्दावन अवाक् होकर खड़े सुनते रहे और बोले—जाता हूँ। मुझे अब और कुछ नहीं कहना है।

कुसुमने भी उसी प्रकार उत्तर दिया—जाओ। पर जरा ठहरो। एक बात और है। कृपाकर झूठ न बोलना। मैं पूछती हूँ कि क्या मेरे सम्बन्धमें तुम्हें कोई सन्देह उत्पन्न हुआ है? यदि हुआ हो तो मैं तुम्हारे सामने खड़ी होकर शपथ करती हूँ कि—

वृन्दावन दो-एक कदम आगे बढ़ गये थे, रुककर खड़े हो गये और बहुत ही चकित होकर बीचमें ही रोककर बोले—यह क्या, व्यर्थ शपथ क्यों करती हो? मैंने तुम्हारे सम्बन्धमें कुछ भी नहीं सुना है। फिर उसके आधे खुले हुए मुखकी ओर देखकर मृदु, पर दृढ़ भावसे बोले—इसके सिवा किसीकी चाल-चलन और गति-विधिपर दृष्टि रखना मेरा स्वभाव नहीं है; और यह उचित भी नहीं है। तुम्हारे स्वभाव या चरित्रके सम्बन्धमें मुझे कुछ भी कुतूहल नहीं है और न मैं उसकी कोई आलोचना ही करना चाहता हूँ। मैं सबको ही अच्छा समझता हूँ, तुम्हें भी बुरा नहीं समझता।

यह कहकर वृन्दावन धीरे धीरे बाहर निकल गये।

कुसुम वज्राहतकी भाँति निर्वाक् निस्तब्ध हो रही।

चरणने पूछा—माँ, नदीमें नहाने नहीं चलेगी?

कुसुमने कोई उत्तर नहीं दिया। वह उसे लेकर धीरे धीरे अपनी कोठरीमें जाकर खाटपर पड़ गई और चरणको खूब जोरसे कलेजेपर लगाकर फूट फूटकर रोने लगी।

नवाँ परिच्छेद

बहुत दिन कट गये हैं। माघ समाप्त होकर फागुन आ पहुँचा है। चरण तबसे जो गया, फिर लौटकर नहीं आया। यह बात बहुत ही स्पष्ट है कि उसे आनेसे जबरदस्ती रोका गया। अर्थात् वे लोग अब किसी प्रकारका सम्बन्ध रखना ठीक नहीं समझते। उधरका कोई समाचार भी नहीं और उसने भी इस बातकी प्रतिज्ञा कर ली है कि अब कभी चिट्ठी-पत्री लिखकर अपने आपको अपमानित न करूँगी। भइयाका वही एक ही भाव बना हुआ है। सब प्रकारसे मानो कुसुमके प्राण बाहर निकलनेकी तैयारी करने लगे हैं। इस बीचमें उसने प्रकाश्यरूपसे घरसे बाहर निकलना और पहलेकी भाँति अपनी सखी-सहेलियोंसे मिलना-जुलना भी बिलकुल बन्द कर दिया है। कुछ रात बाकी रहते ही वह नदीमें जाकर स्नान करके जल भर लाती और हाटके दिन गोपालकी माँ उसके लिए हाटसे सब सामग्री ला देती। इस प्रकार बाहरकी सभी बातोंसे अपने आपको बिलकुल अलग कर लेनेसे उसके भारी और लम्बे दिन सचमुच ही बड़े दुःखसे बीत रहे हैं।

कुसुम सूईका काम बहुत अच्छा कर सकती है। जो कोई उसे जितना पारिश्रमिक देता, बड़ी प्रसन्नतासे वह उतना ही ग्रहण कर लेती और यदि कोई उसे पारिश्रमिक देना भूल जाता, तो वह भी भूल जाती। इन्हीं सब बड़े बड़े गुणोंके कारण पास-पड़ोसके लोगोंकी अधिकांश मसहरियाँ, तकियोंके गिलाफ, बिछानेकी चादरें आदि वही सींया करती। आज तीसरे पहर वह अपने घरके सामने एक चटाई बिछाकर एक अर्ध-समाप्त मसहरी समाप्त करने बैठी थी कि उसके हाथकी सुई अचल हो रही। वह उसी पहले दिनकी आद्यन्त घटनाको लेकर अपने मन ही मन खेल करने लगी।

जिस दिन वृन्दावन दल-बल सहित उसके भगोड़े भाईका निमन्त्रण स्वीकृत करने आये थे, और बहुत ही असमंजसमें पड़कर लाज-शरम त्यागकर उसे मुखराकी भाँति पहले पहल अपने स्वामीसे सम्भाषण करना पड़ा था, उस दिनकी सब बातें उसे याद आ गईं। जिस समय दुःख उसके लिए असह्य हो जाया करता, उस समय वह सब काम-धन्धा छोड़कर इसी स्मृतिको लेकर चुपचाप बैठी रहा करती। माता जिस प्रकार अपने एक मात्र शिशुको लेकर

अनेक प्रकारसे हिला-डुलाकर लाड़-चाव करती है, उसी प्रकार वह भी अपनी इस एक-मात्र स्मृतिको अनिर्वचनीय प्रेमके साथ अनेक प्रकार और अनेक ओरसे उलट-पुलटकर असीम तृप्ति अनुभव करती। उस समय मानो उसका सारा दुःख धोया-पोंछा जाता। उस दिनका उन दोनोंका वाद-प्रतिवाद, सब लोगोंकी चोरीसे भोजनका आयोजन, फिर रसोई बनाकर परोसकर पति तथा देवरोंको खिलाना, सासकी सेवा, और सबके अन्तमें सन्ध्या समय अपने लिए वही बचा-खुचा, सूखा और ठण्ढा भोजन।

कुसुमकी आँखोंसे टप टप आँसू पड़ने लगे। स्त्री-शरीर धारण करके इससे अधिक सुखकी बात न तो वह सोच ही सकती और न उसकी कामना ही करती। वह सोचती कि जो स्त्री नित्य यह काम करती है, उसके लिए इस संसारमें और कुछ भी बाकी नहीं रह जाता।

इसके बाद उसे आखिरी दिनकी बात याद आ गई जिस दिन वे समस्त सम्बन्ध तोड़कर चले गये। उस दिन उसने भी उन्हें नहीं रोका; बल्कि, सम्बन्ध तोड़नेमें सहायता ही दी। पर उस समय उसने चरणकी बात नहीं सोची थी। दारुण अभिमानके कारण उस समय उसके मनमें यह बात नहीं आई थी कि इसके साथ ही साथ वह भी मुझसे बिछुड़कर दूर हो जायगा। अब ज्यों ज्यों दिन बीतते हैं यह भय ही उसकी छातीके रक्तको पल पल पर सुखा रहा है कि कहीं ऐसा न हो कि चरण फिर यहाँ आने ही न पावे। यदि सचमुच ही वह न आया, तो मैं पल-भर भी कैसे जीऊँगी? और फिर सबसे बढ़कर दुःखकी बात यह कि जो सन्देह उसके मनमें पहले था और जो इस दुःखके दिनोंमें शायद उसे कुछ ज़ोर पहुँचा सकता, वह अब नहीं रहा है, बिलकुल समाप्त होकर पुछ गया है। अब उसके अन्तरमें रहनेवाला सोया हुआ विश्वास जाग उठा है और दिन-रात उसके कानमें कहा करता है कि सब मिथ्या है। उसकी बाल्यावस्थाका कलंक, बदनामी, कुछ भी सत्य नहीं है। वह हिन्दूकी कन्या है, इसलिए जो पाप है, जो अन्याय है, वह किसी प्रकार भी उसके मनमें प्रवेश नहीं कर सकता। जानमें हो या अनजानमें हो, हिन्दूके घरकी कन्या अपने स्वामीको छोड़कर और किसीसे इतना प्रेम नहीं कर सकती। किसी दूसरेकी सेवा-शुश्रूषा करनेके लिए उसका मन इस प्रकार उन्मत्त हो ही नहीं सकता। यदि वे स्वामी न होते तो भगवान् निश्चय ही उसे सुपथ दिखला

देते,—उसके अन्तरके किसी छोटे-से कोनेमें, थोड़ी-बहुत लज्जाकी बाष्प भी अवशिष्ट रखते।

आज हाटका दिन है। गोपालकी माँ बहुत देरसे हाट गई हुई है। अब आती ही होगी, इसलिए सदर दरवाजा खुला पड़ा है। इतनेमें सहसा बाबू कुंजनाथ साथमें नौकर लिये हुए, विलायती जूतेके मच मच शब्दसे पास-पड़ोसके लोगोंमें ईर्ष्या और विस्मय उत्पन्न करते हुए, घरमें आ पहुँचे। कुसुमने जान तो लिया, पर वह लज्जाके मारे आँसुओंसे भरी हुई आँखें ऊपर न उठा सकी।

कुंजनाथने सीधे बहनके सामने पहुँचकर कहा—तुम्हारे वृन्दावन अब फिरसे ब्याह कर रहे हैं!

कुसुमके कलेजेकी धड़कन बन्द हो गई। वह काठकी पुतलीकी तरह सिर झुकाये बैठी रही।

कुंजने अपना स्वर ऊँचा करके कहा—अब मुझे यही देखना है कि मगरके साथ बैर करके वह किस तरह पानीमें रहते हैं। मुझे देखना है कि नन्द वैष्णव कितने बड़े बापका बेटा है जो हमारी ही जमींदारीमें रहकर हमारा ही अपमान करता है!

कुसुम इन बातोंका कुछ भी मतलब न समझ सकी। उसने बड़े कष्टसे पूछा—नन्द वैष्णव कौन?

कुंजने—हमारी रिआया। हमारे तालाबके किनारे मकान बनाया है। मैं उसके घरमें आग लगा दूँगा। उसी सालेकी लड़की है। इसी फागुनमें ब्याह है। सब ठीकठाक हो गया है। भूता, जरा तमाखू तो चढ़ा!

कुसुमने अब तक आँख नहीं उठाई थी; इसीलिए वह यह नहीं देख सकी थी कि नौकर भी आया है। वह संकुचित होकर बैठ रही।

कुंजने पूछा—क्यों रे भूता! नन्दकी लड़की देखनेमें कैसी है?

भूताने कुछ सोच-विचारकर कहा—अच्छी है।

कुंजने तड़पकर कहा—अच्छी है? हरगिज नहीं। देखनेमें हमारी बहनकी तरह है?—धत्! तूने कभी ऐसा रूप अपनी आँखों देखा है?

भूताके उत्तर देनेसे पहले ही कुसुम उठकर भीतर चली गई।

थोड़ी देर बाद कुंजने तमाखू पीते पीते कुसुमकी कोठरीके सामने आकर कहा—क्यों कुसुम, मैंने पहले ही कहा था न कि वृन्दावन बैरागीके बराबर

नमक-हराम और बदजात कोई दूसरा नहीं है। क्यों, मेरी बात ठीक हुई न? माँ (=सास) कहती हैं कि वेद झूठा हो सकता है, पर मेरे कुंजनाथका कहना कभी झूठ नहीं हो सकता। क्यों भूता, माँ कहा करती हैं न?

कोठरीके अन्दरसे कोई उत्तर तो नहीं आया, पर, एक प्रकारकी अस्पष्ट आवाज़ आने लगी।

न जाने क्या सोचकर कुंज हुक्का रखकर दरवाजा खोलकर कोठरीके अन्दर जा खड़ा हुआ।

कुसुम शय्यापर औंधी पड़ी थी। कुंजनाथ थोड़ी देर तक उसकी ओर देखता रहा। आज बहुत दिनोंके बाद सहसा उसकी आँखोंमें दो बूँद आँसू आ गये। उन्हें हाथसे पोंछकर वह धीरेसे शय्याके एक कोनेपर जा बैठा और अपनी बहनके सिरपर हाथ रखकर आहिस्तेसे बोला—कुसुम, तुम किसी प्रकारका भय मत करो। चाहे जो हो, मैं यह ब्याह कभी न होने दूँगा। तुम देखोगी कि तुम्हारा भइया जो कुछ कहता है, वही करता है या नहीं। पर बहन, तुमने भी तो ससुरालमें किसी प्रकार जाना नहीं चाहा। हम लोगोंने कितनी कोशिशें कीं, तुम्हें कितना समझाया-बुझाया, पर तुमने किसीकी बातपर ध्यान ही नहीं दिया।

अन्तिम बात कहते कहते कुंजका गला भर आया।

अब कुसुम अपने आपको न रोक सकी। फूट फूटकर रोने लगी। वह बहुत दिनोंसे यह आशा छोड़ चुकी थी कि भाईके मनमें मेरे लिए लेशमात्र भी स्नेह अवशिष्ट है।

कुंजकी आँखोंसे ढर ढर आँसू बहने लगे। वह चुपचाप बहनके सिरपर हाथ फेरता हुआ उसे दिलासा देने लगा।

सन्ध्या हो गई। कुंजने फिर एक बार अच्छी तरह कोटके कोनेसे आँसू पोंछकर कहा—बहन, तुम घबराओ मत। मैं कहे जाता हूँ, मैं यह ब्याह किसी तरह भी न होने दूँगा।

अब कुसुम बोली। उसने रोते रोते कहा—नहीं भइया, तुम इसमें हाथ मत डालना।

कुंजने बहुत ही चकित होकर पूछा—क्या कहा? मैं हाथ न डालूँ? हम लोगोंकी आँखोंके सामने ब्याह हो और हम चुपचाप खड़े तमाशा देखते रहें? तू यह कैसी बात कर रही है?

कुसुम—नहीं भइया, तुम इसमें बाधा न देना।

कुंजने बिगड़कर कहा—बाधा न दूँ?—जरूर दूँगा। इसमें तेरा अपमान न हो तो न सही, पर मेरा है। यह मुझसे नहीं सहा जायगा। वह हमारी रिआया है। तू कहती क्या है, लोग सुनेंगे तो हमपर थूकेंगे नहीं?

कुसुम तकिएमें मुँह छिपाकर बार बार सिर हिलाकर कहने लगी—भइया, मैं तुम्हें मना करती हूँ, तुम इसमें हाथ न डालना। हम लोगोंके साथ उन लोगोंका कोई सम्बन्ध नहीं है। लड़-झगड़ करके कलंकको और न बढ़ाना। ब्याह होता है, तो हुआ करे।

कुंजने बहुत बिगड़कर कहा—नहीं।

"नहीं क्यों? मुझे छोड़कर उन्होंने पहले भी तो एक ब्याह किया था। न हो, और एक कर लें। हम लोगोंके लिए दोनों ही बराबर हैं। भइया, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ। व्यर्थ बाधा देकर झगड़ा खड़ा करके मेरा सारा सम्मान नष्ट मत करो। वे जिस बातमें सुखी हों, वही ठीक है।"

कुंज पहले तो केवल 'हूँ' करके थोड़ी देर तक चुपचाप बैठा रहा। फिर कहने लगा—तुझे तो मैं हमेशासे जानता हूँ। एक बार जो निकल गया सो फिर किसके बापकी मजाल है जो तुझसे 'हाँ' कहला सके। तू किसीकी भी बात नहीं सुनेगी, हाँ, तेरी बात सबको सुननी पड़ेगी।

कुसुम चुप रही।

कुंजनाथ फिर कहने लगा—और यों बात झूठ भी नहीं है। जब तू किसी तरह ससुराल जायगी ही नहीं, तब उनकी गृहस्थी चलेगी भी कैसे? अभी तो खैर वृन्दावनकी माँ हैं, पर वे सदा तो जीती रहेंगीं नहीं।

कुसुमने फिर भी कोई उत्तर नहीं दिया।

कुछ देर तक चुप रहनेके उपरान्त कुंज सहसा बोल उठा—अच्छा कुसुम, वह ब्याह करें या न करें, पर यह तो बतला कि तू इतना रोती क्यों है?

भला कुसुमके पास इसका क्या उत्तर था?

अँधेरेमें कुंजनाथ देख नहीं पाया, कुसुमके आँसू कम हो गये थे। पर इस प्रश्नसे वे फिर प्रबल वेगसे बहने लगे।

कुंजके चले जानेपर उस दिनकी बातें याद करके लज्जा और अनुतापके कारण कुसुम मन ही मन गड़ी जाने लगी। छिः छिः, मर जानेपर भी तो इस

लज्जासे छुटकारा पानेका रास्ता नहीं है।—इसीलिए तो मुझे आश्रय देना उनके वशकी बात नहीं रह गई थी, अथच मैंने कितनी खुशामद की थी। उधर जिस समय नव-विवाहकी तैयारियाँ हो रही थीं, उस समय इधर मैंने मुँहसे अभिमानपूर्वक अपने आपको उनके घरकी बहू बतलाया था! जहाँ बिन्दु-भर भी प्रेम नहीं था, वहाँ मैंने पर्वत-प्रमाण अभिमान किया था! भगवन्! इस असह्य दुःखके ऊपर तुमने मेरे मस्तकपर कैसी मर्मान्तक लज्जाका बोझ लाद दिया!

उसका कलेजा चीरकर एक ठण्ढी साँस बाहर निकल पड़ी।—ओह, इसीलिए उन्हें मेरे स्वभाव-चरित्रके सम्बन्धमें नाम-मात्रके लिए भी कुतूहल नहीं! और तिसपर मैं निर्लज्ज शपथ करने चली थी!

दसवाँ परिच्छेद

वृन्दावन उस प्रकृतिके आदमी हैं जो किसी भी अवस्थामें विचलित होकर नाराज होने या बिगड़नेको बहुत ही लज्जाजनक समझते हैं और उससे अत्यन्त घृणा करते हैं। ऐसे लोग हजार नाराज़ होनेपर भी अपने आपको सँभाल सकते हैं। और चाहे कुछ भी क्यों न हो, अपने प्रतिपक्षीसे कहा-सुनी या लड़ाई-झगड़ा करके चार आदमियोंको इकट्ठा नहीं करते। फिर भी उस दिन वे कुसुमके बार बारके निष्ठुर व्यवहार और अन्याय्य अभियोगोंसे उत्तेजित और क्रुद्ध होकर कई निरर्थक कड़ी बातें कह आये, इससे उनके मनस्तापकी सीमा नहीं रह गई। इसीलिए, दूसरे दिन सबेरे ही चरणको बुलवानेके बहाने उन्होंने एक दासी, एक नौकर और गाड़ी भेजकर सचमुच ही आशा की कि कदाचित् बुद्धिमती कुसुम यह संकेत समझ जायगी और शायद चली भी आयेगी। यदि वह सचमुच आ जाय तो फिर एक दिनके लिए भी उसका क्या उपाय होगा, इस दुरूह प्रश्नकी उन्होंने यह मीमांसा कर ली कि यदि आवेगी, तो घरमें माँ हैं ही, वे सब सँभाल लेंगीं। अपनी माँकी कार्यकुशलतापर उनका अगाध विश्वास है। चाहे जितना बड़ा अवस्था-संकट क्यों न आ पड़े, माँ किसी न किसी उपायसे सब बातें बना लेंगीं और वही काम करेंगीं जिसमें सब ओरसे मंगल हो। इसी विश्वासपर उन्होंने माँसे बिना कुछ कहे-सुने ही गाड़ी भेज दी

थी और आशा, आनन्द, लज्जा तथा भयसे अधीर होकर वे रास्ता देख रहे थे। कमसे कम माँसे क्षमा माँगनेके लिए भी आज वह अवश्य आवेगी।

दोपहरके समय गाड़ी केवल चरणको लेकर लौट आई। वृन्दावन चण्डी-मण्डपके अन्दरसे ही आड़मेंसे देखकर स्तब्ध हो रहे।

इधर कुछ दिनोंसे वृन्दावनकी पाठशालाकी पहलेकी-सी श्रृंखला नहीं रही है। पण्डितजीके दारुण अमनोयोगके कारण बहुतसे छात्रोंने गैरहाजिर रहना शुरू कर दिया है और जो आते हैं उनका सारा दिन पोखरीसे पटिया धो लानेमें ही बीत जाता है। ठाकुरजीकी आरतीके अन्तमें जो प्रसाद खानेको मिला करता है, केवल उसीकी श्रृंखला सुरक्षित है। यह शायद अकृत्रिम भक्तिके ही कारण है—विद्यार्थी उस समय अनुपस्थित रहकर शायद गौरांग महाप्रभुकी अमर्यादा करना पसन्द नहीं करते।

इसी समय वृन्दावनने एक दिन अकस्मात् अपनी पाठशालाकी ओर पूरा पूरा ध्यान देना आरम्भ कर दिया। लड़कोंको पटिया धोकर लानेमें जो छः घण्टेका समय लगा करता था, उसे घटाकर पन्द्रह मिनट कर दिया और इस बातपर भी पूरी पूरी दृष्टि रक्खी कि दिन-भर गायब रहनेके बाद केवल आरतीके समय गौरांग-प्रेमसे आकृष्ट होकर ही वे ठाकुरजीके दालानमें टिड्डियोंके दलकी तरह आकर न भर जाया करें।

कोई दस दिनके बाद एक दिन तीसरे प्रहर वृन्दावनने लड़कोंको पहाड़ा पढ़नेके लिए एक पंक्तिमें खड़ा किया। लड़के जोर जोरसे चिल्लाकर गणित विद्यामें व्युत्पत्ति लाभ करने लगे। इतनेमें एक भले आदमी वहाँ आ पहुँचे। वृन्दावनने चटपट उठकर उन्हें बैठनेके लिए आसन दिया और उनके मुँहकी ओर देखने लगे। वे उन्हें पहचान नहीं सके।

आगन्तुक अवस्थामें उन्हींके समान हैं। वे आसनपर बैठकर हँसते हुए बोले—क्यों भाई, मुझे पहचाना नहीं?

वृन्दावनने कुछ लज्जित होकर कहा—नहीं।

वे बोले—मेरा जो काम है वह मैं बादमें बतलाऊँगा। मामाजीने अपनी चिट्ठीमें तुम्हारी बहुत प्रशंसा की थी। इसीलिए मैंने सोचा कि विदेश जानेसे पहले एक बार तुमसे भेंट कर लूँ। मेरा नाम केशव है।

वृन्दावनने उछलकर अपने बाल्यसखाको गलेसे लगा लिया। वे भूतपूर्व

अँग्रेजी-शिक्षक दुर्गादासबाबूके भानजे थे। उस समय दोनोंमें बहुत अधिक मित्रता थी। दुर्गादासकी स्त्रीकी मृत्यु हो जानेपर केशव चले गये थे। तबसे फिर कभी भेट नहीं हुई। तो भी दोनोंमेंसे कोई किसीको भूला नहीं था और वृन्दावनको अपने मास्टर साहबसे प्रायः ही अपने बाल्य मित्रका समाचार मिल जाया करता था।

पाँच-छह वर्ष हुए, केशव एम०ए० पास करके एक कालिजमें प्रोफेसरी करते हैं। इस समय वे किसी सरकारी कामसे विदेश जा रहे हैं।

कुशल-प्रश्नके उपरान्त केशवने कहा—झूठ बोलना तो दूर रहा, हमारे मामा कभी कोई बात बढ़ाकर भी नहीं कहते। पिछली बार उन्होंने चिट्ठीमें लिखा था कि 'जीवनमें बहुत-से छात्रोंको पढ़ाया है, पर नहीं जानता कि वृन्दावनको छोड़कर और भी कोई यथार्थ रूपमें मनुष्य हुआ है या नहीं।' आज तक अपनी आँखोंसे कोई यथार्थ मनुष्य नहीं देखा था, इसीलिए देश छोड़नेसे पहले मैं एक बार तुमसे भेंट करने चला आया हूँ।

यद्यपि यह बात एक मित्रके मुँहसे निकली थी, तथापि वृन्दावन लज्जासे इतने अभिभूत हो गये कि वे क्या उत्तर दें यह खोजकर भी न पा सके। उन्हें स्वप्नमें भी इस बातका ध्यान नहीं हुआ था कि संसारमें कभी कोई मनुष्य मेरे सम्बन्धमें इतनी अधिक स्तुति करेगा। विशेषतः इस कारण वे और भी हतबुद्धि हो गये कि यह स्तुति सबसे पहले उनके परम पूजनीय शिक्षकके मुँहसे निकलकर प्रचारित हुई है।

केशव यह समझकर बोले—अच्छा भाई, जाने दो। जिस बातसे तुम्हें लज्जा होती है, उसे अब मैं न कहूँगा। केवल मामाजीका मत तुम्हें बतला दिया। अब कामकी बात कहता हूँ। तुमने पाठशाला खोली है। सुना है कि फीस भी बिलकुल नहीं लेते और लड़कोंके लिए किताबों और कपड़ोंतकका प्रबन्ध कर देते हो। यह करनेके लिए मैं भी राजी था, पर छात्र न जुटा सका। अब मुझे यह बतलाओ कि इतने छात्र किस प्रकार एकत्र कर लिये?

वृन्दावन उनकी बात न समझ सके, विस्मित होकर देखते रह गये।

केशवने हँसते हुए कहा—अच्छा लो, अब मैं साफ साफ कहता हूँ, नहीं तो तुम समझ ही न सकोगे। आजकल सभी लोगोंने समझ लिया है कि यदि इस समय देशमें कोई करने योग्य काम है, तो वह सर्वसाधारणके बालकोंको शिक्षा देना

है। शिक्षा देनेके सिवा हम चाहे और जितने काम करें, वे सब व्यर्थ हैं। कमसे कम मेरा तो यही मत है कि लड़कोंको लिखना-पढ़ना सिखा दो, फिर वे अपनी चिन्ता आप ही कर लेंगे। इंजिन तभी चलता है जब उसमें भाप होती है; नहीं तो, इतने बड़े जड़ पदार्थको थोड़ेसे भले आदमी मिलकर केवल अपने शरीरके जोरसे ढकेलकर बाल-भर भी नहीं हिला सकते। खैर, तुम यह सब जानते ही हो, नहीं तो गाँठका पैसा खर्च करके पाठशाला न खोलते। मैंने तो इसी लिए ब्याह तक नहीं किया। तुम्हारी तरह हमारे गाँवमें भी लिखना-पढ़ना सिखानेकी कोई बला नहीं है, इसीलिए पहले एक पाठशाला खोलकर उसीको आगे एक स्कूलका रूप दे देनेकी इच्छा थी। पर वह पाठशाला नहीं चली,—लड़के ही इकट्ठे नहीं हुए। हमारे गाँवके छोटी जातिके लोग ऐसे शैतान हैं कि वे किसी भी तरह अपने लड़कोंको पढ़ने नहीं देना चाहते। मैं अपनी मान-मर्यादा नष्ट करके कुछ दिनों तक ऐसे लोगोंके घर घर घूमा तक था, फिर भी कुछ न हुआ।

वृन्दावनका चेहरा लाल हो आया; फिर भी, उन्होंने शान्त भावसे कहा—छोटी जातिके लोगोंका भाग्य अच्छा था कि उन्होंने बड़े आदमियोंकी पाठशालामें अपने लड़के नहीं भेजे। पर तुम्हारा भी तो भाई, हमारे जैसे छोटे आदमियोंके घर घर घूमकर अपनी मान-मर्यादा नष्ट करना उचित नहीं हुआ?

वृन्दावनकी बातमें जो व्यंग था, वह केशवके हृदयमें पूरी तरह चुभ गया। वे बहुत ही अप्रतिभ होकर बोले—नहीं भाई नहीं, तुमको,—तुम लोगोंकी बात थोड़े ही है! राम राम! मैंने यह नहीं कहा। यह बात नहीं है। तुम जानते हो—

वृन्दावन हँस पड़े। बोले—मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि तुमने हमें नहीं कहा,—हमारे आत्मीय स्वजनोंको कहा है। हम सब लोग जुलाहे, लुहार, ग्वाले, किसान,—करघा चलाते, हल बनाते, ढोर चराते और खेती करते हैं। बढ़िया कपड़े नहीं पहनते, सरकारी आफिसोंके दरवाजों तक नहीं जा सकते, इसीलिए तुम हमें छोटे आदमी कहते हो, किसी अच्छे कामसे भी हम लोगोंके घर आनेमें तुम्हारे जैसे सुशिक्षित और सदाशय लोगोंकी मान-मर्यादा नष्ट हो जाती है।

केशवने सिर झुकाकर कहा—भाई वृन्दावन, मैं बिलकुल सच कहता हूँ, मैंने तुम्हें किसानों और चरवाहोंके दलसे बिलकुल अलग समझकर ही यह बात कह डाली थी। यदि मैं यह जानता कि तुम अपने आपको भी उन्हीं

लोगोंमें मिलाकर नाराज हो जाओगे, तो मैं कभी ऐसी बात मुँहसे न निकालता।

वृन्दावनने कहा—मैं यह भी जानता हूँ। पर केवल तुम्हारे अलग कर देनेसे ही तो मैं अलग नहीं हो सकता भाई। मेरे सात पुरखा इस देशके छोटे लोगोंके साथ ही मिलकर रहे हैं। मैं भी खेतिहर हूँ, मैं भी अपने हाथसे जोता-बोता हूँ। केशव, इसीलिए ही तुम्हारी पाठशालामें लड़के एकत्र नहीं हुए और मेरी पाठशालामें एकत्र हो गये। मैं उस दलमें रहकर ही बड़ा हूँ, उस दलको छोड़कर बड़ा नहीं हूँ। इसी लिए वे लोग निःसंकोच भावसे मेरे पास आये हैं, तुम्हारे पास जानेका उन्हें साहस नहीं हुआ। हम लोग अशिक्षित और दरिद्र हैं। हम लोग अपने मुँहसे अपना अभिमान प्रकट नहीं कर सकते। तुम लोग हमें छोटा आदमी कहकर पुकारते हो और हम चुपचाप स्वीकार भी कर लेते हैं। पर, हमारा अन्तर्यामी स्वीकार नहीं करता। वह तुम लोगोंकी अच्छी बातोंसे भी टससे मस नहीं होता।

केशव लज्जित और क्षुब्ध होकर सिर झुकाये सुनने लगे।

वृन्दावनने कहा—मैं यह जानता हूँ कि इसमें हम लोगोंकी ही सारी हानि है, फिर भी, तुम लोगोंको अपना आत्मीय और शुभाकांक्षी समझनेमें हमें डर लगता है। तुम देखते नहीं, हम लोगोंमें ऊँट वैद्य और पोंगा पण्डित ही पूजा-प्रतिष्ठा पाते हैं,—जिस तरह कि मैंने पाई है। पर तुम्हारे जैसे बड़े बड़े डाक्टरों और प्रोफेसरोंकी भी यहाँ कुछ नहीं चलती। हम लोगोंके हृदयमें भी देवता निवास करते हैं, तुम लोगोंकी यह अश्रद्धाकी करुणा, यह ऊपर बैठकर नीचे भिक्षा देना, उन देवताको चोट पहुँचाता है,—वे मुँह फेर लेते हैं।

अबकी बार केशवने प्रतिवाद करते हुए कहा—परन्तु मुँह फेरना अन्याय है। हम लोग वास्तवमें तुम लोगोंसे घृणा नहीं करते, सचमुच तुम्हारी मंगल-कामना करते हैं। तुम लोगोंको उचित है कि हम लोगोंका पूरा पूरा विश्वास करो। शिक्षाके प्रभावसे हम लोग ज्यादा अच्छी तरह समझ सकते हैं कि किस काममें तुम्हारी भलाई है और किसमें नहीं है। तुम लोग भी अपनी आँखोंसे देखते हो कि हम लोग ही सब बातोंमें उन्नत हैं। ऐसी दशामें तुम्हारा कर्तव्य है कि हम लोगोंकी बातें सुनो।

वृन्दावनने कहा—देखो केशव, अन्तरके देवता क्यों मुँह फेरते हैं, यह तो देवता ही जानें। उस बातको जाने दो। किन्तु, तुम लोग आत्मीयोंके समान हमारी शुभ

कामना नहीं करते, मालिकोंकी भाँति करते हो। इसीलिए तुम लोगोंमेंसे रुपयेमें पन्द्रह आना आदमी वही चाहते हैं जिससे भले आदमियोंके लड़कोंका भला हो और जिससे खेतिहरों आदिके बच्चोंका अधःपतन हो। तुम लोगोंके सम्पर्कमें रहकर लिखना-पढ़ना सीखनेसे किसानका लड़का जब बाबू बन जाता है, तब वह अपने अशिक्षित बाप-दादाको नहीं मानता, श्रद्धा नहीं करता। विद्या सीखनेके इस अन्तिम परिणामकी आशंका हम तुम्हारे आचरणमें ही पाते हैं। केशव, पहले तुम हम लोगोंके,—अर्थात् देशके छोटे लोगोंके, आत्मीय बनना सीखो। उसके बाद उन लोगोंकी मंगल-कामना करो और तब उन लोगोंके बाल-बच्चोंको लिखना-पढ़ना सिखाने आओ। पहले अपने आचार-व्यवहारसे यह दिखला दो कि तुम लिखे-पढ़े भले आदमियोंका कोई स्वतंत्र दल नहीं है, शिक्षित होकर भी तुम देशके अशिक्षित खेतिहरों आदिको निहायत छोटे आदमी नहीं समझते, बल्कि श्रद्धा करते हो, तभी जाकर हम लोगोंको यह विश्वास होगा कि हमारे बाल-बच्चे भी लिख-पढ़कर हमारे ऊपर अश्रद्धा न करेंगे और दल छोड़कर, समाज छोड़कर, जातिगत व्यवसाय-वाणिज्य आदि सब छोड़कर हमसे पृथक् होनेके लिए उन्मुख न हो उठेंगे। जब तक ऐसा नहीं करते हो तब तक जन्म जन्म अविवाहित रहकर चाहे हजार जीवन क्यों न उत्सर्ग कर दो, तुम लोगोंकी पाठशालाओंमें छोटे आदमियोंके लड़के न आवेंगे। छोटे आदमी शिक्षित भले आदमियोंसे डरेंगे, उनका आदर करेंगे, भक्ति भी करेंगे, परन्तु विश्वास कभी नहीं करेंगे और न उनकी बात सुनेंगे। उनके मनसे यह संशय किसी प्रकार दूर न होगा कि तुम लोगोंका भला और उन लोगोंका भला दोनों एक ही नहीं है।

कुछ देर तक चुप रहनेके उपरान्त केशवने कहा—वृन्दावन, जान पड़ता है कि तुम्हारी ही बात ठीक है। परन्तु, मैं पूछता हूँ कि यदि दोनोंमें विश्वासका बन्धन ही न रहे, तो चाहे हम लोग आत्मीयताके हजार प्रयास क्यों न करें, फिर भी तो उनका कोई फल नहीं होगा? जब तक विश्वास न करोगे, तब तक हम किस तरह समझावेंगे कि हम आत्मीय हैं अथवा पराये हैं? इसका क्या उपाय है?

वृन्दावनने कहा—यह तो मैं पहले ही कह चुका हूँ कि अपने आचार-व्यवहारसे यदि हमारे सोलहों आने संस्कारोंको तुम्हारे शिक्षितोंका दल कुसंस्कार बतलाकर छोड़ दे, हमारे निवास-स्थान, हमारी सांसारिक गति-

विधि, जीविकार्जनके उपाय यदि तुम लोगोंसे बिलकुल भिन्न हों, तो हम कभी नहीं समझ सकेंगे कि तुम लोगोंने कल्याणका जो पथ निर्दिष्ट किया है वह वास्तवमें हमारे लिए भी कल्याणकारी होगा। अच्छा केशव, यज्ञोपवीत होनेके बादसे तुम सन्ध्या-वन्दन करते हो?

"नहीं।"

"जूता पहने हुए पानी पीते हो?"

"हाँ, पीता हूँ।"

"मुसलमानके हाथका बनाया हुआ भोजन?"

"कर सकता हूँ। कोई आपत्ति नहीं है।"

तो फिर मैं भी कह सकता हूँ कि छोटे आदमियोंके बीचमें पाठशाला खोलकर उनके बालकोंको शिक्षा देनेका तुम्हारा संकल्प विडम्बना है। बल्कि शायद इससे भी कुछ अधिक है, और वह यदि मैं कह दूँगा, तो तुम नाराज हो जाओगे।"

"धृष्टता?"

"ठीक यही। केशव, केवल इच्छा और हृदय होनेसे ही दूसरोंका भला अथवा देशका कार्य नहीं किया जा सकता। तुम जिसका भला करना चाहते हो उसके साथ रहनेका कष्ट भी तुम्हें सहन करना पड़ेगा। यदि बुद्धि-विवेचना और धर्म कर्ममें तुम इतना अधिक आगे बढ़ जाओ, तो फिर न तो वे तुम्हारी पहुँचमें आ सकेंगे और न तुम उनकी पहुँचमें आ सकोगे। परन्तु, अब और नहीं। सन्ध्या हो रही है। अब जरा पाठशालाका काम कर लूँ।"

"अच्छा करो। मैं कल सबेरे फिर आऊँगा।"

यह कहकर केशव ज्यों ही उठकर खड़े हुए, त्यों ही वृन्दावनने उन्हें भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया और उनके पैरोंकी धूलि लेकर अपने माथेपर लगाई।

देहातमें घर होनेपर भी केशव शहरके आदमी थे। अपने मित्रके इस प्रकारके व्यवहारसे मन ही मन उन्हें बहुत संकोच हुआ। दोनोंके आँगनमें उतरते ही पाठशालाके लड़कोंने जमीनपर सिर टेककर प्रणाम किया।

अपने बाल्य मित्रको द्वारतक पहुँचाकर उन्होंने धीरेसे कहा—मित्र होनेपर भी तुम ब्राह्मण हो, इसीलिए तुम्हें अपनी ओरसे भी प्रणाम करता हूँ और सब बालकोंकी ओरसे भी करता हूँ। समझ गये न?

केशव सलज्ज हास्यसे 'हाँ, समझ गया।' कहकर धीरे धीरे बाहर हो गये।

दूसरे दिन सबेरे ही केशवने हाजिर होकर कहा—भाई वृन्दावन, अब मुझे इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं रह गया कि तुम वास्तवमें मनुष्य हो।

वृन्दावनने हँसते हुए कहा—मुझे भी नहीं रहा है! तब फिर?

केशवने कहा—भाई, मैं तुम्हें उपदेश नहीं देता। मेरा वह अहंकार कल टूट गया। सिर्फ एक मित्रके समान सविनय पूछता हूँ कि भला इस गाँवमें तो तुम अपने पाससे धन व्यय करके और अपना समय नष्ट करके बालकोंको शिक्षा देते हो। पर और भी तो सैकड़ों हजारों गाँव पड़े हैं जहाँ क, ख, ग सिखलानेकी भी कोई व्यवस्था नहीं है। क्या यह काम सरकारको न करना चाहिए?

वृन्दावन हँस पड़े। बोले—तुम्हारा प्रश्न तो बिलकुल लड़कोंके समान हुआ। किसी दोषके कारण यदि राधाको मारने जाओ, तो वह तुरन्त दोनों हाथ उठाकर कहेगा—पण्डितजी, माधवने भी अपराध किया है। मानो माधवका दोष दिखला देनेपर फिर राधाका कोई दोष ही नहीं रह जाता। भाई, पहले हम अपनी इस देशव्यापी मूढ़ताका प्रायश्चित्त कर लें, उसके बाद देखा जायगा कि सरकार अपना कर्तव्य करती है या नहीं। अपना कर्तव्य करनेसे पहले दूसरेके कर्तव्यकी आलोचना करनेसे पाप होता है।

"परन्तु तुम्हारा हमारा सामर्थ्य ही कितना है? इस छोटी-सी पाठशालामें थोड़े-से बालकोंको पढ़ानेसे कितना-सा प्रायश्चित्त होगा?"

वृन्दावनने आश्चर्यपूर्वक थोड़ी देर तक देखते रहकर कहा—नहीं भाई, तुम्हारी यह बात ठीक नहीं है। हमारी पाठशालाका एक भी छात्र यदि वास्तवमें मनुष्य हो जाय, तो उससे इन तीस करोड़ आदमियोंका उद्धार हो सकता है। न्यूटन, फैरेडे, राममोहन और विद्यासागर जैसे लोग ढेरके ढेर तैयार नहीं होते हैं। तुम मुझे आशीर्वाद दो कि मैं मरनेसे पहले इस छोटी-सी पाठशालाके एक बालकको भी वास्तविक मनुष्य बना हुआ देखकर मर सकूँ। एक बात और है। मेरी पाठशालामें एक शर्त्त है। यदि तुम कल सन्ध्याके उपरान्त यहाँ उपस्थित रहते, तो देखते कि नित्य घर जानेसे पहले प्रत्येक बालक इस बातकी प्रतिज्ञा करता है कि मैं बड़ा होनेपर कमसे कम एक दो बालकोंको लिखना पढ़ना अवश्य सिखलाऊँगा। हमारे प्रति पाँच बालकोंमेंसे यदि एक भी बालक बड़ा होनेपर अपनी बाल्यावस्थाकी यह प्रतिज्ञा पूरी कर सका, तो मैंने हिसाब लगाकर

देख लिया है केशव, कि बीस वर्षके उपरान्त इस देशमें एक भी बालक मूर्ख या निरक्षर न रह जायगा।

केशवने ठण्ढी सांस खीचते हुए कहा—ओफ ! कितनी महान् आशा है !

वृन्दावनने कहा—हाँ, तुम यह कह सकते हो। दुर्बल मुहूर्त्तमें कभी कभी मुझे भी इस बातका भय होता है कि यह दुराशा-मात्र है, पर सबल मुहूर्त्तमें ध्यान आता है कि यदि भगवान्‌की कृपा-दृष्टि हो तो आशा पूर्ण होते कितनी देर लगती है !

केशवने कहा—वृन्दावन, मुझे आज ही रातको देश छोड़कर विदेश जाना होगा। ईश्वर ही जाने, हम लोगोंकी भेंट कब होगी। यदि मैं पत्र भेजूँ, तो तुम उसका उत्तर तो दोगे न ?

"यह कौन-सी बड़ी बात है केशव ?"

"बड़ी बात भी कहता हूँ। यदि कभी मित्रकी आवश्यकता हो, तो मुझे स्मरण करोगे ?"

"अवश्य करूँगा।" कहकर वृन्दावनने झुककर केशवके चरणोंकी धूलि माथेपर लगा ली।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

वृन्दावनकी माँ ठाकुरजीके झूलेका उत्सव बहुत धूमधामसे किया करती है। वह कल ही समाप्त हुआ है। बहुत थके हुए होनेके कारण वृन्दावन बहुत दिन चढ़ जानेपर भी सोकर नहीं उठे हैं। माँने कमरेके बाहरसे ही पुकारकर कहा—बेटा वृन्दावन, जल्दी उठकर जरा बाहर तो आ।

माँको इस प्रकार व्याकुल होकर पुकारते हुए सुनकर वृन्दावन चटपट उठ बैठे और पूछने लगे—माँ, क्या है ?

माँ किवाड़ खोलकर अन्दर आ गई और बोली—बेटा, मैं तो पहचानती नहीं। तुम्हारी पाठशालाका कोई विद्यार्थी बाहर बैठा हुआ बहुत रो रहा है। उसके बापको दस्त और कै हो रही है जिससे वह उठ-बैठ नहीं सकता।

वृन्दावन चटपट निकलकर बाहर आ पहुँचे। उन्हें देखते ही शिब्बू ग्वालेके

लड़केने रोते हुए कहा—पण्डितजी, बाबूजी न तो आँख खोलकर देखते हैं और न कुछ बोलते-चालते ही हैं।

वृन्दावनने स्नेहपूर्वक उसके आँसू पोंछकर उसका हाथ पकड़ा और उसे साथ लेकर उसके घर जा पहुँचे।

शिब्बूका अन्तिम काल आ पहुँचा है। हर साल इन्हीं दिनों हैजेकी बीमारी फैला करती है। इस साल पहले पहल शिब्बूको हुई। कल रातको ही शिब्बूको हैजा हुआ है और अबतक बिना किसी प्रकारकी चिकित्साके ही वह टिका हुआ है। वृन्दावनके आनेके कोई घण्टे-भर बाद ही उसका दम निकल गया।

बंगालके प्रायः सभी गाँवोंमें एकाध ऐसा डाक्टर होता है, जो आप ही आप थोड़ा-बहुत पढ़-लिखकर डाक्टर बन गया होता है। इस गाँवमें भी एक गोपाल डाक्टर हैं। कल रातको उन्हें बुलाया गया तो हैजेका नाम सुनते ही उन्होंने दो रुपये नकद फीस माँगी। अपनी लम्बी जानकारीके फलसे वे यह बात अच्छी तरह जानते हैं कि इन सब रोगोंमें उधार रखनेका फल यह होता है कि उनकी दवा खाकर छोटे आदमी दूसरे दिन फीस चुका देनेके लिए जीवित नहीं रहते। शिब्बूकी स्त्री उतनी रातको नगद रुपयोंका इन्तजाम नहीं कर सकी, इसलिए विवश होकर नमकीन पानी पिलाकर और इस प्रकार अपने स्वामीकी अन्तिम चिकित्सा समाप्त करके सारी रात उसके सिरहाने बैठी बैठी शीतला माईकी कृपाकी प्रार्थना करती रही। उसके बाद प्रातः काल यह हुआ।

वृन्दावन बड़े आदमी हैं। इस गाँवके सभी लोग उन्हें मानते हैं। अपने मृत स्वामीकी अन्त्येष्टि क्रिया करा देनेके लिए शिब्बूकी सद्यः विधवा उनके पैर पकड़कर रोने लगी। शिब्बूकी सम्पत्तिमें थे उसके अनशन और अर्द्धाशनसे सूखे हुए दो हाथ और दो गौएँ। उसे उन्हीं गौओंमेंसे एक गौको रेहन रखकर इस विपत्तिसे उद्धार पानेका उपाय करना होगा।

किसीकी कोई चीज बिना बन्धक रखे ही वृन्दावनने अपने जीवनमें इस प्रकारकी अनेक अन्त्येष्टि क्रियाएँ कराई हैं। शिब्बूका भी क्रिया-कर्म कराके दोपहरके बाद वे घर लौटे।

सन्ध्या हो गई है। वृन्दावन अभी तक चण्डी-मण्डपके बरामदेमें एक चटाई बिछाकर उसपर आँखें बन्द किये हुए सोये हैं। सहसा किसीके पैरोंकी आहट

सुनकर उन्होंने आँखें खोलीं और देखा कि मृत शिब्बूका वही लड़का पास खड़ा है।

वृन्दावन उठ बैठे और बोले—आ बैठ जा षष्ठीचरण!

लड़का दो-एक बार होंठ हिलाकर और 'पण्डितजी' कहकर रो पड़ा।

उस सद्यः पितृविहीन बालकको वृन्दावनने अपने पास खींच लिया। उसने रोते हुए कहा—किशनको भी कै हो रही है।

किशन उसका छोटा भाई है। वह भी कभी कभी भाईके साथ लिखने-पढ़नेके लिए पाठशालामें आया करता है।

आज रातको गोपाल डाक्टर बिना पेशगी फीस लिये ही वृन्दावनके साथ किशनको देखनेके लिए गये। उन्होंने नाड़ी देखी, जीभ देखी, दवा दी, पर किशनने न तो अपनी माँके छाती फाड़नेवाले रोनेपर ही ध्यान दिया और न चिकित्सककी मर्यादापर ही, प्रभात होनेके पहले ही वह गोपाल डाक्टरके विश्व-प्रसिद्ध यशस्वी हाथको बदनाम करके अपने पिताके पास चला गया।

मृत पुत्रके शवको गोदमें लिये हुए सद्यःविधवा माताका मर्मान्तक विलाप सुनकर वृन्दावनका कलेजा फटने लगा। स्वयं उन्हें भी एक लड़का है। उनसे सहा न गया और वे दौड़कर घर आकर चरणको जोरसे छातीसे चिमटाकर रोने लगे। उन्होंने अपने अन्तरकी ओर ध्यान करके सैकड़ों-हजारों बार मन ही मन कहा—हे भगवन्, मनुष्यके अपराधोंके लिए उसे और चाहे जो दण्ड देना, पर यह दण्ड कभी मत देना। मालूम नहीं जगदीश्वर उनकी यह प्रार्थना सुन सके या नहीं, परन्तु आज उन्होंने स्वयं इस बातका अवश्य ही निःसंशय अनुभव किया कि यह आघात सहनेकी शक्ति और चाहे जिसमें हो पर स्वयं उनमें तो नहीं है।

इसके उपरान्त दो दिन निर्विघ्न बीत गये, पर तीसरे दिन सुननेमें आया कि उनके पड़ोसी रसिक हलवाईकी स्त्रीकी हैजेके कारण अब-तबकी नौबत है।

वृन्दावनकी माँ देखनेके लिए गई थीं। दस बजेके समय वे आँसू पोंछती हुई लौट आईं। कोई घण्टे-भर बाद ही रोने-पीटनेकी आवाजसे पता चला कि रसिककी स्त्री अपने छोटे छोटे चार-पाँच बच्चोंको छोड़कर इस लोकसे प्रस्थान कर गई।

अब गाँवमें हैजा बहुत जोरोंसे आरम्भ हो गया। जिन लोगोंको भागनेके

लिए जगह थी, वे भाग गये। पर अधिकांशको जगह थी नहीं, इसलिए उन लोगोंने डरते डरते साहस करके सूखे हुए मुँहसे कहा—जब अन्न-जल समाप्त हो जायगा, तब चल ही देना पड़ेगा, भागकर क्या करेंगे ?

वृन्दावनके मकानके सामनेसे ही गाँवका बड़ा रास्ता है। वहाँसे जब तब 'हरि नाम' की ध्वनिसे बराबर पता चलने लगा कि उनमेंसे अधिकांश लोगोंका अन्न-जल निरन्तर ही समाप्त हो रहा है।

आसपासके गाँवोंसे भी दो-चार आदमियोंके मरनेके समाचार आने लगे, परन्तु, बाड़लकी अवस्था तो नित्य-प्रति भीषणसे भीषणतर होने लगी। इसका प्रधान कारण यह था कि और और बातोंमें इस गाँवकी अवस्था अच्छी होनेपर भी यहाँ पीनेके जलका कुछ भी बन्दोबस्त न था।

नदी नहीं है। पहले जो दो-चार अच्छी पोखरियाँ थीं, वे भी अब संस्कारके अभावके कारण बिलकुल खराब हो गई हैं और उनका पानी व्यवहार करनेके योग्य नहीं रह गया है। उनकी इस दुर्दशाकी ओर कोई ध्यान भी नहीं देता। गाँव-निवासियोंमेंसे अधिकांशका यही विश्वास है कि जब तक जलमें प्यास मिटाने और रसोई आदि पकानेकी शक्ति है, तब तक उसके अच्छे-बुरे होनेकी ओर ध्यान देनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं है।

इधर गोपाल डाक्टरको छोड़कर और कोई चिकित्सक नहीं था। उन्हें गरीबोंके यहाँ जानेको समय ही नहीं मिलता था और हैजा दिनपर दिन बढ़ता जाता था। धीरे धीरे यह नौबत आ गई कि औषध और पथ्यकी बात तो दूर रही, मृत शरीरोंका संस्कार करना भी दुःसाध्य हो गया।

पर वृन्दावनका मुहल्ला उस समय भी निरापद था। रसिककी स्त्रीकी मृत्युके सिवा इन पाँच-सात घरोंमें तब तक भी मृत्युका प्रवेश नहीं हुआ था।

वृन्दावनके पिता स्वयं अपने व्यवहारके लिए जो पोखरी खुदवा गये थे, उसका पानी अभी तक खराब नहीं हुआ था। सम्भवतः उनके पड़ोसी अब तक उसी पानीका व्यवहार करके बचे हुए थे।

पर वृन्दावन दिनपर दिन मारे चिन्ताके सूखने लगे। लड़केके मुँहकी ओर देखते ही उनकी छातीका खून नाचने लगता। रह-रहकर उनके मनमें यही बात आती कि कोई अलक्ष्य अभेद्य अन्तराय उन दोनों पिता-पुत्रके बीच प्रतिक्षण उच्चसे उच्चतर होता जा रहा है। उनमें अब वह साहस नहीं रहा है।

रोग या मृत्युका नाम सुनते ही वे काँप उठते हैं। जब कोई उन्हें बुलाने आता तब वे चले तो अवश्य जाते, पर उनका एक एक कदम ठीक उसी प्रकार पड़ता जिस प्रकार न्यायालयकी ओर जानेवाले अपराधीका पड़ा करता है। केवल बहुत दिनोंका अभ्यास ही मानो उन्हें ज़बरदस्ती बाँध और खींचकर ले जाता है। किसी मृत शरीरका संस्कार करके घर लौटकर वे चरणको अपने पास बुलाते और तब उसके शरीरको स्पर्श करके उनका सारा शरीर काँप उठता। उन्हें यही जान पड़ता कि अज्ञात भावसे कोई संक्रामक रोग-बीज मैं अपने एक-मात्र वंशधरके शरीरमें परिव्याप्त कर रहा हूँ। उन्हें एक-मात्र यही चिन्ता रहा करती कि मैं किस प्रकार उसे बाहरके सब प्रकारके संसर्गोंसे और मृत्युसे बचाकर आड़में रखूँ।

पाठशाला अपने आप बन्द हो गई है। चरणके मुँहकी ओर देखकर यह बात भी उन्हें कष्ट नहीं देती। इधर कुछ दिनोंसे उन्होंने चरणके खिलाने-पिलाने, कपड़ा पहनाने और सुलाने आदिका सारा काम अपने हाथमें ले लिया है। मानो इस विषयमें वे माँका भी पूरे हृदयसे विश्वास नहीं कर सकते। इसी समय उन्होंने एक दिन अपनी माँके मुँहसे सुना कि उनके पड़ोसी तारिणी मुखोपाध्यायके छोटे लड़केको हैजा हुआ है। यह समाचार सुनते ही उनके चेहरेका रंग काला पड़ गया। यह देखते ही माँने कहा—बस बेटा, अब नहीं। तुम चरणको लेकर कहीं बाहर चले जाओ।

वृन्दावनकी आँखें छलछला आईं। उन्होंने कहा—माँ, तुम भी चलो।

माँने चकित होकर कहा—अपने ठाकुरजीको छोड़कर?

वृन्दावन—ठाकुरजीकी सेवाका काम पुरोहितजीपर छोड़ चलो।

माँने और भी विस्मित होकर कहा—अपने ठाकुरजीकी सेवाका काम दूसरेपर छोड़ दूँ और आप भाग जाऊँ?

वृन्दावनने कुछ लज्जित होकर कहा—नहीं माँ, तुम अपना भार अपनेपर ही रहने दो। सिर्फ दो दिन बाद लौटकर फिर सँभाल लेना।

माँने सिर हिलाते हुए दृढ़तापूर्वक कहा—नहीं बेटा, यह नहीं होगा। तुम्हारी दादी यह भार मुझको ही दे गई हैं। मैं भी यदि कभी उसी तरह किसीको दे सकूँगी, तो दे दूँगी। नहीं तो यह मेरे ही सिर रहे। पर तुम लोग जाओ।

वृन्दावनने उद्विग्न होकर कहा—भला मैं तुम्हें ऐसे समयमें अकेली छोड़कर कैसे जा सकता हूँ ? मान लो कि...

माँ कुछ हँसीं। बोलीं—बेटा, यह तो बहुत ही अच्छी बात है। तब तो मैं समझूँगी कि मेरा कार्य समाप्त हो गया और ठाकुरजी अपना भार दूसरेको देना चाहते हैं। ईश्वर करे, ऐसा ही हो। बेटा वृन्दावन, मेरा आशीर्वाद लेकर तुम लोग निर्भय होकर चले जाओ। मैं अपने ठाकुरजीके साथ स्वच्छन्द होकर रह सकूँगी।

माताके अविचलित कण्ठस्वरसे वृन्दावनकी कहीं भाग जानेकी आशा तिरोहित हो गई। कुछ देरतक सोचनेके उपरान्त उन्होंने भी दृढ़तापूर्वक कह दिया—तो फिर मैं भी कहीं न जाऊँगा। यदि तुम्हारे ठाकुरजी हैं तो मेरी भी माँ है। मुझे अपने लिए तो जरा भी भय नहीं है। केवल चरणके मुँहकी ओर देखकर ही यहाँ नहीं रहा जाता। पर जब यहाँसे किसी प्रकार जाना हो ही नहीं सकता, तब फिर आजसे मैं उसे ठाकुरजीके ही चरणोंमें सौंपकर निश्चिन्त और निर्भय होकर रहूँगा। अब आजसे तुम कभी यह न देखोगी कि मेरा मुँह सूखा हुआ है।

तारिणीका छोटा लड़का मर गया। दूसरे दिन सबेरे वृन्दावन किसी कामसे बाहर जा रहे थे कि देखा उनकी पोखरीके घाटपर ही कोई स्त्री कपड़े-लत्ते धो रही है। कुछ धोये जा चुके हैं और कुछ अभी धोये जानेको हैं। उन कपड़ोंकी सूरत देखकर ही वृन्दावन काँप उठे। पास पहुँचकर क्रुद्ध होकर बोले—मुरदेके कपड़े आप यहाँ क्यों धो रहीं हो ?

उस स्त्रीने घूँघटके अन्दरसे न जाने क्या कहा। वृन्दावनकी समझमें कुछ भी न आया।

वृन्दावनने कहा—जो अनर्थ कर चुकीं हो, उसका तो कोई उपाय नहीं है। पर अब और कपड़े यहाँ मत धोओ, और चली जाओ।

वह स्त्री धोये और बिना धोये कपड़े उठाकर वहाँसे चली गई।

वृन्दावन थोड़ी देर तक स्तब्ध भावसे पानीकी ओर खड़े देखते रहे। इसके बाद जब वे वहाँसे चलने लगे, तब देखा कि तारिणी जल्दी जल्दी इसी ओर आ रहा है। एक तो वह यों ही पुत्र-शोकसे कातर हो रहा था; दूसरे ऊपरसे यह अपमान हुआ। उसने आते ही पागलोंकी तरह मुँह और आँखें बिगाड़कर कहा—तुमने मेरी घरवालीको पोखरीमें नहाने नहीं दिया ?

वृन्दावनने कहा—नहीं, यह बात नहीं है। मैंने मैले कुचैले कपड़े धोनेसे मना किया है।

तारिणीने चिल्लाकर कहा— तो उन्हें और कहाँ धोने जायँ ? रहेंगे बाड़लमें और धोने जायँगे वैद्यबाटीमें ? वृन्दावन, तुम्हारा नाश हो जायगा नाश। छोटे आदमी होकर पैसेके जोरसे ब्राह्मणको कष्ट दोगे तो निर्वंश हो जाओगे।

वृन्दावनकी छाती दहल उठी। पर व्यर्थ कहा-सुनी करनेका उनका स्वभाव नहीं हैं, इसलिए, उन्होंने अपने आपको सँभालकर शान्त-भावसे कहा—यदि मैं अकेला नष्ट हो जाऊँ तो कोई हर्ज नहीं, पर आप तो सारे महल्लेको नष्ट करनेका उपाय कर रहे हैं। सारा गाँव उजड़ा जा रहा है। केवल यह मुहल्ला बचा है। क्या आप इसे भी न बचा रहने देंगे ?

ब्राह्मणने उद्धत भावसे पूछा—लोग हमेशासे इस पोखरीमें कपड़े-लत्ते नहीं धोया करते तो क्या तुम्हारे सिरपर धोते हैं भइया ?

वृन्दावनने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया—यह पोखरी मेरी है। यदि आप इस मनाईको न सुनेंगे तो आपके घरके किसी आदमीको मैं पोखरीमें न उतरने दूँगा।

ता०—उतरने नहीं दोगे तो फिर बताओ, हम लोग कहाँ जायँगे ?

वृन्दावनने कहा—यहाँसे केवल पीने और व्यवहारके लिए जल ले सकेंगे। यदि कपड़े धोने हों तो गाँवके बाहरवाली गढ़ैयामें जाकर धोना होगा।

तारिणीने मुँह बनाकर कहा—छोटा आदमी होकर तेरा इतना बड़ा मुँह ! कहता है कि औरतें गाँवके बाहर जाकर कपड़े धोया करें ! अरे खाली हमारे ही घरपर विपत्ति नहीं आई है, तेरे घरपर भी आवेगी।

वृन्दावनने उसी प्रकार शान्त और दृढ भावसे उत्तर दिया—मैं औरतोंको गाँवके बाहर जानेके लिए नहीं कहता। यदि आपके घरमें कोई नौकर या दासी नहीं है, तो आप भी तो मरद हैं आप ही जाकर धो लाया करें। आप इस समय शोकसे कातर हो रहे हैं। आपसे मैं कोई कड़ी बात नहीं कहना चाहता। पर आपके लाखों शाप देनेपर भी मैं आपको इस पोखरीका पानी नहीं बिगाड़ने दूँगा।

यह कहकर वृन्दावन बिना और कोई तर्क-वितर्क किये ही अपने घर चले गये।

कोई दस मिनट बाद घोषाल महाशयने दरवाजेपर आकर पुकारना शुरू

किया। वे तारिणीके रिश्तेदार थे। वृन्दावनके बाहर आते ही बोले—हाँ भाई वृन्दावन, सब लोग तो तुम्हें बहुत अच्छा लड़का समझते हैं। फिर यह तुम्हारा कैसा व्यवहार है! ब्राह्मण पुत्र-शोकके मारे मर रहा है और ऊपरसे तुमने उसका पोखरीपर जाना बन्द कर दिया!

वृन्दावनने कहा—केवल मैले कपड़े धोनेसे रोका है, पानी ले जानेसे नहीं।

घोषालने कहा—यह अच्छा नहीं किया भइया। अच्छा, मैं कहे देता हूँ। अब वह तुम्हारी बात रख लेगा और घाटपर न धोकर जरा दूर हटकर धोया करेगा।

वृन्दावनने उत्तर दिया—सारे गाँवको केवल इसी पोखरीके पानीका सहारा है। ऐसे दुःसमयमें मैं किसी भी तरह इसका पानी खराब नहीं होने दूँगा।

विज्ञ घोषाल महाशयने रुष्ट होकर कहा—वृन्दावन, तुम्हारी यह जिद ठीक नहीं है। जिस पुष्करिणीकी शास्त्रानुसार प्रतिष्ठा हुई हो, उसका पानी किसी तरह अपवित्र या कलुषित नहीं हो सकता। अँगरेजीके चार हरफ पढ़कर तुम शास्त्रोंपर विश्वास नहीं करते? भला यह कैसे चलेगा!

वृन्दावन एक ही बात सौ बार कहते कहते थक गये थे। विरक्त होकर बोले—मैं शास्त्रोंपर अवश्य विश्वास करता हूँ, पर आपके मन-गढ़न्त शास्त्रको नहीं मानता। मैंने जो कुछ कहा है, वही होगा। मैं मैले कपड़े नहीं धोने दूँगा। और कोई होता तो मुर्देके सारे कपड़े जला डालता, पर आप लोग यदि उनकी माया नहीं छोड़ सकते हैं, तो उन्हें बाहर मैदानवाली गढ़ैयामेंसे जाकर धो लाइए। हमारी पोखरीमें यह सब काम नहीं हो सकेगा।

यह कहकर वृन्दावन भीतर चले गये।

शास्त्र-ज्ञानी घोषाल महाशय भी वृन्दावनके सर्वनाशकी कामना करते करते अपने घर चले गये।

परन्तु, वृन्दावन अच्छी तरह जानते थे कि इस मामलेका अन्त यहीं होनेवाला नहीं है; इसलिए, उन्होंने एक आदमी पोखरीके जलपर पहरा रखनेके लिए भेज दिया। उसने सारे दिनके उपरान्त रातको नौ बजे आकर समाचार दिया कि पोखरीमें कपड़े धोये जा रहे हैं और तारिणी किसी तरह मानता ही नहीं। वृन्दावनने चटपट वहाँ पहुँचकर देखा कि तारिणीकी विधवा कन्या वहाँ तकिएके

गिलाफ, बिछानेके चादर और छोटे-बड़े बहुतसे चिथड़े पोखरीमें धो रही है और उसीमें निचोड़ भी रही है। तारिणी स्वयं खड़ा हुआ है।

बारहवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन वृन्दावनने अपनी माताके आज्ञानुसार चरणको अपने पास बुलाकर पूछा—क्यों बेटा, अपनी माँके पास जाओगे?

चरण नाच उठा, बोला—हाँ बाबूजी, जाऊँगा।

वृन्दावन मन ही मन एक चोट-सी खाकर बोले—लेकिन वहाँ तुम्हें बहुत दिनों तक रहना पड़ेगा। हमें छोड़कर वहाँ रह सकोगे?

चरणने तुरन्त सिर हिलाकर कहा—हाँ, रह सकूँगा।

वास्तवमें इन दिनोंके कठिन नियमोंके मारे और बहुत कड़ी दृष्टि रखी जानेके कारण इस बच्चेकी छोटी-सी जान तंग आ गई थी। वह बाहर खेल-कूद न सकता था, पाठशाला बन्द, संगी-साथियोंका मुँह तक न देख पाता था। उसे प्रायः दिन-रात घरके अन्दर ही बन्द रहना पड़ता था। चारों ओर एक प्रकारका भय-सा छाया हुआ था। यद्यपि वह कोई बात अच्छी तरह नहीं समझता था, फिर भी अन्दर ही अन्दर बहुत व्याकुल हो रहा था। पर उधर माँका अगाध स्नेह, अबाध स्वाधीनता, स्नान, आहार, खेल-कूद,—किसी बातका कोई निषेध नहीं, हजार दोष करनेपर भी माँ हँसती हुई स्नेहपूर्वक जरा उपालंभ दे देती; बस, और किसीकी भी तिरछी आँखें नहीं देखनी पड़तीं; वह तुरन्त घरसे बाहर निकलनेके लिए छटपटाने लगा।

वृन्दावनने कहा—अच्छा तो फिर जाओ और अपने हाथसे टीनके एक छोटेसे बाक्सको पहननेके कपड़ोंसे भरकर और उसमें कुछ रुपये भी रखकर उसे गाड़ीपर रख दिया। उन्होंने आँखें भरकर अपने लड़केका मुँह चूमते हुए उसे उसकी माँके यहाँ भेज दिया और उस दुःखके समय भी गम्भीर निश्चिन्तताका निःश्वास त्याग किया। जो नौकर उसके साथ गया, उसे लड़केपर बराबर सतर्क दृष्टि रखनेके लिए समझा दिया और रोज नहीं तो कमसे कम दूसरे दिन आकर कुशल समाचार दे जानेके लिए कह दिया। वृन्दावनने मन ही मन

कहा—भले ही लड़का फिर देखनेको न मिले, पर इस विपत्तिके समय तो इसे यहाँ नहीं रख सकता ।

जब तक गाड़ी दिखाई पड़ी तब तक वृन्दावन एकटक देखते रहे और फिर घरके अन्दर आकर कुछ देर तक इधर उधर करनेके उपरान्त सहसा उस दिनकी बात याद करके डर गये कि कहीं पीछेसे कुसुम नाराज न हो । फिर मन ही मन बोले—नहीं, यह काम ठीक नहीं हुआ । इतने बड़े जिद्दी और क्रोधी आदमीका क्या ठिकाना ! मैं साथ नहीं गया, इससे कहीं कुछका कुछ समझके आग बगूला न हो उठे । वे चट कन्धेपर एक चादर रखकर जल्दी जल्दी चलते हुए गाड़ीके पास जा पहुँचे और उसपर सवार होकर लड़केके पास बैठ गये ।

कुंजनाथके घरके सामने पहुँचकर बाहरसे ही घरकी रंगत देखकर वृन्दावन चकित हो गये । चारों ओर बहुत-सा कूड़ा-कर्कट पड़ा हुआ है । मानो बहुत दिनोंसे घरमें कोई रहता ही न हो । दरवाजा खुला हुआ है । लड़केको लेकर भीतर प्रवेश करके भी देखा, वहाँ भी वही हालत है ।

आहट पाकर कुसुम भी घरमेंसे 'भइया' कहती हुई बाहर निकल आई । पर इन लोगोंको देखकर वह मारे ईर्ष्या और अभिमानके जल उठी और क्षण-भरमें ही फिर अपनी कोठरीमें चली गई । चरण सदाकी भाँति बड़ी प्रसन्नतासे चिल्लाता हुआ दौड़कर गया और जोरसे लिपट गया । कुसुम उसे गोदमें लेकर और सिरका आँचल सँभालकर पाँच मिनट बाद चौखटके पास आ खड़ी हुई ।

वृन्दावनने पूछा—कुंज भइया कहाँ हैं ?

" मालूम नहीं । कहीं घूमने गये हैं । "

वृन्दावनने कहा—देखनेसे तो ऐसा जान पड़ता है कि मानो इस मकानमें कोई रहता ही नहीं । क्या इतने दिनों तक तुम लोग थे नहीं ?

" नहीं । "

" कहाँ थे ? "

कोई एक महीना हुआ, कुसुम अपने भाईकी सासके साथ पश्चिमकी ओर तीर्थ-यात्रा करने चली गई थी । अभी कल सन्ध्याको ही वहाँसे लौटी है । पर सो न कहकर उसने अवज्ञाके साथ उत्तर दिया—यहाँ-वहाँ कई जगह थी ।

पहले जब जब वृन्दावन आये हैं कुसुमने सबसे पहले बैठनेके लिए आसन

बिछा दिया है, पर आज वह नहीं दिया। यह देखकर वृन्दावनने स्वयं ही कहा—मैं खड़ा हूँ, बैठनेके लिए जगह तो दो।

कुसुमने उसी प्रकार अवज्ञापूर्वक कहा—न जाने आसन वासन कहाँ पड़ा है। और यह कहकर वह अपनी जगहपर ही खड़ी रही, एक कदम भी नहीं हिली।

वृन्दावन तैयार होकर ही आये थे, फिर भी इतनी अधिक अवहेलनाने उनके हृदयपर जोरसे आघात किया। परन्तु, उस दिनकी उत्तेजित होकर कलह कर बैठनेकी हीनता उन्हें याद थी, इसलिए वे कुछ देर तक चुप रहनेके बाद बहुत ही नम्रतापूर्वक बोले—मैं तुम्हें ज्यादा देर तक तकलीफ नहीं दूँगा। मैं जिस कामके लिए आया हूँ, वह बतला देता हूँ। हमारे गाँवमें भारी बीमारी फैली है, इसलिए मैं आज चरणको तुम्हारे पास छोड़ जाऊँगा।

कुसुम इधर इतने दिनोंसे यहाँ थी नहीं, इसलिए बीमारी ईमारीका ठीक मतलब नहीं समझी। उसने तीव्र अभिमानसे प्रज्वलित होकर कहा—ओः तभी दया करके ले आये हो? पर-बीमारी आरामी कहाँ नहीं है? और फिर मैं भी किस साहससे पराये लड़केकी जिम्मेवारी अपने सिर ले लूँ?

वृन्दावनने शान्त भावसे कहा—जिस साहससे मैं लेता हूँ, ठीक उसी साहससे। इसके सिवा मैं समझता हूँ कि वह सबसे अधिक तुम्हींको चाहता है।

कुसुम कुछ और कहना चाहती थी कि चरणने अपने हाथसे उसका मुँह अपने मुँहके पास खींचकर कहा—माँ, बाबूजी कहते हैं कि मैं तुम्हारे पास रहूँगा। नहाने चलोगी न?

इसके उत्तरमें कुसुमने वृन्दावनको सुनाते हुए कहा—नहीं, मेरे पास रहनेकी जरूरत नहीं है। तुम्हारी नई माँ आवे तब उसके पास रहना।

वृन्दावनने बहुत ही म्लान हँसी हँसकर कहा—वह खबर भी सुन ली है। अच्छा, तो मैं बतला देता हूँ। माँ अकेली गृहस्थी नहीं सँभाल पातीं, इसी लिए एक बार वह बात उठी थी, पर उसी समय रुक भी गई।

" क्यों, रुक क्यों गई ? "

" उसका एक विशेष कारण है। पर अब उन सब बातोंसे क्या मतलब ! आओ बेटा चरण, चलो, अपन चलें, देर हो रही है।

चरणने खुशामद करके कहा—बाबूजी, कल जाऊँगा।

वृन्दावन चुप रह गये। कुसुमने भी बिना कुछ कहे चरणको गोदमेंसे

उतार दिया। कोई दो मिनट बाद वृन्दावनने बहुत ही गम्भीर स्वरमें पुकारकर कहा—और देर मत करो बेटा, चलो।

यह कहकर वे धीरेसे चले गये।

चरण बहुत ही लाड़ला होनेपर भी बड़ोंका आज्ञा-पालन करना सीखा था। पहले तो उसने एक-बार चाह-भरी आँखोंसे माँकी ओर देखा, फिर वह कुछ क्षुब्ध होकर चुपचाप पिताके पीछे पीछे चलकर बाहर आ गया।

गाड़ीवान बैलोंको पानी पिलाने गया था। पिता-पुत्र उसकी प्रतीक्षामें बाहर सड़कपर ही खड़े रहे। अब कुसुम वहाँसे खिसककर सदर दरवाजेकी आड़मेंसे अपने पतिका मुँह देखकर चौंक पड़ी। अब उनमें वह लावण्य नहीं रहा, आँखें घुस गई हैं, चेहरा पीला पड़ गया है। सहसा वह अपने आपको न सँभाल सकी और आड़मेंसे ही पुकार उठी—जरा एक बात सुने जाओ।

वृन्दावनने पास आकर पूछा—क्या कहती हो?

"क्या इस बीचमें बीमार थे?"

"नहीं।"

"तो ऐसे रोगीसे क्यों दिखाई देते हो?"

सो तो कह नहीं सकता। शायद बहुत चिन्ता-फिकरके कारण दुबला दिखाई देता होऊँ।

चिन्ता-फिकर! स्वामीके उतरे हुए चेहरेकी तरफ देखकर उसकी गरमी कम हो गई थी, पर अन्तिम बात सुनकर वह फिर जल उठी। उसने श्लेष-पूर्वक कहा—तुम्हें तो सोलहों आने सुख है। चिन्ता फिकर किस बातकी, जरा मैं भी सुनूँ?

वृन्दावनने इस बातका कोई उत्तर नहीं दिया। गाड़ी तैयार हो जानेपर चरण उसपर चढ़ने लगा। तब वृन्दावनने कहा—क्यों रे, अपनी माँको प्रणाम नहीं कर आया?

चरणने गाड़ीपरसे उतरकर और द्वारके बाहर जमीनपर सिर टेककर माँको प्रणाम किया। जब कुसुमने व्यग्र होकर हाथ बढ़ाकर उसे पकड़ना चाहा, तो वह दौड़कर भाग गया। सब बातें न समझनेपर भी वह यह अवश्य समझ गया कि माँने आज मेरा आदर नहीं किया; और रहनेके लिए आया था, पर माँने रक्खा नहीं।

वृन्दावनने कुछ और पास आकर गला भारी करके कहा—कौन जाने फिर

कभी कह सकूँगा या नहीं, इसीलिए आज ही कहे जाता हूँ। आज तो तुमने गुस्सेकी हालतमें अपने चरणको जगह नहीं दी, पर मेरे न रहनेपर अवश्य देना।

कुसुमने व्यस्त होकर बाधा दी—मैं ये सब बातें नहीं सुनना चाहती।

"फिर भी सुन लो। आज मैं इसे तुम्हारे हाथ सौंप देनेके लिए ही आया था।"

"तुम्हें मेरा विश्वास ही क्या है?"

वृन्दावनकी आँखें छलछला आईं। उन्होंने कहा—फिर वही क्रोधकी बात! कुसुम, सुना है तुमने बहुत कुछ सीखा है। पर स्त्रियोंके लिए सबसे बड़ी सीखनेकी बात है क्षमा करना, सो तुमने क्यों नहीं सीखा? किन्तु, मेरा विश्वास है कि तुम चरणकी माँ हो। लड़केको सौंपनेके लिए यदि माँ-बापका विश्वास न किया जाय, तो फिर और किसका किया जाय?

कुसुमको ढूँढ़नेपर भी इस बातका उत्तर नहीं मिला।

बैल घर पहुँचनेके लिए उतावले हो रहे थे। चरणने पुकारा—बाबूजी आओ न!

कुसुम कुछ कहना ही चाहती थी, पर उससे पहले ही वृन्दावन 'अच्छा चलूँ' कहकर गाड़ीपर जा बैठे।

कुसुम वहीं बैठ गई और बड़े अभिमानसे अपनी परलोकवासिनी माँके उद्देश्यसे कहने लगी—अरी, तुम माँ होकर मेरे साथ कितनी असह्य दुश्मनी कर गई हो! यदि सचमुच ही तुम मेरे अनजानमें मुझे कलंकमें डुबा गई हो, यदि सचमुच ही अपने घृणित दर्पके पैरोंपर मुझे बलि चढ़ा गई हो, तो मुझसे वह बात साफ साफ क्यों नहीं कह गई! किसके डरसे वे सारे चिह्न इस प्रकार मिटा गई! मेरा अन्तर्यामी जिन्हें अपने स्वामी और पुत्रके रूपमें पहिचान गया है, उन्हें सारे संसारके सामने प्रमाणित करनेका रेखा-बराबर मार्ग भी तुम क्यों न छोड़ गई! यदि ऐसा होता, तो आज कौन मुझे परित्याग कर सकता! कौन निर्लज्ज स्वामी अपनी स्त्रीको अनाथिनीके समान अपने आश्रयमें आनेके लिए उपदेश देनेका साहस करता! अथवा यदि मैं सचमुच विधवा हूँ, तो यह मैं निस्सन्देह रूपसे क्यों नहीं जान पाती! उस दशामें किसकी मजाल थी जो विधवाके सामने रूपके लोभसे विधवा-विवाहका प्रसंग छेड़नेका साहस करता!

कुसुम एक स्थानपर एक ही तरहसे बैठे बैठे बहुत देरतक रोती रही, फिर आकाशकी ओर देखते हुए हाथ जोड़कर बोली—भगवन्, मेरा कोई न

कोई उपाय कर दो। या तो मुझे अभिमानपूर्वक सिर उठाकर स्वामीके घर जाने दो और या बाल्यावस्थाके वही निश्चिन्त और निर्विघ्न दिन फेर ला दो जिससे मैं आरामकी साँस ले सकूँ !

तेरहवाँ परिच्छेद

उस दिन जब कुसुमने अपने भाईके मुँहसे सुना कि स्वामी फिरसे विवाह कर रहे हैं, तब वह बहुत ही चिन्तित होकर सोचने लगी कि मैं कहा भाग जाऊँ और क्या करूँ। इतनेमें ही उसके भाईकी सास तीर्थयात्राके लिए बाहर जानेको तैयार हुई। कुसुमसे भी कहा, तो वह भी बिना कुछ कहे-सुने चुपचाप साथ चलनेके लिए तयार हो गई। कुंजकी सास कुसुमको अपने साथ बिल्कुल दासी बनाकर ले गई थी और वहाँ उसी प्रकारका व्यवहार भी उसने किया था। पर कुसुममें ऐसी छोटी-मोटी बातोंपर ध्यान देनेकी शक्ति ही नहीं थी। इसके बाद जब वह लौटकर नलडाँगे आई और वहाँसे अपने घर जानेको तयार हुई तब कुंजकी सासने साँपके समान फुफकारकर कहा—न भाई, पागलोंकी-सी बातें मत करो। हम लोग ठहरे बड़े आदमी, हमारे दुश्मन हैं कदम कदम पर और तुम ठहरीं जवान औरत, अगर तुम वहाँ अकेली पड़ी रहोगी तो हम लोग समाजमें मुँह न दिखा सकेंगे। कुसुमने इसका कोई प्रतिवाद नहीं किया।

थोड़ी देर बाद उसने फिर कहा—यदि जी चाहे तो तुम अपने भइयाके साथ चली जाओ और घर-बार देखकर फिर उनके साथ ही चली आना। मैं कहे देती हूँ, तुम अकेली वहाँ किसी तरह नहीं रह सकतीं।

कुसुम इसी बातपर राजी होकर कल सन्ध्याको घर-बार देखने आई थी।

आज, चरण आदिके चले जानेके कोई दो घण्टे बाद, कुंजनाथ जमींदारोंकी चालसे सारे गाँवमें घूम-फिर कर लौटे, स्नान और भोजन करके सोये और तीसरे पहर अपनी बहनको साथ लेकर ससुराल जानेका आयोजन करने लगे। कुसुम घर-द्वार बन्द करके चुपचाप गाड़ीपर जा बैठी। वह जानती थी कि भइया उन लोगोंके प्रति प्रसन्न नहीं हैं, इसीलिए उसने सबेरेकी कोई बात प्रकट नहीं की।

कुंजकी स्त्रीका नाम व्रजेश्वरी है। वह जैसी मुखरा है वैसी ही कलह-पटु। वह अभी पूरे पन्द्रह बरसकी भी नहीं हुई है पर उसकी बातचीतके ढँग और उसके विषकी जलनसे उसकी माँको भी हार मानकर आँसू बहाने पड़ते हैं।

यही व्रजेश्वरी न जाने क्यों कुसुमको देखते ही प्रेम करने लग गई थी। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि माँ इससे प्रसन्न नहीं हुई और अपनी लड़कीकी आँख बचाकर उसे मनमानी जली-कटी कहने लगी।

घरके सामने ही एक पोखरी है। तीन-चार दिन बाद एक दिन सबेरे कुसुम कुछ बरतन धो लानेके लिए जा रही थी। व्रजेश्वरीने घरसे बाहर निकलकर बहुत ही तीव्र स्वरसे पूछा—क्यों ननदजी, माँ तुम्हें कै रुपये महीनेपर ठीक करके लाई हैं?

माँ पास ही भंडारेके सामने बैठकर काम कर रही थी। लड़कीका तीव्र श्लेषात्मक प्रश्न सुनकर उसने आश्चर्य और क्रोधसे गरजकर कहा—भला यह तू कैसी बातें कर रही है! अपने आदमीको भी कोई महीना ठीक करके घर लाता है?

लड़कीने उत्तर दिया—यदि अपनी हैं तो मेरी हैं, तुम्हारी कौन हैं जो तुम उस गरीबिनीसे दासीवृत्ति करा लोगी और वेतन न दोगी?

इसके उत्तरमें माँने जल्दीसे पास जाकर कुसुमके हाथसे सब बरतन छीन लिये और वह आप ही पोखरीको चल दी।

कुसुम हतबुद्धिकी भाँति चुपचाप खड़ी रह गई। व्रजेश्वरी उसके मुँहकी ओर देखकर मुस्कराई और यह कहती हुई कोठरीमें चली गई—अच्छी बात है, जाने दो!

इसके बाद दो-तीन दिन तक उसने कुसुमको लक्ष्य करके खूब क्रोधकी आग उगली, परन्तु, सहसा एक दिन उसके व्यवहारमें परिवर्तन देखकर व्रजेश्वरीको बहुत आश्चर्य हुआ।

कल रातको कुसुमने तबीयत ठीक न होनेसे भोजन नहीं किया था। आज सबेरे ही घरकी मालकिन उससे बार बार कहने लगी कि स्नान-पूजा करके भोजन कर लो।

व्रजेश्वरीने पास जाकर धीरेसे कहा—ननदजी, मैं सोच रही हूँ कि माँने अपना छद्म वेष क्यों बदल लिया!

कुसुम चुप हो रही। पर लड़की अपनी माँको खूब पहचानती थी, इसी लिए दो ही दिनमें इस व्यवहार-परिवर्तनके कारणका अनुमान करके वह मन ही मन जल-भुन गई। घर-मालकिनका गोवर्धन नामका एक बहनौता (= बहिनका लड़का) है। उसने अपरमित ताड़ी और गाँजा पीकर अपना चेहरा ऐसा बना लिया है कि किसी तरह यह पता ही नहीं चलता कि उसकी अवस्था पैंतीस बरसकी है या पैंसठ बरसकी। उसे कोई अपनी लड़की नहीं देना चाहता है, इसलिए वह अभी तक अविवाहित है। उसका घर दूसरे मुहल्लेमें है। पहले तो वह शायद ही कभी मिलता था, पर आजकल किसी अज्ञात कारणसे मौसीके प्रति उसका प्रेम और भक्ति इतनी अधिक बढ़ गई है कि कमरेमें बैठकर बहुत देर तक कथा-वार्ता करके उनके आदेश उपदेश भी ग्रहण करने लगा है।

आज दोपहरको व्रजेश्वरी कुसुमको साथ लेकर पोखरीमें नहाने गई थी। पानीमें उतरनेपर उसकी दृष्टि सहसा घाटके पासहीके कामिनीके एक सघन वृक्षकी ओर गई। उसने देखा कि गोवर्धन उसकी आड़में खड़ा होकर टक लगाये इधर ही देख रहा है। पर उस समय वह कुछ न बोली और किसी तरह काम निबटाकर घर लौटी, तो देखा कि आँगनमें खड़ा हुआ वही अपनी मौसीसे बातें कर रहा है। कुसुम जल्दीसे घूँघट खींचकर उसके सामनेसे कतराती हुई अन्दर चली गई। व्रजेश्वरीने पास पहुँचकर पूछा—क्यों गोवर्धन भइया, आगे तो तुम्हें यहाँ कभी न देखती थी। आजकल एकाएक तुम्हारी इतनी अधिक मेहरबानी कैसे हो गई? अब तुम घरके अन्दर आना-जाना जरा कम कर दो।

गोवर्धन नहीं जानता था कि व्रजेश्वरीने उसे खड़े हुए देख लिया था; पर व्रजेश्वरीके इस प्रश्नके भावसे सकपका गया और कोई उत्तर न दे सका।

पर व्रजेश्वरीकी माँ आग-बगूला होकर, आँखें लाल लाल कर, चिल्ला उठी—पहले उसकी इच्छा नहीं हुई, इसलिए नहीं आता था। अब इच्छा हुई है, इसलिए आता है। तेरा इसमें क्या?

लड़कीने क्रोध नहीं किया। स्वाभाविक भावसे ही कहा—यह इच्छा मुझे पसन्द नहीं है। माँ, मैं अपने लिए उतना नहीं कहती हूँ पर मेरी ननद भी यहाँ है। कमसे कम इस बातका तो ध्यान रखना चाहिए कि वह पराई लड़की है।

माँने गलेको सातवें स्वरपर चढ़ाकर कहा—क्या पराई लड़कीके लिए हमारे बहनौते भतीजे भी पराये हो जायँगे, हमारे घर न आवेंगे? और फिर यह पराई

लड़की क्या परदेवाली है जो किसीके सामने नहीं निकलती ? अरी, वह तो सबके सामने इस तरह बाहर निकलना जानती है कि उसे देखकर मेरे जैसी बुढ़ियोंको भी लज्जा आती है ।

व्रजेश्वरीने समझ लिया कि माँका क्या इशारा है, इसी लिए वह कुछ रुक गई । उसे याद आ गया कि इसी कुसुमके बारेमें स्वयं मैंने भी अपनी माँसे थोड़े दिन पहले कितनी बातें किस किस तरहसे कही थीं । पर उस समयकी बात कुछ और थी, इस समय कुछ और ही हो गई है । उस समय वह कुसुमसे प्रेम नहीं करती थी, पर अब करती है । और इस ढंगका प्रेम न तो भगवानकी कृपाके बिना किसीपर किया ही जाता है और न किसीसे पाया जाता है ।

व्रजेश्वरी जानेके लिए उद्यत होकर गोवर्धनकी ओर तीव्र दृष्टिसे देखकर बोली—भइया, यह बहुत लज्जाकी बात है । मैं मुँह खोलकर कुछ कह तो नहीं सकी, पर मैंने देख सब लिया है । यदि भाईकी तरह यहाँ आ सको, तो आया करो । नहीं तो तुम्हारे भाग्यमें दुःख लिखा है और उस दुःखसे तुम्हें माँ भी न बचा सकेंगी ।

इतना कहकर वह अपने कमरेमें चली गई ।

गोवर्धनने मुँह लाल करके कहा—मौसी, मैं तुम्हारी कसम खाकर कहता हूँ, मैं नहीं जानता—कौन साला वहाँ झाड़ीके भीतर—मैं दतुअन तोड़ने—पूछनेके लिए चलो न हलवाईकी दूकानपर—आवे वह मेरे साथ उस मुहल्लेमें, प्रमाण करा देता हूँ—इत्यादि कहते कहते गोवर्धन वहाँसे खिसक गया ।

व्रजेश्वरीने कपड़ा बदलकर कुसुमकी कोठरीमें जाकर देखा कि वह अभी तक गीली धोती ही पहने हुए जँगलेके सहारे खड़ी हुई बाहरकी ओर देख रही है । पैरोंकी आहट सुनकर उसने रुँधे हुए गलेसे कहा—क्यों भाभी, तुम क्यों व्यर्थ मेरी बातमें पड़ने गई ? क्या तुम मुझे यहाँ भी न टिकने दोगी ?

"पहले तुम गीली धोती उतारो, तब बतलाऊँगी ।"

इतना कहकर व्रजेश्वरीने जबरदस्ती उसकी गीली धोती उतरवाई और सूखी धोती पहनवाई । इसके उपरान्त उसने कहा—ननदजी, मुझसे अन्याय नहीं सहा जाता । वह चाहे तुम्हारे लिए हो और चाहे मेरे लिए । मैं तो उस कमबख्तको अब घरमें न घुसने दूँगी । मैं उसका मतलब समझ गई हूँ ।

वह मारे लज्जाके अपनी माँके मनकी बात न कह सकी ।

कुसुम रुआसी होकर बोली—मतलब किसीका कुछ हो, पर भाभी, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, तुम मेरी बात चलाकर और झगड़ा करके मुझे और अधिक विपत्तिमें न डालो।

"पर मेरे जीते जी विपत्ति आ ही कैसे सकती है?"

कुसुमने जोरसे सिर हिलाकर कहा—वह अवश्य आवेगी। आँखों देख रही हूँ कि आवेगी। (माथेपर जोरसे हाथ मारकर) अपने इस जले हुए भाग्यको जहाँ ले जाऊँगी, वहीं विपत्ति साथ साथ जायगी। शायद स्वयं भगवान् भी मेरी रक्षा नहीं कर सकते। यह कहकर वह रोने लगी।

व्रजेश्वरीने स्नेहपूर्वक उसके आँसू पोंछकर और कुछ देरतक चुप रहकर धीरेसे कहा—शायद तुम्हारा कहना नितान्त असत्य नहीं है। पर तुम नाराज न होना बहन, खाली भाग्यको दोष देनेसे कैसे चलेगा! इसमें तुम्हारा दोष भी कुछ कम नहीं है।

कुसुमने व्रजेश्वरीके मुँहकी ओर देखते हुए पूछा—भला मेरा कौन-सा दोष है? मेरे छुटपनकी सब घटना तो तुमने सुनी ही होगी?

"सुनी है। पर वह तो सब शुरूसे आखिरतक झूठ है। तुम सयानी हो। सब बातें जानती सुनती हो। फिर भी न तो सेंदुर लगाती हो, न हाथोंमें चूड़ियाँ पहनती हो, न ससुराल जाती हो। यह भाग्यका दोष है या स्वयं तुम्हारा दोष है? उस समय तुम अनजान थीं, पर अब तो सयानी हुई हो? भला तुम्हीं बतलाओ, ऐसी कौन सधवा है जो क्रोध करके विधवाका वेष बनाकर रहे?"

"भाभी, मैं यह सब जानती हूँ, पर खाली सेंदुर और चूड़ी पहन लेनेसे ही तो लोग नहीं सुनेंगे। पूछेंगे, मेरा पति कौन है? इस बातका गवाह कौन है? और फिर वे भी यों ही कैसे मुझे अपने घरमें ले लेंगे?"

व्रजेश्वरी विस्मयसे अवाक् होकर बोली—तुम यह कैसी बातें करती हो ननदजी? भला इससे बढ़कर प्रमाण किसी बातका और क्या हो सकता है? क्या तुमने कुछ भी नहीं सुना कि इस बातको लेकर नन्दकाकाके साथ इसी घरमें क्या काण्ड हो गया है!

थोड़ी देर चुप रहनेके बाद ही व्रजेश्वरी बोल उठी—तुम्हारे भइया तो सब कुछ जानते हैं, उन्होंने नहीं कहा? मैं तो समझी थी कि तुम सब बातें जान सुनकर ही यहाँ आई हो। मैंने तो इसी लिए तुमसे कुछ नहीं कहा, चुप

बनी रही कि कहीं तुम नाराज न हो जाओ, कहीं तुम्हें दुःख न हो। बल्कि जिस दिन तुम आई, उस दिन यहाँ आनेके कारण मुझे तुमपर गुस्सा तक आया था।

कुसुमने उद्वेगसे अधीर होकर पूछा—नहीं भाभी, मैंने तो कुछ भी नहीं सुना। बताओ, क्या हुआ था।

व्रजेश्वरीने ठण्डी साँस लेकर कहा—खूब! जैसे भाई हैं, वैसी ही बहन। नन्दोईजीके साथ जब नन्द काकाकी लड़कीका सम्बन्ध ठीक हुआ तब तुम यात्राको गई हुई थीं। उस समय तुम्हारे भइयाने ही तो इतना उपद्रव मचाया और अन्तमें वे ही बिलकुल चुप हो रहे! हमारी सासकी बात, तुम्हारी बात, उन लोगोंकी बात, सभी बातें निकलीं—तब नन्द काकाने इंकार कर दिया कि कहीं फिर उनकी लड़कीका सम्बन्ध टूट जाय। उसके बाद मंदिरके बड़े बाबाजी बुलवाये गये और उन्होंने आकर फैसला कर दिया कि सब झूठ है। क्योंकि, एक तो उन्हें बिना सूचना दिये, बिना उनकी आज्ञा लिये हम लोगोंके समाजमें ये सब काम हो ही नहीं सकते। इसके सिवा उन्होंने नन्द काकाको आज्ञा दी कि जिसने यह काम किया था, उसे हाजिर करो। उसी समय उन्हें यह स्वीकार करना पड़ा कि कण्ठी बदलनेकी केवल बात हुई थी, कण्ठी बदली नहीं गई।

कुसुम आशंकासे साँस रोककर बोल उठी, नहीं बदली गई! भाभी, यह तो मैं भी मन ही मन जानती थी। पर आखिर मेरे सम्बन्धमें इतनी सब बातें उठी क्यों?

व्रजेश्वरीने हँसकर कहा—तुम्हारे भाईको कभी कभी बाईका झोंका आ जाया करता है न। यदि दूसरा कोई होता तो चक्षुलज्जाके कारण ही इतना गोलमाल न मचाना चाहता। पर उन्हें तो इसका कोई खयाल ही नहीं है। इसी लिए वे चारों ओर आन्दोलन करने लगे कि जब हमारी बहनका कोई दोष ही नहीं है, जब माँने उसकी कण्ठी बदलवाई ही नहीं, तो फिर क्यों हमारे बहनोई उसे अपने घर न ले जाँयगे और क्यों नन्द अपनी लड़कीका ब्याह उनके साथ करेगा?

कुसुमने लज्जासे कण्टकित होकर कहा—छीः छीः, उसके बाद क्या हुआ?

व्रजेश्वरीने कहा—उसके बाद अधिक कुछ नहीं हुआ। हमारी सास और नन्दकाकाकी बहू दोनों एक ही गाँवकी लड़कियाँ थीं। क्रोध, दुःख, लज्जा और

अभिमानके कारण तुमको यहाँ ले आई, उनके लड़केके साथ ही बात हुई, पर हो नहीं पाई। अच्छा ननदजी, नन्दोईजी भी तो सब बातें अपने कानसे सुन गये हैं। क्या उन्होंने भी किसी बहाने ये सब बातें तुम्हें नहीं बतलाई ? पहले तो सुना था कि तुम्हारे लिए वे...

कुसुमने मुँह फेरकर कहा—भाभी, जान पड़ता है, उस दिन वे यही बात कहनेके लिए आये थे।

व्रजेश्वरीने चकित होकर पूछा—किस दिन ? क्या इस बीच वे तुम्हारे यहाँ गये थे ?

"हाँ, जिस दिन हम लोग यहाँ आये, उसी दिन सबेरे।"

"तब क्या हुआ ?"

"मेरे दुर्व्यवहारके कारण कुछ कहे बिना ही चले गये।"

व्रजेश्वरीने मुस्कराते हुए पूछा—क्या किया था तुमने ? अपने कुंजमें घुसने नहीं दिया या बात ही नहीं की ?

कुसुमने कोई उत्तर नहीं दिया। वह एक ठण्ढी साँस खींचकर सिर झुकाये बैठी रही।

व्रजेश्वरीने भी और कोई बात नहीं पूछी। सन्ध्याका अन्धकार सघन होता जाता था। चारों ओरके शंखोंके शब्दसे चौंककर वह उठ खड़ी हुई और बोली—ननदजी, तुम जरा बैठो। मैं दीया जलाकर अभी आती हूँ।

यह कहकर व्रजेश्वरी वहाँसे चली गई।

थोड़ी देर बाद लौटकर देखा कि कुसुम वहीं जमीनपर औंधी पड़ी है और सिसक सिसककर रो रही है। दीएको यथास्थान रखकर वह कुसुमके पास जाकर बैठ गई और उसके सिरपर हाथ रखकर बहुत देर तक चुपचाप बैठे रहनेके उपरान्त धीरेसे बोली—ननदजी, सचमुच ही तुमने अच्छा काम नहीं किया। यह तो मैं नहीं जानती कि तुमने क्या किया था, पर जब कि तुम जानती हो कि वे कौन हैं और तुम कौन हो, तब उनकी आज्ञाके विना तुम्हारा कहीं भी जाना ठीक नहीं हुआ।

कुसुमने सिर नहीं उठाया। वह चुपचाप सुनती रही।

व्रजेश्वरीने कहा—तुम्हारे ही मुँहसे जहाँ तक तुम्हारी बातें सुनी हैं, उनके विचारसे मैं कह सकती हूँ कि यदि मैं तुम्हारी जगहपर होती, तो पैदल चलकर

उनके घर जानेकी कौन कहे, यदि वे आज्ञा देते कि तुम सारे रास्ते नाक रगड़ती हुई जाओ, तो मैं वैसे ही जाती !

कुसुमने पहलेकी भाँति ही पड़े रहकर अस्फुट स्वरमें कहा—भाभी, यह मुँहसे तो कहा जा सकता है, पर करना बहुत कठिन है।

"जरा भी नहीं। जानेसे स्वामी मिलेंगे, लड़का मिलेगा, खाने पहननेको मिलेगा, भला इतना सब मिलनेपर स्त्रीके लिए कौन-सा काम कठिन हो सकता है ? मैं तो वह भी न पाती, तो भी लौटकर न आती। दुतकारनेपर भी नहीं। कुछ शरीरपर तो हाथ उठाते ही नहीं, तब फिर और काहेका डर था? बहुत करते तो कहते कि तुम जाओ। मैं कह देती कि तुम चले जाओ। यदि जबरदस्ती रहतीं, तो बतलाओ वे क्या करते ?

व्रजेश्वरीकी बात सुनकर इतने दुःखमें भी कुसुम हँस पड़ी।

परन्तु व्रजेश्वरीने इस हँसीमें योग नहीं दिया। वह अपने मनकी बात ही कह रही थी, कुसुमको हँसानेके लिए अथवा उसे सान्त्वना देनेके लिए नहीं। उसने और भी अधिक गम्भीर होकर कहा—ननदजी, मैं बहुत ठीक कहती हूँ, तुम किसीकी भी मनाई न सुनो और उनके पास चली जाओ। ऐसी विपत्तिके दिनोंमें स्वामी और पुत्रको अकेले मत छोड़ो।

व्रजेश्वरीके स्वरमें यह आकस्मिक परिवर्तन देखकर कुसुम सब कुछ भूल गई और चटपट उठकर पूछने लगी—विपत्तिके दिन कैसे ?

व्रजेश्वरीने कहा—ये विपत्तिके दिन नहीं हैं तो और काहेके हैं ? यह ठीक है कि वे लोग अच्छी तरह हैं, पर बाड़लमें जो हैजा शुरू हुआ है, तुम्हारे भाई अभी कहते थे, वह आजकल बहुत जोरों पर है। रोज दस बारह आदमी मर रहे हैं। हैं हैं, ननदजी यह क्या कर रही हो ! मेरे पैर मत छुओ।

कुसुमने उसके दोनों पैर जोरसे पकड़कर रोते हुए कहा—भाभी, वे मुझे मेरे चरणको देनेके लिए आये थे, पर मैंने नहीं लिया। मैंने उनकी कोई बात नहीं सुनी। भाभी...

व्रजेश्वरीने रोककर कहा—अच्छा, अब तो सुन लिया ! अब जाकर लड़केको सँभालो।

"अब मैं कैसे जाऊँ ?"

व्रजेश्वरी कुछ कहना ही चाहती थी कि इतनेमें पीछेसे किसीके आनेकी

आहट सुनाई पड़ी। उसने मुँह फेरकर देखा कि किवाड़ा खोलकर चौखटके पास माँ खड़ी है। आँखसे आँख मिलते ही माँने ताना मारते हुए कहा—ननदजीको क्या सलाह दी जा रही है?

व्रजेश्वरीने स्वाभाविक स्वरमें कहा—माँ, अन्दर चली आओ। तुम डरो मत। अपने आदमीको कोई बुरी सलाह नहीं देता, मैं भी नहीं देती।

माँ बहुत देरसे भीतर ही भीतर जल भुन रही थी। भड़ककर बोली—इसका मतलब यह कि मैं लोगोंको बुरी सलाह दिया करती हूँ, यही न? मैंने तो तभी समझ लिया था कि जब यह कलमुँही घरमें आई है, तब इस घरको भी मिट्टीमें मिला देगी। कुंजनाथ इसे फूटी आँखों नहीं देख सकते सो क्या यों ही? इसके इस स्वभाव और रंग-ढंगके कारण ही तो!

लड़की भी माँको कुछ ऐसा ही कड़ा उत्तर देना चाहती थी, पर कुसुमने उसे धीरेसे चिकोटी काटी जिससे वह रुक गई और बोली—इसी लिए मैं कलमुँहीसे कह रही थी कि ससुराल चली जा, यहाँ मत रह।

ससुरालका नाम सुनकर माँने पानसे रँगे हुए होठ फैलाकर और तिलक लगी हुई नाक सिकोड़कर कहा—पूछती हूँ, किस ससुरालमें ननदजीको भेज रही हो? नन्द वैष्णवके...

अबकी बार व्रजेश्वरी धमकाकर बोल उठी—सब कुछ जान सुनकर, फिर भी अनजान बनकर खामख्वाह किसीका अपमान मत करो। लड़कियोंके दस बीस ससुरालें नहीं हुआ करतीं जो आज नन्द वैष्णवका नाम लिया जायगा और कल तुम्हारे गोवर्धनके बापका और वह चुपचाप सुन लेना होगा।

लड़कीका यह निष्ठुर और स्पष्ट संकेत सुनकर माँ बारूदकी तरह फट पड़ी और चिल्लाकर बोली—चल कमबख्त, लड़की होकर तू माँके नाम इतना बड़ा अपवाद लगाती है!

लड़कीने कहा—केवल अपवाद ही होता तो खैर थी माँ, यह तो बिलकुल सत्य है। अरी माँ, तुम्हारी जैसी दो चार वैष्णव स्त्रियोंकी कृपासे तो जी चाहता है कि हम लोग अपने आपको डोम चमार या मोची कहा करें, वैष्णव बतलाते हुए तो सिर नीचा कर लेना पड़ता है। पर जाने दो, बहुत चिल्लाओ मत। यदि तुम्हें इस बातका दुःख है कि मैंने तुम्हें अपवाद लगाया तो ननदजीको बाड़ल भेज दो। उसके बाद जो तुम्हारे मुँहमें आवे, सो सब कह

लेना, मुझे भी दस गालियाँ दे लेना। मैं तुम्हारी सौगन्द खाकर कहती हूँ माँ, मैं कुछ न कहूँगी।

लड़कीके पैने वाणोंके सामने माँने समझ लिया कि यदि यह लड़ाई और आगे बढ़ी तो मेरी ही हार होगी; इस लिए स्वरको कोमल करके कहा—वहाँ भेज देनेसे भी वे लोग इसे घरमें कैसे ले लेंगे? व्रजेश्वरी, मैं तेरी अपेक्षा बहुत ज्यादा जानती हूँ। और वे लोग इसके कोई नहीं हैं। वृन्दावनके साथ कुसुमका कोई सम्बन्ध नहीं है; झूठी आशा दिलाकर इसे व्यर्थ मत नचा।

यह कहकर वह बिना उत्तरकी प्रतीक्षा किये ही तेजीसे चली गई।

ज्यों ही कुसुमने अपना सूखा हुआ पीला मुँह ऊपर उठाया, त्यों ही व्रजेश्वरी बोल उठी—झूठी बात है बहन, झूठी बात। माँ जान बूझकर जबरदस्ती झूठ बोल गई हैं, यह बात मैं उनकी लड़की होकर भी तुम्हारे सामने मंजूर करती हूँ। अच्छा, म अभी आती हूँ।

यह कहकर व्रजेश्वरी न जाने क्या सोचकर जल्दीसे उठकर वहाँसे चली गई।

कुंजनाथने यह बात प्रमाणित कर दी कि अवस्था अच्छी होनेसे बुद्धि भी अच्छी हो जाती है। स्त्री और बहन दोनोंका अनुरोध और आवेदन उसे कर्तव्यसे विचलित न कर सका। उसने सिर हिलाकर कहा—यह नहीं हो सकता। माँ जबतक न कहें, तबतक मैं चरणको यहाँ नहीं ला सकता।

व्रजेश्वरीने कहा—कमसे कम एक बार जाकर देख ही आओ कि वे लोग कैसे हैं।

कुंजनाथने आँखें चढ़ाकर कहा—बाप रे बाप! वहाँ तो दस बीस आदमी रोज मरते हैं।

"तो फिर कोई आदमी भेज दो जो जाकर खबर ले आवे।"

"हाँ, यह हो सकता है।"

कुंजनाथ आदमीकी तलाशमें बाहर चले गये।

दूसरे दिन सबेरे कुसुम स्नान करके रसोईघरमें जा ही रही थी कि दासीने आँगनमें झाड़ू देते देते कहा—बहन, माँने मना किया है, आज तुम रसोई-घरमें मत जाओ।

दासीकी यह बात सुनते ही कुसुमका कलेजा काँप उठा। वह वहीं खड़ी होकर सभय बोली—क्यों?

"यह तो मैं नहीं जानती।" कहकर दासी फिर अपने काममें लग गई।

कुसुम लौटकर बहुत देरतक अपने कमरेमें बैठी रही। और दिन तो इतनी देरमें व्रजेश्वरी कई बार वहाँ आया जाया करती थी, पर आज वह कहीं दिखाई ही न पड़ी। बाहर निकलकर एक बार ढूँढ़ भी आई, पर उससे साक्षात् न हुआ।

वह अपनी माँके कमरेमें छिपी बैठी थी; क्योंकि वह जानती थी कि कुसुम इस कमरेमें नहीं आती। नित्य दोनों साथ बैठकर भोजन किया करतीं थीं, पर आज जब भोजनका समय भी बीत गया, तब मारे उद्वेग और आशंकाके कुसुमसे न रहा गया और वह फिर एक बार व्रजेश्वरीको तलाश करनेके लिए बाहर निकली। इतनेमें माँने उसके सामने पहुँचकर कहा—बेटी, अब और देर क्यों कर रही हो? जाओ, जाकर एक गोता लगा आओ और दो कौर खालो। तुम्हारे भाई राय लेनेके लिए ठाकुरबाड़ी गये हैं।

कुसुमने मुँह उठाकर कुछ पूछना चाहा, पर उसके मुँहमें जीभ मानो काठके समान कड़ी हो गई।

तब माँने स्वयं ही कुछ करुण स्वरमें कहा—जब तुम लड़केकी बहू हो, तब लड़केकी तरह ही अशौच मानना होगा। जो हो, बेचारी दोषों और गुणोंसे भली मानस ही थी। उस दिन हमारी व्रजेश्वरीका सम्बन्ध करने आई थी, तब उसने कितनी बातें की थीं! आज छः दिन हो गये वृन्दावनकी माँ मर गई। जो होना था, वह हो ही गया। अब महाप्रभु लड़केको ही बचा दें। हाँ, क्या नाम है बेटी उस लड़केका? चरण न? आहा! राजा जैसा लड़का मालूम होता है, उसे भी आज सबेरेसे दो तीन कै दस्त हो चुके हैं।

कुसुमने न तो सिर ऊपर उठाया और न मुँहसे कोई बात कही, वह चुपचाप अपने कमरेमें चली गई।

प्रायः तीन बज चुके हैं। व्रजेश्वरीने सभी कमरोंमें ढूँढ़ डाला, पर कुसुमका कहीं पता न चला। अन्तमें उसने दासीसे पूछा—क्यों री, तूने कहीं ननदजीको देखा है?

दासीने उत्तर दिया—नहीं, सबेरे ही देखा था।

अपनी स्त्रीके रोनेका शब्द सुनकर कुंजनाथकी कच्ची नींद खुल गई। वह उठ बैठे और बोले—यह क्या हुआ? वह कहाँ चली गई?

व्रजेश्वरीने रोते रोते कहा—मालूम नहीं। मैं अन्दर, बाहर, पोखरपर, बागमें, सब जगह ढूँढ़ आई, पर कहीं दिखाई ही नहीं दी।

व्रजेश्वरीके आँसू और पोखरीके उल्लेखसे कुंजनाथ रोने लगे। तो फिर वह जीती नहीं है। माँकी बातें उससे सही नहीं गईं, इसलिए वह अवश्य ही कहीं डूब मरी है।

यह कहकर वे दौड़कर बाहर जा रहे थे कि व्रजेश्वरीने उनका पल्ला पकड़कर कहा—सुनो, तुम इस तरह मत जाओ।

"नहीं, मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहता।"

यह कहकर कुंजनाथ झटकेसे अपना पल्ला छुड़ाकर पागलोंकी तरह बाहर निकल गये।

कोई दस मिनट बाद कुंजनाथ औरतोंकी तरह जोर जोरसे रोते हुए घर लौट आये और आँगनमें खड़े होकर चिल्ला चिल्लाकर कहने लगे—माँने (सासने) मेरी बहनको मार डाला—अब मैं यहाँ नहीं रहूँगा, इस घरमें पैर भी न रक्खूँगा। हायरे कुसुम!...

कुंजनाथकी सास कुछ भी नहीं जानती थी। चिल्लाहट सुनकर बाहर निकल आई और हतबुद्धि होकर खड़ी रह गई।

उसको देखते ही कुंजनाथ वहीं औंधे होकर सिर पीटने लगे—अरे इसी राक्षसीने मेरी बहनको खा लिया—अरे मैं क्यों मरनेके लिए यहाँ आया! हाय मेरा यह क्या हो गया!

व्रजेश्वरीने पास पहुँचकर उनका हाथ पकड़कर खींचा ही था कि उन्होंने उसे धक्का देकर गिरा दिया—चल हट, दूर हो! मुझे छू मत।

व्रजेश्वरी उठकर खड़ी हो गई। अबकी बार वह उन्हें जबरदस्ती बहुत जोर करके कमरेमें ले गई और बोली—क्या खाली रोने चिल्लानेसे तुम्हारी बहन लौट आवेगी? मैं कहती हूँ, वह कभी डूबकर नहीं मरी है।

पर कुंजनाथने विश्वास नहीं किया, वे उसी तरह रोते रहे। इस बहनको उन्होंने बड़े कष्टसे पाला था और सचमुच ही उसे प्राणोंसे बढ़कर चाहा था। पहले कई बार कुसुमने गुस्सेमें आकर डूब मरनेका भय दिखलाया है। अब उनकी आँखोंमें न जाने कहाँका बहुत-सा जल और उसीमें उनकी अभिमानिनी छोटी बहनका मृत शरीर तैरने लगा।

व्रजेश्वरीने स्नेहपूर्वक अपने स्वामीकी आँखोंके आँसू पोंछते हुए कहा—तुम शान्त हो जाओ—मैं निश्चयपूर्वक कहती हूँ कि वे मरी नहीं हैं।

कुंजनाथ आँसू-भरी आँखें फाड़ फाड़कर उसकी ओर देखते रह गये।

उनकी स्त्रीने फिर एक बार अपने आँचलसे अच्छी तरह उनकी आँखें पोंछते हुए कहा—मुझे तो निश्चय यही जान पड़ता है कि ननदजी चोरीसे बाड़ल चली गई हैं।

कुंजनाथने अविश्वाससे सिर हिलाकर कहा—नहीं नहीं, वह वहाँ नहीं जायगी। चरणको छोड़कर वहाँके किसी औरको वह देख ही नहीं सकती।

व्रजेश्वरीने कहा—यही तो तुम्हारी पहाड़ जैसी भूल है। मैं जिस तरह तुम्हें चाहती हूँ, उसी तरह वे भी अपने स्वामीको चाहती हैं। और वह चाहे जो हो, खाली चरणके लिए भी तो वे वहाँ जा सकती है!

"पर उसे तो बाड़लका रास्ता भी नहीं मालूम।"

"मुझे केवल यही तो डर है। यदि कहीं इधर उधर भटक गई, तो पहुँचनेमें देरी होगी। अथवा रास्तेमें कहीं किसी विपत्तिमें न पड़ जावें। नहीं तो यदि बाड़ल सात समुद्र तेरह नदी पार हो, तो भी वे एक न एक दिन पूछती पूछती पहुँच ही जायँगी। मेरी बात सुनो, तुम भी उसी रास्ते चले जाओ। यदि रास्तेमें कहीं मिल जायँ, तो अपने साथ ले जाकर उन्हें पतिके हाथ सौंप कर चले आना।"

"अच्छा तो मैं जाता हूँ।" कहकर कुंज उठ खड़े हुए।

आज उनका वह चमचमाता हुआ विलायती जूता, बढ़िया रेशमी दुपट्टा और वह शानदार बढ़िया चाल सब ससुरालमें ही पड़ी रह गई। कम्बख्त कुसुमके शोकमें जमींदार कुंजनाथ बाबू फेरीवाले कुंज वैष्णवके रूपमें नंगे पैर और नंगे बदन पागलोंकी तरह दौड़ते हुए चल दिये।

चौदहवाँ परिच्छेद

आज छः दिन हुए वृन्दावनकी माता स्वर्गवास कर गई हैं। यदि मृत्युके उपरान्त और किसीने अपनी सुकृतिके बलसे स्वर्गमें स्थान पाया है तो इसमें सन्देह नहीं कि वृन्दावनकी माताको भी स्वर्गमें अवश्य स्थान मिला होगा।

उस दिन तारिणीके दुर्व्यवहार और घोषालके शास्त्र-ज्ञान और शापसे बहुत

ही दुःखी होकर वृन्दावनने अपने गाँवमें आधुनिक ढंगका एक लोहेके नलवाला कूआँ बनवानेका दृढ संकल्प किया था। वे ऐसा कूआँ बनवाना चाहते थे जिसका पानी कोई किसी तरह दूषित ही न कर सके, जिससे थोड़ेसे परिश्रमसे ही जल निकाला जा सके, जिससे गाँवके सभी लोगोंका अभाव दूर हो और जिससे कठिन समयमें हैजेका भय बहुत कुछ दूर हो सके। वे चाहते थे कि चाहे जितना रुपया खर्च हो, पर इस तरहका एक बढ़िया बड़ा कूआँ बन जाय। इस लिए उन्होंने कलकत्तेकी एक प्रसिद्ध कम्पनीको पत्र लिखकर उसके आदमी बुलवाये थे। जिस दिन माताका देहान्त हुआ, उसी दिन सबेरे वे उन्हींके साथ बैठे हुए बातचीत और शर्तनामा पक्का कर रहे थे। प्रायः दस बजे होंगे कि दासीने बहुत घबराहटमें बाहर आकर कहा—बाबूजी, इतना दिन चढ़ आया, पर माँने अभी तक द्वार क्यों नहीं खोला ?

वृन्दावनने शंकित होकर पूछा—क्या माँ अभी तक सोई हुई हैं ?

"हाँ, अन्दरसे किवाड़े बन्द हैं। बहुत आवाज दी, पर कोई आहट ही नहीं मिलती।"

वृन्दावन घबराकर वहाँसे दौड़े हुए आये और किवाड़ोंको बार बार खट-खटाकर पुकारने लगे—माँ ! माँ !

पर अन्दरसे कोई उत्तर न मिला। घर-भरके सब लोग चिल्ला चिल्लाकर पुकारने लगे, फिर भी अन्दरसे कोई उत्तर न मिला। तब लोहेके साबलसे तोड़कर बन्द द्वार खोला गया। किवाड़ खुलते ही अन्दरसे ऐसी भयंकर दुर्गन्ध आई कि मानो उसने जोरसे धक्का मारकर सबके मुँह फेर दिये। वृन्दावन क्षण ही भरमें उस धक्केसे सँभल गये और उन्होंने अन्दरकी ओर देखा।

पलंग खाली है और माँ जमीनपर पड़ी हुई हैं। मृत्यु आसन्नप्राय है। सारे घरमें विशूचिकाके भयंकर आक्रमणके सब चिह्न विद्यमान हैं। जब तक उनमें उठनेकी शक्ति रही, तब तक तो वे उठकर बाहर आती रहीं; अन्तमें अशक्त और असहाय होकर जमीनपर गिर पड़ीं और फिर न उठ सकीं। वे जीवनमें कभी किसीको जरा-सा भी कष्ट नहीं देना चाहती थीं; इसीलिए मृत्युके मुखमें जा पड़नेपर भी उतनी रातको लोगोंको बुलाकर उनकी नींद तोड़नेमें उनको लज्जा हुई। किसीको यह बतलानेके जरूरत नहीं रही कि सारी रात उनपर क्या बीती है। माताकी इस प्रकारकी अकस्मात् शोचनीय मृत्यु अपनी आँखोंसे देखकर सहन

करना मनुष्यकी शक्तिके बाहर है। वृन्दावनसे भी न सहा गया। तो भी उन्होंने अपने आपको सँभालनेके लिए एक बार चौखटको जोरसे पकड़ लिया, पर तुरन्त ही वे बदहवास होकर अपनी माँके पैरोंके पास गिर पड़े। लोग उन्हें उठाकर दूसरी कोठरीमें ले गये। कोई बीस मिनट बाद जब उन्हें होश हुआ, तब देखा कि चरण सिरके पास बैठा हुआ रो रहा है। वृन्दावन उठ बैठे और चरणका हाथ पकड़कर अपनी मृतप्राय माताके पैरोंके पास जाकर चुपचाप बैठ गये।

जो आदमी डाक्टर बुलानेके लिए गया था, उसने वापस आकर कहा कि डाक्टर साहब नहीं मिले। कहीं बाहर गये हैं और आज दिनभर नहीं लौटेंगे।

वृन्दावनकी माँका गला बिलकुल रुँध गया था, फिर भी ज्ञान था। लड़के और पोतेको अपने पास देखकर उनकी ज्योतिहीन दोनों आँखोंसे गरम गरम आँसू बह निकले। होठोंने बार बार काँपकर दास दासी आदि सभीको आशीर्वाद दिया। वह किसीके कानोंतक तो नहीं पहुँचा, तथापि सबके हृदयों तक अवश्य पहुँच गया।

तब तुलसीकी चौरीके पास कपड़ा बिछाकर उन्हें उसपर सुला दिया गया। वे थोड़ी देरतक तुलसीके पौधेकी ओर देखती रहीं और तदुपरान्त उनकी मलिन श्रान्त आँखें संसारकी अन्तिम निद्रासे धीरे धीरे बन्द हो गईं।

इसके उपरान्त वृन्दावनने जो ये छः दिन और छः रातें बिताईं वह केवल इस लिए कि बिताना ईश्वरके हाथ था। यदि स्वयं उनके हाथमें होता तो वे कभी न बीततीं।

पर चरण न तो अब खेलता ही है और न बातें ही करता है। वृन्दावनने उसे तरह तरहके मूल्यवान् खिलौने खरीद दिये थे, कई तरहकी गाड़ियाँ, जहाज और पशु-पक्षियोंकी तसवीरें आदि, जिनको लेकर इससे पहले वह दिन रात व्यस्त रहता था; पर अब वे सब चीजें घरके एक कोनेमें पड़ी रहती हैं, वह उन्हें छूता भी नहीं।

उस विपत्तिके दिन इस बालककी ओर ध्यान देनेका विचार भी किसीके मनमें नहीं आया। जिस समय लोग उसकी दादीके शवको चादरसे ढककर अर्थीपर रखकर जोर जोरसे 'हरि' नामका उच्चारण करते हुए ले जाने लगे, उस समय वह पास ही खड़ा हुआ आँखें फाड़ फाड़कर देख रहा था।

वह अपने मनमें प्रायः ही सोचा करता कि दादी मुझे भी अपने साथ क्यों नहीं

ले गई, क्यों बैल-गाड़ीके बदले आदमियोंके कन्धोंपर इस प्रकार सिरसे पैर तक कपड़ेमें लिपटी हुई चुपचाप चली गई, क्यों अब लौटकर नहीं आ रही हैं और क्यों बाबूजी इतना रो रहे हैं। उसकी इस हताश, विह्वल और नितान्त दुःखी मूर्त्तिने सभीका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया, केवल पिताकी दृष्टिको ही वह अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर सकी। माताकी इस आकस्मिक मृत्युने वृन्दावनको इस प्रकार आछन्न कर डाला था कि किसी बातकी ओर ध्यान देने, किसी बातपर बुद्धिपूर्वक देखने या चिन्ता करनेकी उनमें शक्ति ही न रह गई थी। उनकी उदास और उद्भ्रान्त दृष्टिके सामने जो कुछ आता था, वही बह जाता था, स्थिर न हो पाता था।

इन कुछ दिनोंसे सन्ध्या समय उनके शिक्षक दुर्गादास बाबू आ बैठते हैं और उन्हें बहुत तरहसे समझाते बुझाते हैं; परन्तु वृन्दावन अपने अन्तरमें कुछ भी ग्रहण नहीं कर पाते। क्योंकि एक इसी भावने उनको चारों ओरसे स्थायी रूपसे ग्रस लिया है कि अकस्मात् अनन्त समुद्रके बीचमें उनके जहाजका तला फँस गया है और हजार चेष्टा करनेपर भी यह टूटा हुआ जहाज किसी प्रकार बन्दर तक नहीं पहुँचेगा। तब अन्तमें जो समुद्रमें डूबनेको ही है, उसके लिए मरने पचनेसे क्या लाभ! यदि ऐसा न होता तो मेरी ऐसी स्त्री जीवनके सूर्योदयमें ही चरणको छोड़कर न खिसक जाती, ऐसे बुरे समयमें शायद कुसुमको भी दया आ जाती, वह इस प्रकार निष्ठुर होकर चरणका परित्याग न कर सकती। और फिर सबसे बढ़कर उनकी माता, ऐसी माँ कब किसे मिलती है? वे भी मानो अपनी इच्छासे बिदा ले गई और चलते समय एक बात भी न कह गई। इस प्रकार जब उनके विपर्यस्त मस्तिष्कमें विधाताकी इच्छा प्रति दिन स्पष्टसे स्पष्टतर होती हुई दिखाई देने लगी, तब घरकी पुरानी दासीने रोते रोते शिकायत करते हुए कहा—बाबूजी, क्या अन्तमें बच्चेको भी खो देना पड़ेगा? तुम उसे अपने पास भी नहीं बुलाते, प्यार भी नहीं करते। जरा उसकी हालत तो देखो, कैसा हो गया है!

दासीकी यह बात वृन्दावनको लाठीकी तरह लगी, जिससे मानो उनकी घोर तन्द्रा टूट गई। उन्होंने चौंककर पूछा—क्यों, चरणको क्या हुआ है?

दासीने अप्रतिभ होकर कहा—ईश्वर न करे, उसे कुछ हो। आओ बेटा चरण, यहाँ आओ। देखो, बाबूजी बुला रहे हैं।

चरण बहुत ही संकुचित भावसे धीरे धीरे आड़मेंसे निकलकर सामने आया।

आते ही वृन्दावनने झपटकर उसे कलेजेसे लगा लिया और सहसा रोकर कहा—क्यों चरण, क्या तुम भी चले जाओगे बेटा ?

दासीने बिगड़कर कहा—हैं बाबूजी, तुम यह क्या कह रहे हो !

वृन्दावनने लज्जित होकर आँखें पोंछ डालीं और बहुत दिनोंके बाद कुछ हँसनेकी चेष्टा की।

जब दासी अपने कामसे चली गई, तब चरणने बहुत ही धीरेसे कहा—बाबूजी, मैं माँके पास जाऊँगा।

वृन्दावनको यह जानकर बहुत सन्तोष हुआ कि यह दादीके पास नहीं जाना चाहता। उन्होंने बड़े प्यारसे कहा—बेटा, तुम्हारी माँ तो अब उस मकानमें नहीं है।

" कब आवेगी ? "

" सो तो नहीं मालूम बेटा, अच्छा आज ही मैं आदमी भेजकर पता लगाता हूँ। "

चरण बहुत खुश हुआ। वृन्दावनने बहुत कुछ सोच विचारकर उसी दिन केशवको पत्र लिख दिया कि आकर चरणको ले जाओ और अपने गाँवकी भीषण अवस्थाका भी उल्लेख कर दिया।

माताके श्राद्धके अब केवल दो दिन बाकी हैं। सबेरे वृन्दावन चण्डी-मण्डपके काममें लगे हुए थे कि खबर मिली, अन्दर चरणको कै और दस्त हो रहे हैं। वे दौड़े हुए गये, देखा कि चरण निर्जीवके समान बिछौनेपर पड़ा है और उसके कै दस्तोंके रंग-रूपमें विसूचिकाकी मूर्ति स्पष्ट दिख रही है।

वृन्दावनकी आँखोंके सामने सारा संसार घोर अन्धकारसे ढक गया, उनके हाथ पैर ऐंठकर बेकाम हो गये। वे अपने लड़केकी खाटके नीचे यह कहते हुए मुरदेकी तरह पड़ गये कि ' जरा जाकर केशवको खबर कर दो। '

कोई घण्टे-भर बाद गोपाल डाक्टरके बैठकखानेमें वृन्दावनने बहुत ही आकुल भावसे उसके दोनों पैर पकड़कर कहा—डाक्टर साहब, दया करके इस बच्चेके प्राण बचा दीजिए। मैंने चाहे जितने अधिक अपराध किये हों, पर वह बेचारा निर्दोष है। बिलकुल बच्चा है डाक्टर साहब, एक बार चलकर देख लीजिए। उसका कष्ट देखकर आपको भी दया आ जायगी।

गोपालने मुँह बिगाड़कर कहा—क्या उस समय नहीं जानते थे कि तारिणी

मुखोपाध्याय इन्हीं डाक्टर साहबके मामा हैं ? छोटे आदमी होकर रुपयोंके जोरसे ब्राह्मणका अपमान ! उस समय खयाल नहीं किया कि इन्हींके पैरोंपर सिर रखना पड़ेगा ?

वृन्दावनने रोते हुए कहा—आप ब्राह्मण हैं, मैं आपके पैर छूकर कहता हूँ कि तारिणी महाराजका मैंने जरा भी अपमान नहीं किया। मैंने जो उन्हें मना किया था, वह सारे गाँवके भलेके लिए ही किया था। आप तो डाक्टर हैं, आप जानते हैं कि इस समय पीनेका जल खराब करना कितना बड़ा अन्याय है !

गोपालने पैर छुड़ाकर कहा—हाँ, हाँ, अन्याय क्यों नहीं है ! मामाजीने बड़ा भारी अन्याय कर डाला। मैं डाक्टर हूँ, मैं नहीं जानता, तुम दुर्गादाससे अँगरेजीके चार हरफ पढ़कर मुझे ज्ञान सिखाने आये हो ! इतनी बड़ी पोखरीमें दो कपड़े धोनेसे पानी खराब हो जाता है ? हम मानो बिलकुल लड़के ठहरे ! नहीं भाई, और कोई बात नहीं है, यह सब रुपयोंकी गरमी है। छोटे आदमियोंके पास रुपया हो जाता है, तब ऐसा ही होता है। नहीं तो क्या तुम ब्राह्मणके लिए घाट बन्द कर सकते ? इतना दर्प ! इतना अहंकार ! जाओ, जाओ, मैं तुम्हारे मकानमें पैर नहीं रख सकता।

लड़केके लिए वृन्दावनकी छाती फटी जाती थी। वे फिर डाक्टरके पैर पकड़कर प्रार्थना करने लगे—डाक्टर साहब, मैं अपना अपराध स्वीकार करता हूँ, चरणोंकी धूल माथेपर लेता हूँ। डाक्टर साहब, एक बार चलिए, लड़केकी जान बचा दीजिए। मैं सौ रुपये दूँगा, दो सौ दूँगा, पाँच सौ दूँगा। आप जो चाहेंगे वही दूँगा। चलिए और दवा दीजिए।

पाँच सौ रुपये !

गोपाल डाक्टर नरम पड़ गये। भइया, तुम जानते नहीं हो, इस लिए साफ साफ कहता हूँ। तुम्हारे घर जाऊँगा, तो जातिसे निकाल दिया जाऊँगा। अभी अभी वे लोग आये थे ! नहीं भाई, तारिणी मामा आज्ञा नहीं देंगे, तो गाँवके सारे ब्राह्मण मिलकर मेरे साथ आहार व्यवहार बन्द कर देंगे। नहीं तो मैं डाक्टर ठहरा, मुझे इससे क्या ! रुपये लूँगा, दवा दूँगा। पर यह तो हो नहीं सकता। तुमपर दया करने जाऊँ तो फिर बाल-बच्चोंकी ब्याह-शादी कैसे करूँ ? यदि कलको मेरी माँ मर जाय, तो उसकी गति कैसे हो ! तब तुमको लेकर तो मेरा काम चलेगा नहीं। बल्कि एक काम करो। घोषाल महाशयको लेकर मामाजीके

पास जाओ। वे बूढ़े आदमी हैं, उनकी बात सभी मानते हैं। जरा उनके हाथ पैर जोड़ो। बस, वे एक बार कह दें; मैं चलनेके लिए तैयार हूँ। देखो, मैं अभी बहुत नई और बढ़ियाँ दवाएँ लाया हूँ। देते ही लड़का अच्छा हो जायगा।

वृन्दावन विह्वल दृष्टिसे देखते रहे। गोपालने भरोसा देते हुए फिर कहा—नहीं नहीं, तुम डरो मत। जाओ, देर मत करो। और देखो भइया, वहाँ रुपयोंकी बात कहनेकी जरूरत नहीं। जाओ, जल्दी जाओ।

वृन्दावन रोते रोते दौड़े और तारिणीके श्रीचरणोंमें जा पड़े। तारिणीने लात मारकर अपना पैर छुड़ाते हुए पिशाचोंकी तरह हँसकर कहा—मैं बिना सन्ध्या-वन्दन किये कभी पानी तक नहीं पीता। क्यों, मेरा कहना फला कि नहीं? निर्वंश हुए कि नहीं?

वृन्दावनका रोना सुनकर तारिणीकी स्त्री दौड़ी हुई आई और स्वयं रो पड़ी। स्वामीसे बोली—छीः छीः, ऐसा अधर्म मत करो। जो होना था, सो हो गया। हाय जरा-सा बच्चा है, ना समझ, गोपालसे कह दो कि वह जाकर दवा दे दे।

तारिणीने चिल्लाकर कहा—ठहर हरामजादी, मरदोंके बीचमें मत बोल।

उसने सिटपिटाकर वृन्दावनसे कहा—जाओ बेटा, मैं आशीर्वाद देती हूँ, तुम्हारा लड़का अच्छा हो जायगा। यह कहकर वह आँसू पोंछती हुई अन्दर चली गई।

वृन्दावन पागलोंकी तरह कातर भावसे प्रार्थना करने लगे, तारिणीके हाथ पैर पकड़ने लगे। मगर नहीं, फिर भी नहीं।

इसी समय शास्त्रज्ञ घोषाल महाशय पासके मकानमेंसे खड़ाऊँ पहने हुए खट खट करते हुए आ पहुँचे। सब बातें सुनकर प्रसन्न होते हुए बोले—शास्त्रोंमें लिखा है कि यदि कुत्तेको प्रश्रय दिया जाय, तो वह सिरपर चढ़ बैठता है। यदि छोटे आदमियोंका शासन न किया जाय, तो समाज ही नष्ट हो जाय। इसी तरहसे तो कलिकालमें धर्म-कर्म, ब्राह्मणोंका सम्मान सब लोप होता जाता है। क्यों जी तारिणी, उस दिन तुमसे कहा न था कि वृन्दावन बहुत बढ़ चला है! जब उसने मेरी बात नहीं मानी, तभी मैंने समझ लिया कि इसपर विधाता रूठ गये हैं, अब यह नहीं बच सकता। देखा तारिणी, हाथों हाथ फल मिल गया न?

तारिणीने मन ही मन अप्रसन्न होकर कहा—और मैं! मैंने भी तो उस दिन पोखरीके किनारे खड़े होकर हाथ उठाकर शाप दिया था कि निर्वंश हो जाओगे।

चाचा, मैं बिना सन्ध्या-वन्दन किये पानी नहीं पीता। अब भी चन्द्रमा और सूर्य निकलते हैं! अब भी ज्वार-भाटा होता है! यह कहकर तारिणी अपने एक-मात्र पुत्रके शोकसे आहत इस अभागे पिताकी असीम व्यथा उसी प्रकार अभिमानपूर्वक तृप्त दृष्टिसे उपभोग करने लगा जिस प्रकार कोई शिकारी अपने तीरसे आहत होकर जमीनपर गिरे हुए जन्तुकी मृत्यु-यन्त्रणा देखकर अपने अचूक निशानेका मजा लेता है।

किन्तु वृन्दावन उठ खड़े हुए। प्राण बचानेके लिए वे बहुत अनुनय-विनय कर चुके थे, बहुत कुछ कह सुन चुके थे। अब उन्होंने एक बात भी नहीं कही। घोर अज्ञान और अन्धतम मूढ़ताके असह्य अत्याचारने उनके पुत्र-वियोगकी वेदनाका भी अतिक्रम करके उनके आत्म-सम्मानको जगा दिया। वे इस व्यर्थ बकवादकी अन्तिम मीमांसा सुने बिना ही वहाँसे चुपचाप निकल आये कि जो काम सारे गाँवके मंगलकी कामनासे किया गया था, उसके फलस्वरूप इन दो धर्मनिष्ठ ब्राह्मणोंमेंसे किसकी गायत्री और सन्ध्या-वन्दनके तेजसे मैं निर्वंश होने जा रहा हूँ। और कोई दस बजे वे बिलकुल निरुद्विग्न और शान्त होकर अपने बीमार लड़केकी खाटके पास आकर खड़े हो गये।

केशव उस समय आग सुलगाकर चरणके हाथ पैर सेंक रहे थे और निदाघ-तप्त मरु-तृष्णाके साथ प्राणपणसे जूझ रहे थे। वृन्दावनके मुँहसे सब बातें सुनकर उनके मुँहसे निकला—ओफ!—

इसके बाद वे उठकर खड़े हो गये और एक दुपट्टा कन्धेपर रखकर बोले—मैं कलकत्ते जाता हूँ। यदि डाक्टर मिल गया तो सन्ध्या तक लौट आऊँगा और न मिला तो फिर मेरा यह जाना अन्तिम जाना समझना। ओफ! ये ही ब्राह्मण किसी दिन सारी पृथ्वीके अभिमानकी वस्तु थे! याद आते ही कलेजा फट जाता है वृन्दावन! अच्छा जाता हूँ। यदि बन सके तो लड़केको बचाए रखना भइया।

यह कहकर केशव जल्दीसे बाहर हो गये।

केशवके चले जानेपर चरणने पिताको अपने पास पाकर जोर जोरसे रोना शुरू किया—बाबूजी, मैं माँके पास जाऊँगा। वह स्वभावतः बहुत ही शान्त था। कभी किसी बातके लिए जिद करना जानता ही न था। पर आज उसे भुला रखना बहुत ही कठिन काम हो गया। ज्यों ज्यों दिन ढलने लगा, रोगकी यन्त्रणा बराबर बढ़ती गई। प्यासके हाहाकार और माँके पास जानेके उन्मत्त

चीत्कारसे उसने सभी लोगोंको पागल कर दिया। उसका यह चिल्लाना बन्द हुआ तीसरे प्रहर, जब कि उसके हाथ-पैर ऐंठने लगे और गला रुँध गया।

चैत्रका छोटा दिन जिस समय समाप्त हो रहा था, उस समय केशवने डाक्टरको साथ लिये घरमें प्रवेश किया। डाक्टर उन्हींके समवयस्क और मित्र थे। घरमें पैर रखकर चरणकी ओर देखते ही गम्भीर मुख बनाकर वे एक ओर बैठ गये। केशवने डरते हुए उनके मुँहकी ओर देखा। वे कुछ कहना ही चाहते थे, पर वृन्दावनकी ओर देखकर चुप रह गये।

यह देखकर वृन्दावनने बहुत ही शान्त भावसे कहा—हाँ, मैं ही इसका पिता हूँ। पर संकोच करनेकी जरा भी आवश्यकता नहीं। आप जो कुछ कहना चाहते हैं स्वच्छन्द होकर कहिए। डाक्टर साहब, जो पिता अपने एक मात्र लड़केको बिना किसी प्रकारकी चिकित्साके लेकर बैठा रह सकता है, वह सब-कुछ सह सकता है।

पिताका इतना धैर्य देखकर डाक्टर साहब मन ही मन स्तम्भित हो रहे। तथापि डाक्टर होनेपर भी वे मनुष्य थे। जो कुछ कहना चाहते थे, पिताके सामने नहीं कह सके, उन्होंने सिर नीचा कर लिया।

वृन्दावन मतलब समझकर बोले—तो केशव, अब मैं जाता हूँ। बगलमें ही ठाकुरजीवाली कोठरी है। आवश्यकता हो, तो बुलवा लेना। हाँ एक बात और है। समाप्तिसे पहले एक बार मुझे खबर दे देना, जिसमें एक बार और देख लूँ। यह कहकर वे चले गये।

जिस समय वृन्दावनने ठाकुरजीवाली कोठरीमें प्रवेश किया, अँधेरा हो रहा था। उन्होंने दाहिनी ओर देखा, यहीं बैठकर माँ जप किया करती थीं। सहसा उन्हें उस दिनकी बात याद आ गई जिस दिन वे कुंजनाथका निमन्त्रण पाकर गये थे, जिस दिन माँ कुसुमके हाथोंमें कड़े पहनाकर आशीर्वाद देकर घर आई थीं और चरणको गोदमें लेकर बैठी थीं; और स्वयं उन्होंने आनन्दसे उन्मत्त-हृदयसे ठाकुरजीके चरणोंमें अपनी असीम कृतज्ञता निवेदन करनेके लिए चुपचाप इस कोठरीमें प्रवेश किया था। और आज वे क्या निवेदन करनेके लिए आये हैं? वृन्दावनने जमीनपर लोटकर कहा—बगलकी कोठरीमें मेरा चरण मर रहा है। भगवन्, मैं इस बातकी फरियाद करनेके लिए नहीं आया हूँ। किन्तु, यदि पितृस्नेह तुम्हींने दिया है, तो फिर पिताकी आँखोंके सामने बिना चिकित्साके ही इस प्रकार निष्ठुर भावसे उसकी एक-मात्र सन्तानकी

हत्या क्यों होने दी ? पिताके हृदयकी थोड़ी-सी सान्त्वनाके लिए भी मार्ग क्यों खुला न रहने दिया ? फिर उन्हें वह पुरानी बात याद हो आई जो बहुतसे लोग बहुत दिनोंसे कहते चले आते हैं कि 'जो कुछ होता है, वह सब मंगलके लिए ही होता है !' उन्होंने मन ही मन कहा, जो लोग तुमपर विश्वास नहीं करते, उनकी बात वेही जानें, परन्तु मैं तो निश्चित रूपसे जानता हूँ कि तुम्हारी इच्छाके बिना पेड़का एक सूखा हुआ पत्ता भी जमीनपर नहीं गिर सकता। इसलिए, हे जगदीश्वर, आज मैं केवल यही प्रार्थना करता हूँ, मुझे समझा दो कि इसमें कौन-सा मंगल छिपा हुआ है ? मेरे इस जरा-से बच्चे चरणकी मृत्युसे संसारमें किसका क्या उपकार होगा ? यद्यपि वे जानते थे कि संसारकी सभी घटनायें मनुष्यकी बुद्धिमें नहीं आ सकतीं तथापि वे अपनी सारी शक्तिसे केवल यही सोचने लगे कि चरणने क्यों जन्म लिया, वह क्यों इतना बड़ा हुआ और क्यों उसे एक भी काम करनेका अवसर न देकर इस प्रकार बुला लिया गया।

थोड़ी देर बाद रातकी आरती आदि कृत्य सम्पन्न करनेके लिए पुरोहितजीने प्रवेश किया। उनके पैरोंकी आहटसे जब वृन्दावनका ध्यान टूटा और वे उठ बैठे तब उनकी उद्दाम आँधी शान्त हो गई थी। यद्यपि तब तक आकाशमें प्रकाशका उदय न हुआ था, तो भी मेघ-मुक्त, निर्मल, स्वच्छ आकाशके नीचे भविष्यत् जीवनके अस्पष्ट मार्गकी रेखा वे पहिचान रहे थे।

बाहर आनेपर आँगनमें एक ओर दरवाजेकी आड़में एक मलिन स्त्रीको देखकर वृन्दावन कुछ विस्मित हुए। इस समय अँधेरेमें यहाँ कौन बैठा है !

वृन्दावनने पास पहुँचकर एक क्षणमें ही समझ लिया कि कुसुम है। उनकी जिह्वाके अग्रभागपर आ गया कि 'कुसुम, क्या तुम मेरा यह सोलहों आने सुख देखनेके लिए आई हो ?' पर वे बोले नहीं।

अभी अभी वे अपने चरणकी शिशु-आत्माके मंगलके उद्देश्यसे अपना समस्त सुख-दुःख और मान-अभिमान त्याग कर आये थे, इसलिए, हीन प्रतिहिंसा करके मृत्यु-शय्यापर पड़े हुए अपने पुत्रका अकल्याण करनेकी इच्छा उन्हें नहीं हुई। बल्कि उन्होंने करुण कण्ठसे कहा—यदि तुम जरा और पहले आ जातीं तो चरणकी बहुत बड़ी साध पूरी हो जाती। आज दिन-भर उसने जितनी ही यंत्रणा पाई है, उतना ही वह तुम्हारे पास जानेके लिए रोया है। हाय, वह तुम्हें कितना चाहता था ! पर अब तो उसे होश ही नहीं है। आओ मेरे साथ।

कुसुम चुपचाप स्वामीके पीछे पीछे चल पड़ी। द्वारके पास पहुँचकर वृन्दावनने हाथसे चरणकी अन्तिम शय्या दिखलाते हुए कहा—देखो वह चरण पड़ा हुआ है। जाओ, उसे ले लो।—केशव, यह चरणकी माँ है।

यह कहकर वे धीरेसे दूसरी ओर चले गये।

दूसरे दिन सबेरे जब और किसीको कुसुमके पास जाकर बात कहनेका साहस नहीं हुआ, यहाँ तक कि कुंजनाथ भी डरकर हट गये, तब वृन्दावनने धीरेसे पास आकर कहा—अब इस लाशको पकड़े रहनेसे क्या लाभ! छोड़ दो, वे लोग ले जायँ।

कुसुमने सिर उठाकर कहा—उन लोगोंसे आनेके लिए कह दो। मैं आप ही उठाये देती हूँ।

इसके उपरान्त कुसुमने जिस प्रकार अविचलित दृढ़तासे चरणका मृत शरीर श्मशानको भेज दिया, उसे देखकर वृन्दावन भी मन ही मन भयभीत हो गये।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

चरणके छोटेसे शरीरको जलकर राख होनेमें विलम्ब नहीं लगा। केशव उस ओर देखते देखते सहसा भयंकर श्वास लेकर चिल्ला उठे—यह सब झूठ है! जो लोग बात बातमें कहते हैं कि भगवान् जो कुछ करते हैं, सब मंगलके लिए, वे सब शैतान है, हरामजादे हैं, बदमाश हैं!

वृन्दावन दोनों घुटनोंमें मुँह छिपाये पास ही स्तब्ध बैठे थे। उन्होंने घोर लाल और थकी हुई आँखें उठाकर थोड़ी देरतक देखते रहनेके उपरान्त कहा—केशव, श्मशानमें क्रोध नहीं करना चाहिए।

उत्तरमें केशव केवल 'ओफ्' करके चुप रह गये।

श्मशानसे लौटते समय रास्तेमें एक जगह एक पेड़के नीचे वाग्दियोंके (एक छोटी जाति) दो-तीन बच्चे खेल रहे थे। वृन्दावन ठहरकर टक लगाकर देखने लगे। जब बच्चे खेलनेके लिए वहाँसे हटकर एक दूसरे पेड़के नीचे दौड़ गये तब वृन्दावनने एक ठण्ढी साँस लेकर अपने मित्रके मुँहकी ओर देखते हुए कहा—जो प्रश्न कलसे दिन-रात मेरे मनमें उठ रहा था, जान पड़ता है कि इस समय मुझे उसका उत्तर मिल गया। संसारमें इकलौते लड़केके मरनेका भी कुछ प्रयोजन है।

केशव अब तक बक झक रहे थे। सहसा यह अद्भुत सिद्धान्त सुनकर अवाक् हो रहे।

वृन्दावनने कहा—तुम्हें कोई लड़का-बाला नहीं है। तुम हजार चेष्टा करनेपर भी मेरे अन्तरकी ज्वालाको नहीं समझ सकते। समझना असंभव है। यह ऐसी ज्वाला है जिसकी कोई अपने महा शत्रुके लिए भी कामना नहीं करता। परन्तु केशव, इसका भी कुछ मूल्य है। मुझे अब मालूम हो रहा है कि इसका बहुत बड़ा मूल्य है। इसीलिए, जान पड़ता है, भगवान्ने इसकी व्यवस्था कर दी है।

केशव उसी प्रकार निरुत्तर होकर मुँह देखते रहे। वृन्दावन कहने लगे—मेरी ज्वाला ठण्ढी हुई जा रही है उन बच्चोंके मुँहकी ओर देखकर। आज मैं सभी बच्चोंके मुँहमें चरणका मुँह देख रहा हूँ। अब मुझे सभी बच्चोंको खींचकर गले लगा लेनेकी इच्छा होती है। जब तक चरण जीता था, तब तक तो एक दिन भी ऐसा नहीं हुआ था!

केशव सिर झुकाकर चुपचाप सुनते हुए चलने लगे। पाठशालाका छात्र वनमाली और उसका छोटा भाई दोनों पानी और कलेऊ लिये चले जा रहे थे। वृन्दावनने पुकारकर पूछा—वनमाली, कहाँ जाते हो?

वनमालीने कहा—पण्डितजी, बाबूजीको कलेऊ देनेके लिए खेतपर जा रहा हूँ।

"जरा तुम लोग मेरे पास तो आओ।" कहकर वृन्दावनने अपने दोनों हाथ बढ़ाकर दोनोंको एक साथ ही खींचकर गलेसे लगा लिया और बहुत स्नेहसे उन लोगोंके मुँहकी ओर देखकर कहा—आह, वनमाली, कलेजा ठण्ढा हो गया। केशव,—कल बहुत डर हो रहा था कि मैंने चरणको सचमुच ही खो दिया। पर अब डर नहीं रहा। अब वह नहीं खोनेका। इन्हीं लोगोंमें मेरा चरण मिला हुआ है और इन्हींमेंसे मैं एक दिन उसे फिर पा जाऊँगा।

केशवने डरते हुए इधर उधर देखकर कहा—वृन्दावन, इन लोगोंको छोड़ दो। यदि इनकी माँ या और कोई देख लेगा, तो बहुत नाराज होगा।

"ओह! सो तो ठीक ही है। मैं चरणको जलाकर जो लौट रहा हूँ।" यह कहकर वृन्दावन उन्हें छोड़कर खड़े हो गये।

पण्डितजीके इस व्यवहारसे वनमाली लज्जासे सिमट आया था, छूटनेपर भाईके साथ जल्दीसे अदृश्य हो गया।

पण्डितजी उसी जगह रास्तेमें घुटनोंके बल बैठ गये और ऊपरकी ओर मुँह

करके दोनों हाथ जोड़कर कहने लगे—हे जगदीश्वर, तुमने चरणको तो ले लिया, पर मेरी आँखोंमेंसे यह दृष्टि न निकाल लेना। आज जिस तरह इन्हें देखने दिया है, ऐसा करो कि इसी तरह सदा ही सभी बालकोंके मुखमें अपने चरणका मुख देखा करूँ, इसी प्रकार उन्हें गलेसे लगानेके लिए सदा दोनों हाथ आगे हो जाया करें। केशव, तुम श्मशानमें खड़े होकर जिन लोगोंको गालियाँ देते थे, वे सभी शायद बदमाश नहीं हैं।

केशवने हाथ पकड़कर कहा—चलो, घर चलो।

वृन्दावन 'चलो' कहकर बहुत सहज ही उठ खड़े हुए और दो-एक कदम आगे बढ़कर बोले—भाई, आज मेरी वाचालताके लिए क्षमा कर देना।—केशव, मन पर बहुत भारी बोझ लदा हुआ था कि मुझे यह दण्ड क्यों मिल रहा है। मैंने अपनी जानकारीमें कोई गोहत्या या ब्रह्महत्या नहीं की थी कि भगवान् उसके लिए मुझे इतना बड़ा दण्ड देते। मेरा...

बात पूरी भी न होने पाई थी कि केशव उद्धततासे गरज उठे—उस हरामजादे बूढ़े घोषालसे पूछो। वह तो कहेगा उसके जप-तपके प्रभावसे और दूसरे पाजीसे चलकर पूछो, वह कहेगा कि पूर्व जन्मके पापसे। ओफ्! यही इस देशके ब्राह्मण हैं।

वृन्दावनने बहुत ही धीर भावसे कहा—केशव, काले साँपके केंचुलको लाठी मारनेसे कोई लाभ नहीं। सड़े हुए मठेकी दुर्गन्धका अपवाद दूधके सिर मढ़ना भूल है। बल्कि देखना तो यह चाहिए कि यह अज्ञान ब्राह्मणोंको भी कहाँ तक खींच ले गया है।

केशव उन सब बातोंका स्मरण करके मारे क्रोध और क्षोभके अन्दर ही अन्दर जल रहे थे, जो मुँहपर आ गया कहने लगे। बोले,—तो फिर इतना बड़ा दण्ड क्यों?

वृन्दावनने कहा—दण्ड तो यह नहीं है। केशव, मैं यही बात तो तुमसे कह रहा था कि जब मुझे किसी पापका स्मरण ही नहीं आता तब मैं इसे 'पापका दण्ड' मानकर अपने आपको छोटा नहीं देखना चाहता। इस जीवनमें तो मुझे यह स्मरण नहीं आता कि मैंने कोई पाप किया है। तब पूर्व जीवनके सिरपर भी व्यर्थ अपराध लादना आत्माका अपमान करना है। इसलिए न तो यह मेरे पापका फल है और न अपराधका दण्ड है। यह मेरे गुरुगृह-निवासके गौरवका क्लेश है। कोई भी बड़ी चीज बिना दुःखके नहीं मिलती। केशव, आज चरणकी मृत्युसे मुझे जितनी बड़ी शिक्षा मिली है, उतनी बड़ी शिक्षा पुत्र-शोकके समान बड़े

दुःखको छोड़कर और किसी प्रकार मिल ही नहीं सकती। यदि मैं अपना कलेजा चीरकर दिखला सकता तो तुम्हें दिखला देता कि आज संसारमें जितने बालक हैं, उन सभीको हमारा चरण अपनी जगहपर छोड़ गया है। तुम ब्राह्मण हो, आज मुझे केवल यही आशीर्वाद दो कि मैंने जो कुछ पाया है, उसे कभी अपने हाथसे न गवाँ दूँ, अपना सब-कुछ नष्ट न कर बैठूँ।

वृन्दावनका गला रुँध गया। दोनों मित्र आमने सामने खड़े होकर फूट फूट कर रोने लगे।

उस दिन वृन्दावनने केवल एक कुआँ तैयार करानेका संकल्प किया था, पर अब जान पड़ा कि केवल एक ही काफी नहीं है। गाँवके पूर्व भागमें अधिकांश गरीबोंका निवास है। इसलिए, जब तक उस मुहल्लेमें भी एक बड़ा कुआँ न न बनेगा, तब तक न तो जलका कष्ट दूर होगा और न हैजेका डर मिटेगा। इसीलिए केशव कम्पनीके साहबसे मिलकर यह समाचार ले आये कि यदि काफी रुपये खर्च किये जायँ तो ऐसा कुआँ तैयार किया जा सकता है जिससे केवल एक ही गाँवका नहीं, बल्कि पाँच-सात गाँवोंका कष्ट दूर किया जा सकता है। और इसके अतिरिक्त अनावृष्टिके समय खेतोंकी सिंचाईमें भी उससे बहुत बड़ी सहायता मिल सकती है।

वृन्दावन बहुत प्रसन्नतासे तैयार हो गये और इसीलिए श्राद्धके दिन उन्होंने अपनी देवोत्तर सम्पत्तिको छोड़कर शेष सारी सम्पत्ति रजिष्टरी करा देनेके लिए केशवके हाथ सौंप दी और कहा—केशव, ऐसा करो जिससे आगे विषाक्त जलके कारण मेरे चरणके अन्य भाईबन्धु न मरने पावें और मेरी समस्त सम्पत्तिसे बढ़कर सम्पत्ति यह पाठशाला है। इसका भार भी जब तुमने ले लिया तो फिर मुझे और किसी बातकी चिन्ता ही न रही। यदि मैं फिर कभी लौटकर इस ओर आऊँ तो इतना अवश्य देख सकूँ कि मेरी पाठशालाका कमसे कम एक छात्र वास्तव मनुष्य बन गया है। बस उसी दिन मुझे चरणका दुःख भूलेगा।

इधर कई दिनोंसे दुर्गादास बाबू सर्वदा ही उपस्थित रहते थे। उन्होंने बहुत ही क्षुब्ध होकर कहा—वृन्दावन, मुझे तो ढूँढ़नेपर भी कोई ऐसी बात नहीं मिलती जिसे कहकर मैं तुम्हें सान्त्वना दूँ। परन्तु, दुःख चाहे कितना ही बड़ा क्यों न हो, उसे सहनेमें ही तो मनुष्यत्व है। ईश्वरका यह अभिप्राय कभी नहीं है कि मनुष्य अक्षम और अपारग होकर संसारका त्याग कर दे।

वृन्दावनने सिर उठाकर कोमल स्वरसे कहा—मास्टर साहब, संसार त्याग करनेका तो मेरा कोई संकल्प ही नहीं है। बल्कि वह तो बिलकुल असम्भव है। लड़कोंका मुँह देखे बिना तो मैं एक दिन भी जीवित न रह सकूँगा। आपकी दयासे सभी लोग मुझे 'पण्डितजी' कहते हैं। मैं अपना यह सम्मान किसी प्रकार हाथसे न जाने दूँगा। और कहीं जाकर फिर यही व्यवसाय आरम्भ कर दूँगा।

दुर्गादास बाबूने कहा—परन्तु तुमने अपना सर्वस्व तो जल-कष्ट दूर करनेके लिए दान कर दिया; फिर तुम्हारा भरण-पोषण कैसे होगा ?

वृन्दावनने लज्जित होकर हँसते हँसते दीवारपर टँगी हुई भिक्षाकी झोली दिखाकर कहा—मास्टर साहब, वैष्णवके लड़केको मुट्ठी-भर भिक्षाका कहीं अभाव नहीं होगा। मेरे शेष दिन इसीसे बहुत मजेमें कट जायँगे। इसके सिवा यह सम्पत्ति मेरे चरणकी थी। वह मैंने उसीके संगी-साथियोंके लिए ही तो दान कर दी है।

दुर्गादासबाबू ब्राह्मण और वृद्ध होनेपर भी श्राद्धके दिन उपस्थित रहकर अपनी देख-रेखमें सब काम कराते रहे थे, इसीलिए उन्होंने भी कुसुमका यथार्थ परिचय पा लिया था। इस समय वे उसीका स्मरण करके बोले—नहीं भइया, यह ठीक न होगा। तुम्हारी बात दूसरी है, पर बहूके लिए यह बड़ी लज्जाकी बात होगी। ऐसा तो हो ही नहीं सकता।

वृन्दावनने सिर झुकाकर कहा—वह अपने भाईके पास रहेगी।

वृन्दावनको दुर्गादास अपने लड़केके समान चाहते थे। उनकी विपत्तिसे और सबसे बढ़कर इस गृह-त्यागके संकल्पसे वे अत्यन्त क्षुब्ध होकर रोकनेकी अन्तिम चेष्टा करते हुए बोले—वृन्दावन, तुम्हें जन्मभूमि त्यागनेकी क्या आवश्यकता है ? यहाँ रहकर भी तो सब काम पहलेकी ही भाँति हो सकते हैं।

वृन्दावनकी आँखें छलछला आईं। उन्होंने कहा—अब भिक्षा माँगकर निर्वाह करनेके अतिरिक्त मेरे लिए और कोई उपाय नहीं है। किन्तु वह मुझसे यहाँ न माँगी जायगी। इसके सिवा इस घरमें जहाँ मेरी निगाह पड़ती है, वहीं मुझे उसके छोटे छोटे हाथोंके चिह्न दिखाई पड़ते हैं। मास्टर साहब, मुझे क्षमा करें। मैं मनुष्य हूँ, मनुष्यका सिर इतने भारसे पिचल जायगा।

दुर्गादास दुःखी होकर चुप हो रहे।

जिन डाक्टरने चरणकी अन्तिम चिकित्सा की थी, उस दिनकी मर्मान्तिक घटनाने उनको भी आच्छन्न कर डाला था। उसका अन्त देखनेका कुतूहल और

वृन्दावनके प्रति उनका जो अदम्य आकर्षण हो गया था वह उन्हें उसी दिन सबेरे बिना बुलाये कलकत्तेसे खींच लाया था। अब तक वे सब बातें चुपचाप सुन रहे थे। वृन्दावनके इतने बड़े वैराग्यका कारण तो किसी प्रकार समझमें आ सकता था, पर उनकी समझमें यह बात नहीं आती थी कि केशव किस लिए अपनी समस्त भावी उन्नतिको जलांजलि देकर स्वेच्छापूर्वक इस तुच्छ पाठशालाका भार अपने ऊपर ले रहे हैं। उन्होंने विस्मित होकर अपने मित्रसे पूछा—केशव, क्या सचमुच ही तुम अपने ऐसे उज्ज्वल भविष्यत्‌को विसर्जित कर पाठशालामें ही अपना सारा जीवन व्यतीत कर दोगे?

केशवने संक्षेपमें कहा—शिक्षा देना ही तो मेरा व्यवसाय है।

डाक्टरने कुछ उत्तेजित होकर कहा—यह तो मैं भी जानता हूँ; पर क्या कालिजकी प्रोफेसरी और इस पाठशालाकी पण्डिताई दोनों बराबर हैं? भला मैं भी तो सुनूँ कि इसमें तुम अपनी उन्नतिकी क्या आशा रखते हो?

केशवने बहुत ही सहज भावसे कहा—सब कुछ। अविनाश बाबू, रुपया-पैसा कमाना और उन्नति दोनों एक नहीं हैं।

"मैं मानता हूँ कि एक नहीं हैं। परन्तु, ऐसे गाँवमें निवास करना भी तो एक महापातक है!—ओफ, इसका ध्यान करनेसे ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं!"

वृन्दावन हँस पड़े और केशवके उत्तर देनेसे पहले ही बोल उठे—यह क्या केवल गाँवका ही अपराध है डाक्टर साहब, आप लोगोंका नहीं? आज मेरी दुर्दशा देखकर आप काँप उठे हैं; परन्तु, ऐसी ही दुर्दशामें प्रतिवर्ष कितने शिशु, कितने पुरुष और कितनी स्त्रियाँ मरती हैं, इसपर भी कभी किसीकी दृष्टि पड़ती है? यदि आप सब हम लोगोंको इस निर्मम भावसे परित्याग करके न चले जाते, तो हम लोग इस प्रकार निरुपाय होकर न मरते। डाक्टर साहब, बुरा न मानिएगा; जो लोग आपके खानेके लिए अन्न और पहननेके लिए वस्त्र प्रस्तुत करते हैं, वे सब अभागे दरिद्र इन्हीं गाँवोंमें रहते हैं। उन्हीं लोगोंको पैरों तले कुचलकर आप लोगोंके ऊपर चढ़नेकी सीढ़ी तैयार होती है। केशव एम० ए० पास करके भी उसी उन्नतिके मार्गसे स्वेच्छापूर्वक मुँह मोड़कर खड़े हो गये हैं।

केशव आनन्द और उत्साहके मारे सहसा वृन्दावनको आलिंगन करके बोल उठे—वृन्दावन, तुमने मुझे मनुष्य होनेका कितना बड़ा अवसर दिया है! दस

बरस बाद तुम एक बार फिर कृपा कर यहाँ आना और देख जाना कि तुम्हारी जन्मभूमिमें लक्ष्मी और सरस्वती दोनोंकी प्रतिष्ठा हो रही है या नहीं।

दुर्गादास और अविनाश डाक्टर दोनों ही श्रद्धा और आश्चर्यसे इन दोनों मित्रोंके मुँह ताकते रह गये।

कल वृन्दावन केवल भिक्षाकी झोलीका सम्बल लेकर बाड़लसे चले जायँगे और घूमते-फिरते किसी जगह अपने लिए धर्म-क्षेत्र निर्वाचित कर लेंगे। केशवने उनसे कुछ दिनों तक अपने गाँवमें रहनेके लिए बार बार अनुरोध किया; परन्तु, वृन्दावनने उनकी बात नहीं मानी; क्यों कि, वे सुख और दुःख, सुबिधा और असुबिधाकी पूरी पूरी उपेक्षा करना चाहते हैं।

यात्राका उद्योग करके उन्होंने देव-सेवाका सारा भार पुरोहित और केशवको सौंप दिया और दास-दासी आदि सबकी उचित व्यवस्था कर दी। उनकी माँने अपने सन्दूकमें जो रुपये जमा कर रक्खे थे, वे सब रुपये उन्हीं लोगोंको देकर उन्हें बिदा कर दिया।

केवल कुसुमकी ही उन्होंने अभी तक कोई चिन्ता नहीं की थी। उस ओर अभी तक न तो उनकी प्रवृत्ति ही हुई थी और न उन्होंने उसकी कोई आवश्यक विवेचना ही की थी। जिस दिन उसने चरणको अपने यहाँ आश्रय नहीं दिया, उसी दिनसे उनके मनमें उसके प्रति एक प्रकारकी वितृष्णाका भाव उत्पन्न हो गया था और वह वितृष्णा उसकी मृत्युके उपरान्त उनकी इच्छा न होनेपर भी विद्वेषमें रूपान्तरित हो उठी थी। इसीलिए, उन्होंने अभीतक इस बातकी कुछ भी खोज खबर नहीं ली थी कि कुसुम क्यों आई है, किस प्रकार आई है, और किस लिए अभी तक है। और खोज-खबर न लेकर भी सोच रक्खा था कि वह आप ही आई है और श्राद्ध हो जानेपर आप ही चली जायगी। उसके आनेके बाद-यद्यपि काम पड़नेपर, वृन्दावनने विवश होकर कई बार उससे बातें की हैं, पर उस दिन सुबहको छोड़कर फिर कभी उन्होंने उसके मुँहकी ओर नहीं देखा। उधर कुसुमने भी उनसे मिलने अथवा बातचीत करनेकी लेश-मात्र भी चेष्टा नहीं की।

इस प्रकार ये थोड़ेसे दिन कट गये, पर अब तो और समय नहीं, इसीलिए वृन्दावनने एक दासीको बुलाकर यह जाननेके लिए कुसुमके पास भेजा कि वह कब जायगी और आप उत्तरकी प्रतीक्षामें बाहर खड़े रहे।

दासीने तुरन्त ही लौटकर कहा—वे अभी नहीं जायँगी।

वृन्दावनने चकित होकर कहा—अब तो यहाँ रहनेका ठिकाना नहीं है, तूने यह बात क्यों नहीं कह दी ?

दासीने कहा—वे खुद ही सब बातें जानती हैं ।

वृन्दावनने विरक्त होकर कहा—अच्छा तो फिर जाकर पूछ आओ कि क्या वह यहाँ अकेली ही रहेगी ?

दासी एक ही मिनटमें पूछकर लौट आई और बोली—हाँ ।

तब वृन्दावन स्वयं ही अन्दर चले गये । कमरेके किवाड़ बन्द थे । सहसा किवाड़ खोलकर उन्हें अन्दर जानेका साहस नहीं हुआ । जरा-सा किवाड़ा खोलकर अन्दरकी ओर देखते ही उनके शरीरमें रोमांच हो आया । जले हुए घरकी जली हुई दीवारकी तरह कुसुम इसी ओर मुँह किये खड़ी थी और उत्कट क्षिप्त दृष्टिसे देख रही थी । वृन्दावन आज पहले पहल यह देखकर पीछे हट गये कि आत्म-ग्लानि और पुत्र-शोक मनुष्यका कितनी जल्दी क्याका क्या कर डालता है ।

असावधानीके कारण किवाड़ोंके खटक उठनेसे कुसुमने देखा और आगे बढ़कर किवाड़ खोलते हुए कहा—अन्दर आओ ।

वृन्दावनके अन्दर आते ही कुसुमने संकल लगा दी और सामने आकर खड़ी हो गई । वृन्दावनको सन्देह हुआ कि शायद इसका चित्त ठिकाने नहीं है, यह पागल हो रही है, न जाने क्या कर बैठे ! उनकी छाती काँप उठी ।

किन्तु कुसुमने कोई असम्भव काण्ड नहीं किया । वह गलेमें आँचल डालकर और स्वामीके दोनों चरणोंमें अपना मुँह छिपाकर चुपचाप पड़ गई ।

वृन्दावनको फिर भी मारे भयके हिलने-डुलनेका साहस नहीं हुआ । वे चुपचाप ज्योंके त्यों खड़े रहे ।

कुसुम बहुत देर तक उसी अवस्थामें रहकर मानो उन्हीं पैरोंमेंसे शक्तिका संग्रह करने लगी । बहुत देर बाद वह उठकर बैठ गई और स्वामीके मुँहकी ओर देखकर बहुत ही करुण कण्ठसे बोली—सभी कहते हैं कि तुम सह सके हो; पर मेरे कलेजेमें तो दिन-रात भीषण आग जल रही है । मैं कैसे बचूँगी ? और तुम्हें छोड़कर मैं मरूँगी भी किस तरह ?

उस समय दोनोंके हृदयमें एक ही आग थी । वृन्दावनके हृदयकी विद्वेषकी आग बुझ गई । उन्होंने कुसुमका हाथ पकड़कर कहा—कुसुम, जिस प्रकार मुझे शान्ति मिली है, उसी प्रकार तुम्हें भी मिलेगी । इसके सिवा शान्तिका और कोई मार्ग नहीं है ।

कुसुम चुपचाप देखती रही। वृन्दावन कहने लगे—कुसुम, मैं जानता हूँ कि तुम चरणको कितना अधिक चाहती थीं; इसीलिए, मैं तुम्हें भी इस मार्गपर बुला रहा हूँ। तुम्हारा चरण मरा नहीं है, खोया भी नहीं है, वह केवल छिपा हुआ है। एक बार अच्छी तरह देखना सीख लोगी तो तुम्हें जान पड़ेगा कि यहाँ जितने लड़के लड़कियाँ हैं, हमारा चरण उन सभीके साथ है।

कुसुमकी आँखोंसे आँसू निकल पड़े। उसने फिर एक बार झुककर स्वामीके चरणोंपर अपना सिर रख दिया। थोड़ी देर बाद सिर उठाकर कहा—मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी।

वृन्दावनने कुछ डरते हुए कहा—मेरे साथ ? यह तो असंभव है।

"नहीं, खूब सम्भव है। मैं चलूँगी।"

वृन्दावनने उत्कण्ठित होकर कहा—किस तरह चलोगी कुसुम, मैं तुम्हारा पालन किस प्रकार करूँगा? मैं अपने लिए भीख माँग सकता हूँ, पर तुम्हारे लिए तो नहीं माँग सकता! और फिर इसके सिवा तुम पैदल किस प्रकार चलोगी ?

कुसुमने अविचलित स्वरसे कहा—मैं अच्छी तरह चल सकती हूँ। यहाँ तक पैदल चलकर ही तो आई हूँ। इसके सिवा मैं तुम्हें भिक्षा भी नहीं माँगने दूँगी, फिर चाहे वह भिक्षा तुम्हारे लिए हो और चाहे मेरे लिए हो। तुम केवल अपना काम करते चलना। मैं जीविकाका उपाय करना भी जानती हूँ और गृहस्थी चलाना भी जानती हूँ। अपने भाईकी गृहस्थी अब तक मैं ही चलाती रही हूँ।

वृन्दावन सोचने लगे। कुसुमने कहा—सोच-विचार व्यर्थ है, मैं अवश्य चलूँगी। अवहेला करके मैं अपना लड़का गवाँ चुकी हूँ, अब स्वामीको नहीं गवाँना चाहती।

वृन्दावनने कुछ देर सोचकर पूछा—मेरा चरण जिस मंत्रसे मुझे दीक्षित कर गया है, क्या तुम भी अपने आपको उसी मंत्रसे दीक्षित कर सकोगी ?

कुसुमने शान्त और दृढ़ मनसे कहा—हाँ, कर सकूँगी।

वृन्दावनने 'अच्छा तो फिर चलो,' कहकर अपनी सम्मति जता दी और एक बार केशवपर सब भार सौंपकर वे उसी रातको अपनी स्त्रीको साथ लेकर बाड़लसे चले दिये।

समाप्त

मँझली बहन

किशनकी माँ चने-मुरमुरे भून भूनकर, बड़ी बड़ी चिन्ताएँ करके, बड़ी ही गरीबीमें उसे चौदह वर्षका करके मर गई। किशनके लिए गाँवमें कहीं खड़े होनेको भी जगह न रही। उसकी सौतैली बड़ी बहन कादम्बिनीकी अवस्था अच्छी थी, इसलिए सभी लोगोंने कहा—जाओ किशन, तुम अपनी बड़ी बहनके घर जाकर रहो। वे बड़े आदमी हैं। वहाँ अच्छी तरह रहोगे।

माताके दुःखमें रोते रोते किशनने बुखार बना लिया। अन्तमें अच्छे होनेपर उसने भीख माँगकर श्राद्ध किया। इसके बाद वह अपने मुँड़े हुए सिरपर एक छोटी-सी पोटली रखकर अपनी बहनके घर राजहाट जा पहुँचा। बहन उसे पहचानती थी। वह उसका परिचय पाकर और उसके आनेका कारण जानकर एकदम आग-बबूला हो गई। वह मजेमें अपने बाल-बच्चोंको लिये गृहस्थी जमाये बैठी थी। अचानक यह क्या उपद्रव खड़ा हो गया!

गाँवका जो बूढ़ा उसे रास्ता दिखलानेके लिए यहाँ तक साथ आया था, उसे दो-चार बहुत कड़ी बातें सुनाकर कादम्बिनीने कहा, "खूब, मेरे सगेको बुला लाये हो, रोटियाँ तोड़नेके लिए।" और फिर उसने अपनी सौतेली माँके उद्देश्यसे

कहा—बदजात जब तक जीती रही, तब तक तो एक बार भी नहीं पूछा, अब मरकर बेटेको भेजकर खबर ले रही है ! जाओ बाबा, पराये लड़केको यहाँसे लौटा ले जाओ । यह सब झंझट मुझे नहीं चाहिए ।

बूढ़ा जातका नाई था । किशनकी माँपर उसकी श्रद्धा थी, 'माँ' कहकर पुकारा करता था, इसीलिए, इतनी कड़ी बातें सुननेपर भी उसने पिंड नहीं छोड़ा । उसने आरजू-मिन्नत करके कहा—बहन, तुम्हारा घर लक्ष्मीका भंडार है । न जाने कितने दास-दासी, अतिथि-भिक्षुक, कुत्ते-बिल्लियाँ तुम्हारे घरमें पलते हैं । यह लड़का भी मुट्ठीभर भात खाकर बाहर पड़ा रहेगा, तुम्हें पता भी न चलेगा । बहुत ही शान्त और समझदार है । अगर भाई समझकर न रक्खो, तो एक दुःखी और अनाथ ब्राह्मणका लड़का समझकर ही घरके किसी कोनेमें जगह दे दो बिटिया ।

ऐसी स्तुतिसे तो पुलिसके दारोगाका मन भी पसीज जाता फिर कादम्बिनी तो केवल स्त्री थी ! इसलिए, उस समय वह चुप हो रही । बूढ़ेने किशनको आड़में ले जाकर दो-चार बातें समझा दीं और तब वह आँखें पोछता हुआ वहाँसे चला गया ।

किशनको आश्रय मिल गया ।

कादम्बिनीके पति नवीनचन्द्र मुकर्जीकी धान और चावलोंकी आढ़त थी । जब वे दोपहरको बारह बजे लौटकर घर आये, तब उन्होंने किशनकी ओर टेढ़ी नज़रसे देखते हुए पूछा—यह कौन है ?

कादम्बिनीने मुँह भारी बनाकर उत्तर दिया—तुम्हारे सगे रिश्तेदार हैं,—साले । लो इन्हें खिलाओ-पहनाओ, आदमी बनाओ,—तुम्हारा परलोक सुधर जायगा ।

नवीन अपनी सौतेली सासकी मृत्युका समाचार सुन ही चुके थे । सब बातें समझकर बोले—ठीक है । खूब सुडौल सुन्दर देह है ।

स्त्रीने कहा—शरीर सुडौल क्यों न होगा ? पिता जो कुछ धन-सम्पत्ति छोड़ गये थे, सभी तो कलमुँहीने इसके पेटमें ठूँस दी है । मुझे तो एक कानी कौड़ी भी न दी ।

शायद यहाँ यह बतलानेकी जरूरत न होगी कि उसके पिताकी धन-सम्पत्तिके नाम सिर्फ एक मिट्टीकी झोंपड़ी और उसके पास ही जँबीरी नींबूका एक पेड़-भर था ।

उसी झोंपड़ीमें बेचारी विधवा किसी तरह सिर छिपाकर रहा करती और नींबू बेचकर लड़केकी स्कूलकी फीस जुटाती। नवीनने गुस्सा दबाकर कहा—अच्छी बात है!

कादम्बिनीने कहा—अच्छी नहीं तो क्या बुरी है? तुम्हारे बड़े रिश्तेदार ठहरे। उसी तरह रखना पड़ेगा। इससे मेरे पाँचू गोपालके भाग्यमें एक बार एक जून भी खानेको जुट जाय तो वही बहुत है! नहीं तो देश-भरमें बदनामी जो फैल जायगी।

यह कहकर कादम्बिनीने पासवाले मकानके दूसरे खंडके एक कमरेकी खुली हुई खिड़कीकी ओर अपने क्रोध-भरे नेत्रोंसे अग्निकी वर्षा की। वह मकान उसकी मँझली देवरानी हेमांगिनीका था।

उधर किशन बरामदेमें एक किनारे सिर नीचा किये हुए मारे लज्जाके मरा जा रहा था। कादम्बिनी भंडारमें जाकर नारियलकी नरेटीमें थोड़ा-सा तेल निकाल लाई और किशनके पास रखकर बोली—अब झूठमूठ टिसुए बहानेकी जरूरत नहीं। जाओ तालमें नहा आओ। तुम्हें फुलेल-उलेल लगानेकी आदत तो नहीं है न?

इसके बाद उसने जरा जोरसे चिल्लाकर अपने स्वामीसे कहा—तुम नहाने जाओ तो इन बाबू साहबको भी लेते जाना। कहीं डूब-डाब गये तो घर-भरके हाथोंमें रस्सी पड़ जायगी।

किशन भोजन करने बैठा था। एक तो वह स्वभावतः भात कुछ अधिक खाता था, तिसपर कल दोपहरके बाद उसने कुछ खाया नहीं था, आज इतनी दूर चलकर आया था और फिर दिन भी ढल गया था। इन कई कारणोंसे थालीमेंका सारा भात खतम हो जानेपर भी उसकी भूख नहीं मिटी। नवीन पास ही भोजन कर रहे थे। यह देखकर उन्होंने पत्नीसे कहा—किशनको और थोड़ा भात दो।

"देती हूँ।" कहकर कादम्बिनी उठी और उसने भातसे परिपूर्ण भरी हुई एक थाली लाकर सबकी सब किशनकी थालीमें उलट दी। इसके बाद जोरसे हँसती हुई बोली—यह तो खूब हुआ! नित्य इस हाथीकी खुराक जुटानेमें तो हमारी सारी आढ़त खाली हो जायगी! सन्ध्याको दूकानसे दो मन मोटा चावल भेज देना। नहीं तो दिवालिया होना पड़ेगा, कहे देती हूँ।

मर्मान्तिक लज्जाके कारण किशनका चेहरा और भी झुक गया। वह अपनी माँका एक ही लड़का था। यह तो हमें नहीं मालूम कि अपनी दुःखिनी माँके यहाँ उसे महीन और बढ़िया चावल मिला करता था या नहीं, लेकिन हाँ, इतना जरूर मालूम है कि भर-पेट भात खानेके अपराधमें उसे कभी लज्जासे सिर नीचा नहीं करना पड़ा था। उसे ध्यान आया कि हजार अधिक खा लेनेपर भी मैं कभी अपनी माँकी खिलानेकी साध पूरी नहीं कर सकता था। उसे यह भी याद आया कि कुछ ही दिन पहले गुड्डी और परेता खरीदनेके लिए मैंने दो करछुल ज्यादा भात खाकर ही माँसे पैसे वसूल किये थे।

उसकी दोनों आँखोंसे आँसुओंकी बड़ी बड़ी बूँदें निकल कर चुपचाप उसकी थालीमें गिरने लगीं और वही भात वह सिर झुकाये हुए चुपचाप खाने लगा। उसे इतना भी साहस न हुआ कि बायाँ हाथ उठाकर आँसू तो पोंछ डाले। वह डरता था कि कहीं बहन देख न ले। अभी कुछ ही देर पहले वह झूठमूठ टिसुए बहानेके अपराधमें झिड़की खा चुका था। उसी झिड़कीने उसके इतने बड़े मातृ-शोककी भी गरदन दबा दी।

२

दोनों भाइयोंने पैतृक मकान आपसमें बाँट लिया था।

पासवाला दो-मँजिला मकान मझले भाई विपिनका है। छोटे भाईकी बहुत दिन पहले मृत्यु हो चुकी है। विपिन भी धान और चावलका ही रोजगार करता है। है तो उसकी भी अवस्था अच्छी, लेकिन बड़े भाई नवीनके समान नहीं। तो भी उसका मकान दो-मँजिला है। मँझली बहू हेमांगिनी शहरकी लड़की है। वह दास-दासी रखकर और चार आदमियोंको खिला-पिलाकर ठाठसे रहना पसन्द करती है। वह पैसा बचाकर गरीबी चालसे नहीं रहती, इसीलिए कोई चार बरस पहले दोनों देवरानी-जेठानी कलह करके अलग हो गई थीं। तबसे अब तक प्रकाश्यरूपमें कई बार झगड़े हुए हैं और कई बार वे मिट गये हैं, लेकिन मनोमालिन्य एक दिनके लिए भी कभी नहीं मिटा। कारण, वह एक-मात्र जेठानी कादम्बिनीके ही हाथमें था। वह खूब पक्की है और अच्छी तरह समझती है कि टूटी हुई हाँडीमें कभी जोड़ नहीं लगता। लेकिन मँझली बहू उतनी पक्की नहीं है। वह इस ढँगसे सोच-समझ भी नहीं

सकती। यह ठीक है कि झगड़ा पहले मँझली बहू ही कर बैठती है; लेकिन, फिर झगड़ा मिटानेके लिए, बातें करनेके लिए, और खिलाने-पिलानेके लिए वह मन ही मन छटपटाया भी करती और फिर एक दिन धीरेसे पास आ बैठती। अन्तमें, हाथ-पैर जोड़कर, रो-धोकर माफी माँगकर जेठानीको अपने घर पकड़ ले जाती और स्नेह करती। इसी तरह दोनोंके इतने दिन कट गये हैं।

आज कोई तीन साढ़े तीन बजे हेमांगिनी इस मकानमें आ पहुँची। कुएँके पास ही सीमेन्टके चबूतरेपर धूपमें बैठा हुआ किशन बहुत-से कपड़ोंको साबुन लगाकर साफ कर रहा था। कादम्बिनी दूर खड़ी हुई थोड़ेसे साबुनमें शरीरका अधिक बल लगाकर कपड़े धोनेका कौशल सिखा रही थी। वह मँझली देवरानीको देखते ही बोल उठी—मैया री मैया, यह लड़का कैसे गन्दे और मैले-कुचैले कपड़े पहिन-कर आया है!

बात ठीक थी। किशनके जैसी लाल किनारेकी धोती पहनकर और दुपट्टा ओढ़कर कोई अपने नाते-रिश्तेमें नहीं जाता। उन दोनों चीजोंको साफ करनेकी जरूरत अवश्य थी, लेकिन, धोबीके अभावके कारण सबसे अधिक आवश्यक था पुत्र पाँचू गोपालके दो जोड़ी और उसके पिताके दो जोड़ी कपड़े साफ करना। सो किशन वही कर रहा था। हेमांगिनी भी देखते ही समझ गई कि कपड़े किसके हैं, लेकिन, उस बातका कोई जिक्र न करके उसने पूछा—जीजी, यह लड़का कौन है?

लेकिन इससे पहले ही वह अपने घरमें बैठी बैठी आड़से सब बातें सुन चुकी थी। जेठानीको इधर उधर करते देख उसने फिर कहा—लड़का तो बहुत सुन्दर है। इसका चेहरा बिलकुल तुम्हारी ही तरह है जीजी, क्या तुम्हारे मैकेका ही कोई है?

कादम्बिनीने विरक्त गम्भीर मुख बनाकर कहा—हूँ, मेरा सौतेला भाई है। अरे ओ किशना, अपनी मँझली बहनको प्रणाम तो कर। छीः, कैसा असभ्य है! बड़ोंको प्रणाम करना होता है, यह भी क्या तेरी अभागिनी माँ सिखलाकर नहीं मरी?

किशन हड़बड़ाकर उठ खड़ा हुआ और कादम्बिनीके पैरोंके पास आकर प्रणाम करना ही चाहता था कि उसने बिगड़कर कहा—अरे मर, क्या पागल और बहरा है? किसे प्रणाम करनेको कहा और किसे आकर प्रणाम करता है!

असलमें जबसे किशन आया है, तभीसे तिरस्कार और अपमानके अविश्रान्त आघातोंसे उसका दिमाग ठिकाने नहीं रह गया है। उस फटकारसे व्यस्त और हत-बुद्धि-सा होकर ज्यों ही उसने हेमांगिनीके पैरोंके पास आकर सिर झुकाया त्यों ही उसने हाथ पकड़कर उसे उठा लिया और उसकी ठोढ़ी छूकर आशीर्वाद देते हुए कहा—बस बस, रहने दो भइया, हो चुका। तुम जीते रहो।

किशन मूढ़की तरह उसके मुँहकी ओर देखता रहा। मानो यह बात उसके दिमागमें बैठी ही नहीं कि इस देशमें कोई इस तरह भी बातें कह सकता है।

उसका वह कुण्ठित, भीत और असहाय मुख देखते ही कादम्बिनीका कलेजा हिल गया और मानो अन्दरसे रुलाई-सी आ गई। वह अपने आपको सँभाल नहीं सकी। उसने जल्दीसे इस अभागे अनाथ बालकको खींचकर हृदयसे लगा लिया और उसका परिश्रान्त तथा पसीनेसे तर मुख अपने आँचलसे पोंछते हुए जेठानीसे कहा—हाय हाय! जीजी, भला इससे कपड़े धुलवाने होते हैं! किसी नौकरको क्यों न बुला लिया?

कादम्बिनी हठात् अवाक् हो गई और कोई उत्तर न दे सकी। लेकिन, पल-भरमें ही अपने आपको सँभालकर बोली—मँझली बहू, मैं तुम्हारी तरह अमीर तो हूँ नहीं जो घरमें दस-बीस नौकर-चाकर रख छोड़ूँ। हमारे गृहस्थोंके घरमें...

बात समाप्त होनेके पहले ही हेमांगिनीने अपने घरकी ओर मुँह करके लड़कीको पुकारकर कहा—उमा, शिब्बूको तो यहाँ भेज दे बेटी। जरा आकर जेठजीके और पाँचूके मैले कपड़े तालमेंसे धो लावे और सुखा दे।

इसके बाद उसने जेठानीकी ओर मुड़कर कहा—आज सन्ध्याको किशन और पाँचूगोपाल दोनों मेरे ही वहाँ खायँगे। स्कूलसे आते ही उसे मेरे यहाँ भेज देना। तब तक मैं इसे लिये जाती हूँ।

इसके बाद किशनसे कहा—किशन, इनकी तरह मैं भी तुम्हारी बहन हूँ। आओ, मेरे साथ चलो।

यह कहकर वह किशनका हाथ पकड़कर अपने घर ले गई।

कादम्बिनीने कोई बाधा नहीं दी। उलटे उसने हेमांगिनीका दिया हुआ इतना बड़ा ताना भी चुपचाप हजम कर लिया। कारण, जिसने ताना दिया था उसने इस जूनका खर्च भी बचा दिया था। कादम्बिनीके लिए संसारमें पैसेसे बढ़कर और कुछ नहीं था। इसीलिए, अगर गौ दूध देते समय लात भी मारती तो वह सह लेती थी।

३

सन्ध्या समय कादम्बिनीने पूछा—क्यों रे किशन, वहाँ क्या खा आया ?

किशनने बहुत ही लज्जित भावसे सिर झुकाकर कहा—पूरी।

" काहेके साथ खाई ? "

किशनने फिर उसी प्रकार कहा—रोहू मछलीके मूड़की तरकारी, सन्देश रसगु...

" दुत्। मैं पूछती हूँ कि मँझली बहूने मछलीका मूँड़ किसकी थालीमें परोसा था ? "

हठात् यह प्रश्न सुनकर किशनका चेहरा पीला पड़ गया। प्रहारके लिए उद्यत शस्त्रके सामने रस्सीमें बँधे हुए जानवरकी जो हालत होती है, किशनकी छातीके भीतरकी भी ठीक वही हालत होने लगी। देर करते हुए देखकर कादम्बिनीने फिर पूछा—तेरी ही थालीमें रखा था न ?

बहुत बड़े अपराधीकी तरह किशनने सिर झुका दिया।

पास ही बरामदेमें बैठे हुए नवीन तमाखू पी रहे थे। कादम्बिनीने सम्बोधन करके कहा—सुन रहे हो न ?

नवीनने संक्षपमें केवल ' हूँ ' करके फिर तमाखूका कश खींचा।

कादम्बिनी गरम होकर कहने लगी—यह अपनी है ! जरा इस सगी चाचीका व्यवहार तो देखो ! वह क्या नहीं जानती कि मेरे पाँचू गोपालको मछलीका मूँड़ कितना अच्छा लगता है ? तब उसने क्या समझकर वह मूँड़ उसकी थालीमें न देकर इस तरह अकारथ नष्ट किया ? अरे हाँरे किशन, सन्देश और रसगुल्ला तो तूने खूब पेट भरकर खाये न ? कभी सात जनममें भी तैंने ऐसी चीजें न देखी होंगी।

इसके बाद उसने फिर स्वामीकी ओर देखकर कहा—जिसके लिए मुट्ठी-भर भात भी गनीमत हो, उसे पूरी और सन्देश खिलाकर क्या होगा ? लेकिन मैं तुमसे कहे देती हूँ कि मँझली बहू अगर किशनको बिगाड़ न दे तो तुम मुझे कुतिया कहकर पुकारना।

नवीन बिलकुल चुप रहे। कारण, उन्हें ऐसी दुर्घटनापर विश्वास न हुआ कि कादम्बिनीके रहते हुए मँझली बहू किशनको बिगाड़ सकेगी। लेकिन, उनकी स्त्रीको स्वयं अपने आपपर ही विश्वास नहीं था। बल्कि उसे इस बातका सोलहों आने

डर था कि मैं सीधी सादी भली मानुस हूँ, मुझे चाहे जो ठग सकता है और इसीलिए उसने तभीसे छोटे भाई किशनकी मानसिक उन्नति और अवनातिके प्रति अपनी प्रखर दृष्टि बिछा दी।

दूसरे ही दिन दो नौकरोंमेंसे एक नौकर छुड़ा दिया गया। अब नवीनकी धान और चावलवाली आढ़तमें किशन काम करने लगा। वहाँ वह चावल आदि तौलता, बिक्री करता, चार-पाँच कोसका चक्कर लगाकर नमूने ले आता और जब दोपहरको नवीन भोजन करनेके लिए घर आते, तब दूकान देखता।

दो दिन बादकी बात है। नवीन आहार और निद्रा समाप्त करके लौटकर दूकानपर गये और किशन भोजन करनेके लिए घर आया। उस समय तीन बजे थे। वह जब तालमेंसे स्नान करके आया, तब उसने देखा बहन सो रही है। उस समय उसे इतनी तेज भूख लग रही थी कि जरूरत होती तो शायद वह बाघके मुँहसे भी खानेको निकाल लाता; लेकिन, बहनको जगानेका उसे साहस नहीं हुआ।

वह रसोईघरके बाहरवाले बरामदेमें एक कोनेमें चुपचाप बैठा हुआ बहनके जागनेकी प्रतीक्षा कर रहा था कि अचानक उसने पुकार सुनी—किशन! वह आह्वान उसके कानोंको कैसा स्निग्ध जान पड़ा! उसने सिर उठाकर देखा कि मँझली बहन अपने दूसरे मंजिलके कमरेमें खिड़कीके पास खड़ी है। किशनने केवल एक बार ही देखकर सिर झुका लिया। थोड़ी देरमें हेमांगिनी नीचे उतर आई और उसके सामने आकर खड़ी होकर बोली—कई दिनसे दिखाई नहीं दिया किशन। यहाँ चुपचाप क्यों बैठा है?

एक तो भूखमें जरा़हीमें आँखोंमें आँसू आ जाते हैं, तिसपर ऐसा स्नेहपूर्ण कंठ-स्वर! उसकी आँखें छलछला आईं। वह चुपचाप सिर झुकाये बैठा रहा, कोई उत्तर न दे सका।

मँझली चाचीको सभी बाल-बच्चे प्यार करते हैं। उसकी आवाज सुनकर कादम्बिनीकी छोटी लड़की बाहर निकल आई और चिल्लाकर बोली—किशन मामा, रसोईघरमें तुम्हारे लिए भात ढका हुआ रक्खा है। जाकर खा लो। माँ खा-पीकर सो गई है।

हेमांगिनीने चकित होकर कहा—किशनने अभी तक खाया नहीं?—तेरी माँ खाकर सो रही है? हाँ रे किशन, आज इतनी देर क्यों हो गई?

किशन सिर झुकाये ही बैठा रहा। टुनीने उसकी तरफसे जवाब दिया—

मामाको तो रोज ही इतनी देर हो जाती है। जब बाबूजी खा-पीकर दूकान पहुँच जाते हैं, तभी तो ये खाने आते हैं।

हेमांगिनीने समझ लिया कि किशनको दूकानके कामपर लगा दिया है। अवश्य ही उसने यह आशा तो नहीं की थी कि इसे खाली बैठे खानेको दिया जायगा, फिर भी इस ढली हुई बेलाको देखकर और साथ ही भूख और प्याससे आर्त्त बालकके मुँहकी ओर निहारकर, उसकी आँखोंसे जल बहने लगा। वह आँचलसे आँसू पोंछती हुई अपने घर चली गई और कोई दो ही मिनट बाद हाथमें दूधसे भरा हुआ एक कटोरा लेकर आ गई; लेकिन, रसोईघरमें पहुँचते ही वह सिहिर उठी और मुँह फेरकर खड़ी हो गई।

किशन खाने बैठा था। पीतलकी एक थालीमें ठंढा, सूखा और ढेले बना हुआ भात था। एक तरफ कुछ दाल थी और पास ही तरकारीकी तरहकी कोई चीज। दूध पाकर उसका मलिन मुख हँसीसे भर गया।

हेमांगिनी दरवाजेसे बाहर आकर खड़ी रही। भोजन समाप्त करके किशन जब तालपर कुल्ला करने चला गया तब उसने झाँककर देखा कि थालीमें एक दाना भात भी नहीं बचा है। मारे भूखके वह सारा भात खा गया है।

हेमांगिनीका लड़का ललित भी प्रायः उसी उमरका था। जब उसे यह खयाल आया कि अगर कहीं मैं न रहूँ और मेरे लड़केकी भी ऐसी दशा हो तो? इस कल्पनासे रुलाईकी लहर उसके गले तक आकर फेनिल हो उठी। वह उस रुलाईको दबाये हुए अपने घर चली गई।

४

हेमांगिनीको बीच बीचमें सर्दीके कारण बुखार हो आता था और दो-तीन दिन रहकर आप ही आप अच्छा हो जाता था। कुछ दिनों बाद इसी तरह उसे बुखार हो आया। सन्ध्याके समय वह अपने बिछौनेपर पड़ी हुई थी। घरमें कोई नहीं था। अचानक उसे मालूम हुआ कि बाहर कोई किवाड़की आड़में खड़ा हुआ अन्दरकी तरफ झाँक रहा है। उसने पुकारा—बाहर कौन खड़ा है? ललित?

किसीने उत्तर नहीं दिया। जब उसने फिर उसी तरह पुकारा, तब उत्तर मिला—मैं हूँ।

"कौन? मैं कौन? आ, अन्दर आकर बैठ।"

किशन संकोचपूर्वक कमरेके अन्दर आकर दीवारके साथ सटकर खड़ा हो

गया। हेमांगिनी उठकर बैठ गई और उसे अपने पास बुलाकर स्नेहपूर्वक पूछने लगी—क्यों रे किशन ?

किशन कुछ और आगे खिसक आया और अपने मैले दुपट्टेका छोर खोलकर दो अध-पके अमरूद निकालकर बोला—बुखारमें ये बहुत अच्छे होते हैं* ।

हेमांगिनीने आग्रहपूर्वक हाथ बढ़ाकर कहा—ये तुझे कहाँ मिले ? मैं कलसे लोगोंकी कितनी खुशामद कर रही हूँ, लेकिन किसीने लाकर नहीं दिये ।

यह कहकर हेमांगिनीने अमरूदके सहित किशनका हाथ पकड़कर उसे अपने पास बैठा लिया। मारे लज्जा और आनन्दके किशनने अपना लाल मुँह नीचा कर लिया। यद्यपि ये अमरूदके दिन नहीं थे, और हेमांगिनी अमरूद खानेके लिए व्याकुल भी नहीं थी; तो भी ये दो अमरूद ढूँढ़कर लानेमें सारी दोपहरीकी धूप किशनके सिरपरसे निकली थी। हेमांगिनीने पूछा—हाँ रे किशन, तुझसे किसने कहा कि मुझे बुखार आया है ?

किशनने कोई उत्तर न दिया।

हेमांगिनीने फिर पूछा—और यह किसने कहा कि मैं अमरूद खाना चाहती हूँ ?

किशनने इसका भी कोई उत्तर नहीं दिया। उसने जो सिर नीचा किया, सो ऊपर उठा या ही नहीं। हेमांगिनीने पहले ही जान लिया था कि लड़का स्वभावसे बहुत ही लज्जाशील और भीरु है। उसने उसके सिरपर हाथ फेरा, बहुत ही प्रेमपूर्वक उसे 'भइया' कहा और न जाने किन किन कौशलोंसे उसका भय दूर करके उससे बहुत-सी बातें जान लीं। उसने बहुत ही अनुसन्धानपूर्वक पहले तो पूछा कि तुमने ये अमरूद कैसे और कहाँ पाये; और तब धीरे धीरे उसके गाँव-घरकी सब बातें, उसकी माताके सम्बन्धकी बातें, यहाँकी खाने-पीनेकी व्यवस्था, दूकानपर उसे जो जो काम करने पड़ते हैं, उन सबका विवरण आदि सभी बातें एक एक करके पूछ लीं; और तब अपनी आँखें पोंछते हुए कहा—देख किशन, तू अपनी इस मँझली बहनसे कभी कोई बात मत छिपाना। जब जिस चीजकी जरूरत हो, चुपचाप यहाँ आकर माँग लेना। माँग लेगा ?

* बंगाली सरदी और बुखारमें कच्चा अमरूद खाते हैं।—अनुवादक।

किशनने बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक सिर हिलाकर कहा—अच्छा।

वास्तविक स्नेह किसे कहते हैं, यह किशनने अपनी गरीब मातासे सीखा था। इस मँझली बहनमें उसी स्नेहका आस्वाद पाकर उसका रुका हुआ मातृ-शोक विगलित होकर बह गया। उठते समय उसने मँझली बहनके चरणोंकी धूल अपने मस्तकपर लगाई और तब मानो वह हवापर उड़ता हुआ बाहर निकल गया।

लेकिन उसकी बड़ी बहनका आक्रोश उसके प्रति प्रति दिन बढ़ता ही गया। कारण, वह सौतेली माँका लड़का है, बिलकुल निरुपाय लाचार है, आवश्यक होनेपर भी बदनामीके भयसे घरसे भगाया नहीं जा सकता और किसीको दिया भी नहीं जा सकता। इसलिए जब उसे रखना ही है, तब जितने दिन उसका शरीर चले, उतने दिन उससे खूब कसकर मेहनत करा लेना ही ठीक है।

घर लौटकर आते ही बहन पीछे पड़ गई—क्यों रे किशन, तू दोपहर-भर दूकानसे भागकर कहाँ गया था?

किशन चुप रह गया। कादम्बिनीने बहुत बिगड़कर कहा—बतला जल्दी। लेकिन फिर भी किशनने कोई उत्तर नहीं दिया। कादम्बिनी उन लोगोंमेंसे नहीं थी जिनका गुस्सा किसीको चुप रहते देखकर कम हो जाता है। इसलिए, वह बात कहलानेके लिए जितनी ही जिद करने लगी, बात न कहला सकनेके कारण क्रोध भी उसका उतना ही बढ़ता गया। अन्तमें उसने पाँचू गोपालको बुलाकर उसके कान मलवा दिये और रातको हाँड़ीमें उसके लिए चावल नहीं डाले।

आघात चाहे कितना ही बड़ा क्यों न हो, परंतु यदि वह प्रतिहत न हो, तो लगता नहीं है। पर्वतके शिखरसे गिरते ही मनुष्यके हाथ-पैर नहीं टूट जाते। टूटते वे तभी हैं, जब पैरोंके नीचेकी कठिन भूमि उस वेगका प्रतिरोध करती है। ठीक वही बात किशनके सम्बन्धमें हुई। माताकी मृत्युने जिस समय उसके पैरोंके नीचेका आधार-स्थल बिलकुल विलुप्त कर दिया, तबसे बाहरका कोई भी आघात उसे आघात देकर धूलमें नहीं मिला सका। वह गरीबका लड़का था लेकिन उसने कभी दुःख नहीं भोगा था और घुड़की-झिड़कीसे भी उसका परिचय नहीं हुआ था। तो भी यहाँ आनेके बादसे अब तक जो वह कादम्बिनीके दिये हुए कठोर दुःख और कष्ट अनायास ही भोग सका था उसका कारण केवल यही था कि उसके पैरोंके नीचे कोई अवलम्बन नहीं था। लेकिन आज वह न सह

सका। आज वह हेमांगिनीके मातृ-स्नेहकी दृढ़ भित्तिपर खड़ा था और इसीलिए आजके इस अत्याचार-अपमानने उसे एकदम धराशायी कर दिया। माता और पुत्र दोनों मिलकर इस निरपराध और निराश्रय बालकका शासन करके, झिड़कियाँ देकर, अपमान करके, दंड देकर चले गये और वह अन्धकारमें जमीनपर पड़ा पड़ा बहुत दिनोंके बाद फिर अपनी माँको स्मरण करके और मँझली बहनका नाम ले-लेकर फूट फूटकर रोने लगा।

९

दूसरे दिन सबेरे ही किशन चुपचाप हेमांगिनीके घर पहुँचकर उसके बिछौनेपर पैतानेकी तरफ जाकर बैठ गया। हेमांगिनीने अपने पैर जरा ऊपर खींच लिये और स्नेहपूर्वक कहा—किशन, दूकान नहीं जायगा?

"अब जाऊँगा।"

"देर मत कर भइया। इसी समय चला जा। नहीं तो वह अभी गालियाँ देने लगेंगीं।"

किशनका चेहरा एक बार लाल और फिर एकदम पीला पड़ गया। "अच्छा जाता हूँ," कहकर वह उठ खड़ा हुआ। एक बार इधर-उधर करके वह कुछ कहना चाहता था, लेकिन फिर चुप हो गया। हेमांगिनीने मानो उसके मनकी बात समझ ली और पूछा—क्या मुझसे कुछ कहना चाहता है भइया?

किशनने जमीनकी ओर देखते हुए बहुत ही कोमल स्वरसे कहा—मँझली बहन, कल कुछ खाया नहीं है।

"हैं! कलसे कुछ खाया नहीं? कहता क्या है किशन?"

कुछ देर तक तो हेमांगिनी चुप रही, पर फिर तुरन्त ही उसकी आँखोंमें जल भर आया और धीरे धीरे झरझर करके बहने लगा। उसने उसे हाथ पकड़कर अपनी तरफ खींचकर पास बैठा लिया और जब एक एक करके उससे बातें सुन लीं तब कहा—कल रातको ही यहाँ क्यों न चला आया?

किशन चुप हो रहा। हेमांगिनीने आँचलसे आँसू पोंछते हुए कहा—भाई, तुझे मेरे सिरकी सौगन्ध है, आजसे मुझे अपनी मरी हुई माँकी जगह ही समझना।

यथा-समय ये सब बातें कादम्बिनीके कानों तक पहुँच गईं। उसने अपने घरसे ही मँझली बहूको पुकारकर कहा—क्या मैं अपने भाईको खिला नहीं सकती जो तुम उससे गले पड़कर इतनी बातें कहने गईं?

बातोंका ढँग देखकर हेमांगिनीके सारे शरीरमें आग लग गई। लेकिन वह उस भावको छिपाकर बोली—अगर मैंने गले पड़कर ही कुछ कहा, तो उसमें दोष क्या हो गया ?

कादम्बिनीने कहा—अगर मैं तुम्हारे लड़केको बुलाकर उससे इस तरहकी बातें कहूँ तो तुम्हीं बतलाओ कि तुम्हारी क्या इज्जत रह जायगी ? अगर तुम इस तरह उसे प्रश्रय दोगी, तो तुम्हीं बतलाओ उसे शासनमें कैसे रख सकूँगी ?

अब हेमांगिनीसे नहीं सहा गया। उसने कहा—बहन, पन्द्रह-सोलह बरस तुम्हारे साथ गृहस्थी चला चुकी हूँ; मैं तुम्हें पहचानती हूँ। पहले अपने लड़केको भूखा रखकर शासन करो, तब दूसरेके लड़केका करना। तब गले पड़कर बात कहने न आऊँगी।

कादम्बिनीने अवाक् होकर कहा—मेरे पाँचू गोपालके साथ उसकी तुलना ? देवताके साथ बन्दरकी बराबरी ? मँझली बहू, मैं सोचती हूँ, तुम इसके बाद और भी न जाने क्या क्या कहती फिरोगी।

मँझली बहूने उत्तर दिया—मैं जानती हूँ कि कौन देवता है और कौन बन्दर। लेकिन जीजी, अब मैं कुछ भी न कहूँगी। अगर कहूँगी तो खाली यही कि तुम्हारे जैसी निष्ठुर और तुम्हारे जैसी बेहया औरत इस दुनियामें कोई नहीं है।

यह कहकर बिना किसी उत्तरकी अपेक्षा किये हेमांगिनीने अपनी खिड़की बन्द कर ली।

उस दिन सन्ध्याके कुछ पहले अर्थात् घरमालिकोंके लौटकर आनेके समय, बड़ी बहूने अपने घरके आँगनमें खड़े होकर दासीको लक्ष्य करके उच्च कण्ठसे गर्जन-तर्जन शुरू कर दिया—जो दिन और रात करते हैं, वही इसकी व्यवस्था करेंगे। देखती हूँ, माँसे बढ़कर मौसीको दरद है ! अपने भाईका मर्म मैं नहीं समझती; समझते हैं पराये ! कभी भला नहीं होगा अगर कोई भाई-बहनको लड़ावेगा और खड़ा खड़ा तमाशा देखेगा। धर्म भी यह न सह सकेगा, यह मैं कहे देती हूँ।

यह कहकर कादम्बिनी अपने रसोईघरमें चली गई।

देवरानी-जेठानीमें इस ढंगकी गाली-गलौज और कोसा-काटी अनेक बार अनेक तरहसे हो चुकी है; लेकिन, आज उसमें तीखापन कुछ ज्यादा था।

अक्सर हेमांगिनी उसकी बातें सुनकर भी अनसुनी कर जाती थी, समझकर भी अपने ऊपर नहीं लेती थी। लेकिन आज उसका शरीर ठीक नहीं था, इसलिए वह उठ आई और खिड़कीके पास खड़ी होकर बोली—जीजी, इतना ही कहकर क्यों चुप हो गई? शायद भगवानने अभीतक तुम्हारी बात सुनी न हो। जरा और थोड़ी देरतक हमारे सर्वनाशकी कामना करो। जेठजी घर आवें, वे सुन लें। तबतक ये भी आ जायँ और सुन लें। अगर इतनेमें ही तुम थककर चुप हो जाओगी तो कैसे काम चलेगा?

कादम्बिनी तुरन्त दौड़ी हुई आँगनमें आ गई और सिर ऊपर उठाकर चिल्ला उठी—मैंने क्या किसी सत्यानाशीका नाम लिया है?

हेमांगिनीने स्थिर भावसे उत्तर दिया—भला तुम किसीका नाम क्यों लेने लगीं जीजी, नाम लेनेकी पात्री तुम नहीं हो। लेकिन क्या तुम यह समझती हो कि दुनियामें एक तुम्हीं सयानी और समझदार हो और बाकी सब अहमक हैं? ठोकर मारकर किसका सिर तोड़ रही हो, यह क्या कोई समझता नहीं?

अब कादम्बिनीने अपना असली रूप धारण किया। खूब मुँह बिचकाकर और हाथ-पैर नचाकर कहना शुरू किया—भले ही कोई समझ ले! जिसका दोष होगा, उसीको तो बुरा लगेगा! और फिर क्या तुम्हीं सब बातें समझती हो,—मैं नहीं समझ पाती? जब किशन आया था तब दो चाँटे खाकर भी चूँ नहीं करता था। जो कहती थी चुपचाप वही करता था। पर आज दोपहरको किसके बलपर क्या जवाब दे गया, जरा पूछ देखो इस प्रसन्नकी माँसे। और तब उँगलीसे दासीको दिखला दिया।

प्रसन्नकी माँने कहा—हाँ मझली बहू, यह बात तो ठीक है। आज दोपहरको जब वह भात छोड़कर उठ खड़ा हुआ, तब मालिकिनने कहा, 'जब इस भातके लीले बिना यमराजके घर जाना पड़ेगा, तब इतना तेज किस लिए' इसपर वह कह गया, 'अपनी मँझली बहनके रहते मैं किसीसे नहीं डरता।'

कादम्बिनीने दर्पके साथ कहा—क्यों, अब तो मालूम हो गया? बतलाओ, किसके बलपर उसे इतना तेज है? देखो मँझली बहू, आज मैं तुमसे साफ कह देती हूँ। तुम उसे बारबार मत बुलाया करो। भाई-बहनके बीचमें तुम मत पड़ो।

हेमांगिनीने फिर कुछ न कहा। एक केंचुएने भी साँपकी तरह कुंडली मारकर काटा है, यह सुनकर उसके आश्चर्यकी सीमा न रह गई। वह खिड़कीके

सामनेसे हटकर सोचने लगी कि कितने भारी उत्पीड़नके मारे उस निरीह बच्चेके द्वारा यह संभव हुआ होगा!

हेमांगिनीका सिर फिर भारी हो गया और ज्वर मालूम होने लगा; इसी लिए वह असमयमें ही पलंगपर निर्जीवोंकी तरह पड़ रही। उसके स्वामी कमरेमें प्रवेश करके इस ओर बिना कुछ ध्यान दिये ही गुस्सेसे भरे हुए कह बैठे—आज भाभीके भाईके बारेमें क्या झगड़ा खड़ा कर बैठीं हो? किसीके मना करनेपर भी सुनोगी नहीं और चाहे जिस अभागे लक्ष्मीके त्यागे हुएके पीछे कमर बाँधकर खड़ी हो जाओगी? मुझसे रोज रोजका यह बखेड़ा नहीं सहा जाता। आज भाभीने नाहक मुझे दस बातें सुना दीं।

हेमांगिनीने श्रान्त स्वरसे उत्तर दिया—तुम्हारी भाभी हककी बात कब कहती हैं जो आज ही नाहक दस बातें सुना दीं?

"लेकिन आज तो उन्होंने ठीक ही कहा है। मैं तो तुम्हारा स्वभाव जानता हूँ न। उस बार घरके ग्वालेके लड़केके बारेमें ऐसा ही किया। मोती कुम्हारके भानजेका ऐसा अच्छा बाग तुम्हारे कारण ही मुट्ठीके भीतरसे निकल गया। उलटे पुलिसको शान्त करनेके लिए सौ डेढ़ सौ गाँठसे देने पड़े। क्या तुम अपना भला-बुरा भी नहीं समझतीं? आखिर तुम्हारा यह स्वभाव कब जायगा?

अब हेमांगिनी उठकर बैठ गई और अपने पतिके मुखकी ओर देखकर बोली—मेरा स्वभाव तो मरनेपर ही जायगा, इससे पहले नहीं। मैं माँ हूँ, मेरी गोदमें लड़के-बाले हैं और ऊपर भगवान् हैं। इससे अधिक मैं बड़ोंकी शिकायत नहीं करना चाहती। मेरी तबीयत खराब है, इस समय बक-झक मत करो,—जाओ।

यह कहकर वह चादर खींचकर और करवट बदल कर लेट गई।

विपिनको और अधिक तर्क-वितर्क करनेका साहस नहीं हुआ। लेकिन वे मन ही मन अपनी स्त्रीपर और विशेषतः इस गलेकी बला अभागे किशनपर बहुत ही चिढ़ गये।

६

दूसरे दिन सबेरे खिड़की खोलते ही हेमांगिनीके कानोंमें जेठानीके तीक्ष्ण स्वरकी झनकारने प्रवेश किया। वह स्वामीसे कह रही थी—वह लड़का कलसे ही भागा हुआ है। तुमने उसकी बिल्कुल ही खोज-खबर न ली।

स्वामीने उत्तर दिया—चूल्हेमें चला जाय। खोज करनेकी जरूरत ही क्या है?

स्त्री महल्ले-भरको सुनाती हुई बोली—तब तो मारे निन्दाके इस गाँवमें रहना ही कठिन हो जायगा। यहाँ हमारे दुश्मन भी तो कम नहीं हैं। अगर कहीं गिर-पड़कर मर-मरा गया, तो कहे देती हूँ कि बड़े-छोटे सबको जेलखाने जाना पड़ेगा।

हेमांगिनीने सब बातें समझ लीं और तब वह तुरन्त ही खिड़की बन्द करके एक निःश्वास छोड़कर अन्यत्र चली गई।

दोपहरके समय वह रसोईघरके बरामदेमें बैठी रोटी खा रही थी कि एकाएक सामनेसे चोरोंकी तरह दबे पैरों किशन आकर खड़ा हो गया। उसके सिरके बाल रूखे थे और मुँह सूखा हुआ था। हेमांगिनीने पूछा—कहाँ भाग गया था रे किशन?

"भागा तो नहीं था। कल सन्ध्याके बाद दूकानपर ही सो गया था। जब नींद खुली, तब देखा कि आधी रात हो गई है। मँझली बहन, भूख लगी है।"

"जा, उसी घरमें जाकर खा।" कहकर हेमांगिनी फिर रोटी खाने लगी।

कोई एक मिनट तक चुपचाप खड़े रहनेके बाद किशन जा रहा था कि हेमांगिनीने उसे बुलाकर बैठाया और रसोईदारिनसे उसे वहीं जगह करके भात परोस देनेके लिए कहा।

किशन प्रायः आधा ही भोजन कर पाया था कि बाहरसे उमा घबराई हुई आई और उसने चुपचाप इशारेसे जतलाया कि बाबूजी आ रहे हैं।

लड़कीका भाव देखकर माँको आश्चर्य हुआ—आते हैं तो तू इस तरह क्यों कर रही है?

उमा किशनके पीछे खड़ी थी। उसने उत्तरमें उँगलीसे उसको दिखलाकर आँखें और मुँह मटकाकर इशारेसे बतलाया कि यह खा जो रहा है!

किशनने कुतूहलसे अपनी गरदन पीछेकी तरफ मोड़ ली थी। उमाकी उत्कंठित दृष्टि और शंकित मुखका संकेत उसने देखा। क्षण-भरमें ही उसका चेहरा सफेद हो गया। उसके मनमें कितना डर पैदा हुआ, यह वही जाने। वह 'मँझली बहन, जीजाजी आ रहे हैं' कहता हुआ भातकी थाली छोड़कर रसोईघरके दरवाजेकी आड़में जाकर खड़ा हो गया। उसकी देखादेखी उमा भी

एक तरफ भाग गई। जिस प्रकारका आचरण मकानके मालिकके आ पहुँचनेपर चोर किया करते हैं, ठीक वही आचरण ये दोनों भी कर बैठे। पहले तो हेमांगिनीने हत-बुद्धिकी भाँति एक बार इधर और एक बार उधर देखा और उसके बाद वह परिश्रान्त होकर दीवारके सहारे झुक गई। मानो लज्जा और अपमानका शूल उसके कलेजेमें इस पारसे उस पार हो गया। तत्काल ही विपिन आ पहुँचे और सामने ही स्त्रीको इस प्रकार बैठी देखकर पास जाकर उद्विग्न भावसे पूछने लगे—यह क्या ? खाना सामने रखकर इस तरह क्यों बैठी हो ?

हेमांगिनीने कोई उत्तर नहीं दिया। विपिनने और भी उत्कंठित होकर पूछा—क्या फिर बुखार हो आया ? इसके बाद उनकी दृष्टि उस थालीपर पड़ी, जिसमें आधा भात पड़ा हुआ था। पूछा—इतना भात थालीमें छोड़कर कौन उठ गया है ? ललित ?

हेमांगिनी उठकर बैठ गई और बोली—नहीं, उस घरका किशन खा रहा था। तुम्हारे डरके मारे किवाड़की आड़में छिप गया है।

"क्यों ?"

हेमांगिनीने कहा—क्यों, सो तो तुम ही अच्छी तरह जानते हो। और सिर्फ वही नहीं, तुम्हारे आनेकी खबर देकर उमा भी भाग गई है।

विपिनने मन ही मन समझ लिया कि स्त्रीकी बातें टेढ़े रास्ते जा रही हैं। शायद इसीलिए उन्होंने सीधे रास्तेपर लानेके लिए हँसते हुए कहा—आखिर वह किस डरसे भागी ?

हेमांगिनीने कहा—क्या जानूँ। शायद माँका अपमान अपनी आँखों देखनेके भयसे ही भाग गई हो। इसके दूसरे ही क्षण उसने ठंढी साँस लेकर कहा—किशन पराया लड़का ठहरा। वह तो छिपेगा ही। लेकिन पेटकी लड़कीतक यह विश्वास नहीं कर सकी कि उसकी माँको इतना भी अधिकार है कि वह किसीको बुलाकर एक कौर भात भी खिला सके।

अब विपिनने समझा कि मामला सचमुच ही भद्दा हो गया है। कहीं यह और आगे बढ़कर उग्र रूप न धारण कर ले, इसलिए उन्होंने इस अभियोगको एक सामान्य परिहासके रूपमें परिणत करके आँखें मटकाकर और गरदन हिलाकर कहा—नहीं, तुम्हें कोई अधिकार नहीं है। कोई भिखमँगा

आवे तो उसे भीखतक देनेका अधिकार नहीं है !—अच्छा, इन सब बातोंको जाने दो। कलसे तुम्हारे सिरमें फिर दरद तो नहीं हुआ ? मैं सोचता हूँ कि शहरसे केदार डाक्टरको बुलवा भेजूँ। और नहीं तो फिर एक बार कलकत्ते...

रोग और चिकित्साका परामर्श यहीं रुक गया। हेमांगिनीने पूछा—तुमने उमाके सामने किशनसे कुछ कहा था ?

विपिन मानो आकाशसे नीचे गिर पड़े। उन्होंने कहा—मैंने ? कहाँ, नहीं तो। ओह, ठीक है, याद आ गया। उस दिन शायद कुछ कहा था। भाभी नाराज होती हैं,—भइया बिगड़ते हैं। मालूम होता है कि उमा वहाँ खड़ी थी। जानती हो...

"जानती हूँ।" कहकर हेमांगिनीने बात दबा दी। विपिनके रसोईघरमें जाते ही उसने किशनको बाहर बुलाकर कहा—किशन, ये चार पैसे ले ले और दूकानसे जाकर कुछ चने मुरमुरे खरीदकर खा ले। भूख लगनेपर अब मेरे पास न आना। तेरी मझली बहनकी इतनी ताकत नहीं है कि वह बाहरके आदमीको एक कौर भात भी खिला सके।

किशन चुपचाप चला गया। अन्दर खड़े हुए विपिनने उसकी तरफ देखकर दाँत पीस लिये।

७

कोई पाँच छः दिन बाद एक रोज तीसरे पहर विपिनने अतिशय विरक्त चेहरेसे घरमें प्रवेश करते ही कहा—आखिर यह तुमने क्या बखेड़ा शुरू किया है ? किशन तुम्हारा कौन है जो तुम उस पराये लड़केके लिए दिन-रात अपने आदमियोंसे लड़ाई किया करती हो ? मैंने आज देखा कि भइया तक सख्त नाराज हैं।

इससे कुछ ही पहले अपने घरमें बैठकर बड़ी बहूने अपने स्वामीको उपलक्ष्य और मँझली बहूको लक्ष्य करके खूब जोर जोरसे चिल्लाकर अपशब्दोंके जो तीर छोड़े थे, उनमेंसे एक भी निष्फल न गया। उन सभीने आकर हेमांगिनीको छेद दिया था और हर एक तीर अपने फलमें जितना जहर ले आया था, उतनी उसकी ज्वाला भी जला रही थी। लेकिन बीचमें जेठ बैठे थे, इसलिए सब-कुछ सहनेके सिवा उसे प्रतीकार करनेका और कोई रास्ता ही नहीं मिल रहा था।

पुराने जमानेमें जिस तरह यवन लोग युद्धमें विजय प्राप्त करनेके लिए गौको

सामने रखकर राजपूतोंकी सेनापर बाणोंकी दृष्टि करते थे, बड़ी बहू मँझली बहूको आजकल प्रायः उसी तरह पराभूत किया करती थी।

स्वामीकी बातसे हेमांगिनी भड़क उठी। उसने कहा—कहते क्या हो! जेठजी तक नाराज हो गये हैं! इतनी बड़ी अचरजकी बात सुनकर उसपर एकाएक तो विश्वास नहीं होता! अब बतलाओ क्या करनेसे उनका गुस्सा थम जायगा?

विपिन मन ही मन बहुत नाराज हुए, लेकिन अपनी नाराजगी बाहर प्रकट करनेका उनका स्वभाव नहीं था। इसीलिए उन्होंने मनका भाव मनमें ही छिपाकर सहज भावसे कहा—हजार हो फिर भी बड़ोंके सम्बन्धमें क्या...

बात पूरी भी नहीं होने पाई थी कि हेमांगिनीने कहा—सब जानती हूँ। कोई अनजान बच्ची नहीं हूँ जो बड़ोंकी मान-मर्यादा न समझती होऊँ। लेकिन मैं उस लड़केको चाहती हूँ, इसीलिए वे मानो मुझे दिखला दिखलाकर उसे दिन-रात बींधते रहते हैं।

उसका स्वर कुछ नरम हो गया। कारण, अचानक अपने जेठके सम्बन्धमें ताना मारकर वह मन ही मन अप्रतिभ हो गई। लेकिन उसके बदनमें भी बहुत दाह हो रही थी, इसीलिए वह गुस्सेको न सँभाल सकी। विपिन अन्दर ही अन्दर उन लोगोंके पक्षमें थे। कारण, एक पराये लड़केके लिए अपने बड़े भाईके साथ व्यर्थ झगड़ा करना वे पसन्द न करते थे। स्त्रीकी इस लज्जाको लक्ष्य करके मौका पाकर उन्होंने कुछ जोर देकर कहा—बींधते ऊँधते कुछ भी नहीं हैं। वे अपने लड़केको कायदेमें रखते हैं, काम-धन्धा सिखलाते हैं; इससे अगर तुम्हें तकलीफ हो तो कैसे काम चलेगा? और इसके सिवा वे लोग बड़े ठहरे, चाहे जो करें।

हेमांगिनी अपने स्वामीके मुखकी ओर देखकर पहले कुछ विस्मित हुई। कारण वह इस गृहस्थीको पन्द्रह-सोलह वर्षसे चला रही है, परन्तु इसके पहले उसने अपने पतिकी इतनी अधिक भारी भ्रातृ-भक्ति कभी नहीं देखी थी। लेकिन तुरन्त ही उसके सारे शरीरमें आग-सी लग गई। उसने कहा—अगर वे गुरुजन हैं, बड़े हैं, तो मैं भी माँ हूँ। अगर गुरुजन अपना मान आप ही निःशेष कर डालेंगे, तो मैं काहेसे उसकी पूर्ति करूँगी?

विपिन शायद इसका कुछ जवाब देना चाहते थे, लेकिन रुक गये। दरवाजेके बाहरसे एक कुण्ठित कण्ठकी विनम्र पुकार सुनाई पड़ी—मँझली बहन।

स्वामी और स्त्रीकी आँखें चार हुईं। विपिन कुछ हँसे पर उससे प्रीति विकीर्ण

न हुई। स्त्री अधरसे होंठ दबाकर दरवाजेके पास आ पहुँची और चुपचाप किशनके मुखकी ओर देखने लगी। उसे देखते ही किशन आह्लादसे विगलित हो गया। उसके मुँहसे पहले यही निकला—मँझली बहन, तबीयत कैसी है?

हेमांगिनी क्षण-भर तो कुछ भी न बोल सकी। जिसके लिए स्वामी और स्त्रीमें अभी इतना विवाद हो गया है, अचानक उसीको सामने पाकर विवादकी सारी विरक्ति उसीके सिर बरस पड़ी। हेमांगिनीने धीरेसे परन्तु कठोर स्वरमें कहा—यहाँ क्या है? तू रोज रोज यहाँ क्यों आता है?

किशनका कलेजा धड़क उठा। हेमांगिनीका यह कठोर स्वर सचमुच ही इतना कठोर सुन पड़ा कि इसका कारण चाहे जो हो, पर उस अभागे बालकको यह समझनेमें देर न लगी कि यह स्नेहपूर्ण परिहास नहीं है।

मारे भय, विस्मय और लज्जाके उसके चेहरेपर कालिमा छा गई। उसने कहा—देखने आया हूँ।

विपिनने हँसकर कहा—तुम्हें देखनेके लिए आया है!

इस हँसीने मानो हेमांगिनीका मुँह चिढ़ाकर अपमान किया। उसने कुचली हुई नागिनकी तरह अपने पतिकी ओर एक बार देखकर ही आँखें फेर लीं और कहा—अब तू यहाँ मत आना, जा।

"अच्छा" कहकर किशनने अपने मुखपरकी स्याही हँसीसे ढकनेका प्रयत्न किया; लेकिन, इससे उसका सारा मुख और भी स्याह और भी श्रीहीन विकृत हो गया। वह मुँह नीचा करके चला गया।

उस विकृतिकी काली छाया हेमांगिनी अपने मुखपर लेकर स्वामीके मुखकी ओर एक बार देख जल्दीसे कमरा छोड़कर बाहर हो गई।

चार पाँच दिन बीत गये, लेकिन हेमांगिनीका ज्वर नहीं घटा। कल डाक्टर कह गया था कि छातीमें सरदी बैठ गई है। अभी अभी सन्ध्याका दीया जला था कि इतनेमें ललितने अच्छे अच्छे कपड़े पहनकर और कमरेके अन्दर आकर कहा—माँ, आज दत्त बाबूके यहाँ कठपुतलीका नाच होगा। मैं जाकर देख आऊँ?

माँने कुछ हँसकर कहा—क्यों रे ललित, आज पाँच छः दिनसे तेरी माँ बीमार पड़ी है, तू कभी एक बार पास आकर भी नहीं बैठा?

ललित लज्जित होकर सिरहानेके पास आ बैठा। माँने स्नेहपूर्वक लड़केकी

पीठपर हाथ रखकर कहा—अगर मेरी बीमारी अच्छी न हो और मैं मर जाऊँ, तो तू क्या करेगा? खूब रोएगा?

"हटो, तुम अच्छी हो जाओगी?" इतना कहकर ललितने अपनी माँके हृदयपर एक हाथ रख दिया। माँ लड़केका हाथ अपने हाथमें लेकर चुप हो रही। ज्वरके समय पुत्रका यह कर-स्पर्श उसके सर्वांगको शीतल करने लगा। उसकी इच्छा होने लगी कि इसी तरह समय कट जाय। लेकिन थोड़ी देर बाद ललित जानेके लिए छटपटाने लगा। शायद पुतलियोंका नाच शुरू हो गया हो, यह खयाल आनेसे अन्दर ही अन्दर उसका चित्त अस्थिर होने लगा। लड़केके मनकी बात समझकर माँने मन ही मन हँसते हुए कहा—अच्छा जा, देख आ। लेकिन ज्यादा रात मत करना।

"नहीं माँ, मैं जल्दी ही आ जाऊँगा।"

इतना कहकर ललित चला गया। लेकिन दो ही मिनट बाद वह लौट आया और बोला—माँ एक बात कहूँ?

माँने हँसते हुए पूछा—एक रुपया चाहिए न? उस ताकपर रखे हुए हैं, ले ले। देख, एकसे ज्यादा मत लेना।

"नहीं माँ, रुपया नहीं चाहिए। बतलाओ, मेरी बात सुनोगी?"

माँने विस्मय प्रकट करते हुए कहा—रुपया नहीं चाहिए? तो फिर क्या बात है?

ललित खिसककर माँके और भी पास जा पहुँचा और बोला—माँ, जरा किशन-को आने दोगी? कमरेमें नहीं आवेंगे, दरवाजेपरसे ही एक बार तुम्हें देख कर चले जायँगे। वे कल भी बाहर आकर बैठे थे और आज भी बैठे हैं।

हेमांगिनी व्यस्त होकर उठ बैठी और बोली—जा जा ललित, अभी बुला ला। हाय हाय, बेचारा बाहर बैठा है, तुम लोगोंने मुझसे कहा भी नहीं!

"मारे डरके अन्दर आना जो नहीं चाहते।" इतना कहकर ललित चला गया। कोई एक ही मिनट बाद किशन कमरेमें आया और जमीनकी तरफ सिर झुकाकर दीवारके सहारे खड़ा हो गया।

हेमांगिनीने कहा—आ भइया, आ।

किशन उसी तरह चुपचाप खड़ा रहा। इसपर हेमांगिनीने खुद ही उठकर

और उसे हाथ पकड़कर बिछौनेपर बैठा लिया। फिर उसकी पीठपर हाथ फेरते हुए कहा—हाँ रे किशन, उस दिन बकझक की थी, इसीलिए शायद तू अपनी मँझली बहनको भूल गया ?

सहसा किशन फूटफूटकर रोने लगा। हेमांगिनीको कुछ आश्चर्य हुआ, क्योंकि आज तक उसे किसीने रोते हुए नहीं देखा था। अनेक दुःख और यातनाएँ मिलनेपर भी वह चुपचाप सिर झुकाये रहता है, कभी किसीके सामने रोता नहीं। उसका यह स्वभाव हेमांगिनी जानती थी, इसीलिए बहुत आश्चर्य करके बोली—छीः, रोना किस लिए ? राजा बेटे कहीं आँसू बहाते हैं ?

इसके उत्तरमें किशन धोतीके छोरको मुँहमें भरकर प्राणपणसे रुलाईको रोकनेकी चेष्टा करते हुए बोला—डाक्टरने कहा है कि कलेजेमें सरदी बैठ गई है ?

हेमांगिनीने हँसते हुए कहा—बस इसीलिए ? छीः छीः, तू भी कैसा लड़का है !

इतना कहते कहते ही हेमांगिनीकी आँखोंसे टपटप दो बूद आँसू टपक पड़े। उसने उन्हें बाएँ हाथसे पोंछकर और उसके माथेपर एक हाथ रखकर कौतुक करते हुए कहा—सरदी बैठ गई है यह डाक्टरने भले ही कहा हो ! अगर मैं मर जाऊँ, तो तू और ललित दोनों मिलकर गँगाजी तो पहुँचा आओगे।—क्यों पहुँचा सकोगे ?

इसी समय "मँझली बहू, आज कैसा जी है ?" कहती हुई बड़ी बहू आकर दरवाजेपर खड़ी हो गई। थोड़ी देर तक किशनकी ओर तीव्र दृष्टिसे देखते रहकर बोली—लो, यह तो यहाँ मौजूद है। और यह क्या ? मँझली बहूके सामने रोकर दुलार हो रहा है। यह ढोंगी कितने फरफंद जानता है !

बहुत क्लान्त हो जानेके कारण हेमांगिनी अभी अभी तकियेके सहारे लेटी थी। पर अब तीरकी तरह सीधी होकर उठ बैठी और बोली—जीजी, मुझे आज छः-सात दिनसे बुखार आ रहा है। मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, इस समय तुम चली जाओ।

कादम्बिनी पहले तो कुछ सकपकाई, लेकिन तुरन्त ही उसने अपने आपको सँभालकर कहा—मँझली बहू, तुमसे तो कुछ कहा नहीं है। अपने भाईको डाँटती हूँ। इसपर तुम क्यों काटने दौड़ती हो ?

हेमांगिनीने कहा—तुम्हारी डाँट-डपट तो रात-दिन जारी है। उसे घर जाकर करना। यहाँ मेरे सामने करनेकी जरूरत नहीं और न मैं करने ही दूँगी।

"क्यों, क्या तुम घरसे निकल दोगी?"

हेमांगिनीने हाथ जोड़कर कहा—जीजी, मेरी तबीयत बहुत खराब है। मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ। या तो चुप रहो और या चली जाओ।

कादम्बिनीने कहा—अपने भाईका भी शासन न कर पाऊँगी?

कादम्बिनीने उत्तर दिया—अपने घर जाकर करना।

"हाँ, सो तो आज अच्छी तरह ही करूँगी। मेरे नाम जो खूब लगाई-बुझाई जाती हैं, वह सब मैं आज निकाल दूँगी। बदजात, झूठा कहींका! मैंने कहा कि गौके गलेमें बाँधनेके लिए डोरी नहीं है; किशन जरा जाकर दो अँटिया पाट काट ला, तो बोला नहीं बहन, तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, जरा कठ-पुतलीका नाच देख आऊँ।—यही न कठ-पुतलीका नाच देखा जा रहा है?"

यह कहकर कादम्बिनी धम धम पैर पटकती हुई वहाँसे चली गई।

हेमांगिनी कुछ देर तक काठकी तरह बैठी रही, फिर लेटकर बोली—किशन, तू कठ-पुतलीका नाच देखने क्यों नहीं गया? चला गया होता तो ये सब बातें न होतीं। जब वे लोग तुझे नहीं आने देते, तब भइया, हमारे यहाँ मत आया कर।

किशन बिना कुछ कहे-सुने चुपचाप चला गया। लेकिन थोड़ी ही देर बाद फिर लौट आया और बोला—बहन, हमारे गाँवकी विशालाक्षी देवीकी बहुत ही जागती कला है। पूजा देनेसे सारे रोग-सोग दूर हो जाते हैं। मझली बहन, दे दो न उनकी पूजा।

अभी अभी व्यर्थका झगड़ा हो जानेसे हेमांगिनीका मन बहुत ही बिगड़ गया था। लड़ाई-झगड़ा तो हुआ ही करता है, उससे नहीं, किन्तु, ऐसा बढ़िया बहाना मिल जानेसे इस अभागेकी न जाने कैसी दुर्दशा होगी, वास्तवमें यह सोच सोचकर उसकी छाती क्षोभ और निरूपाय आक्रोशसे जल उठी थी। किशन जब फिर लौट आया, तब हेमांगिनी उठकर बैठ गई। उसको अपने पास बिठाकर और उसकी पीठपर हाथ फेरती हुई वह रो पड़ी। फिर आँखें पोंछकर बोली—अच्छी हो जाऊँगी, तब तुझे लुककर पूजा देनेके लिए भेज दूँगी। जा तो सकेगा अकेला?

किशन मारे उत्साहके आँखें फाड़कर बोला—खूब मजेसे अकेला चला जाऊँगा! मँझली बहन, तुम आज ही मुझे एक रुपया देकर भेज दो न। मैं कल सबेरे ही पूजा देकर तुम्हें प्रसाद ला दूँगा जिसे खाते ही तुम्हारा रोग दूर हो जायगा। मुझे आज ही भेज दो न मँझली बहन।

हेमांगिनीने देखा कि अब इससे ठहरा नहीं जाता। उसने कहा—लेकिन कल लौटनेपर ये लोग तुझे खूब मारेंगे।

मार-पीटका नाम सुनकर पहले तो किशन कुछ सहमा, लेकिन फिर तुरन्त ही प्रफुल्लित होकर बोला—भले ही मारें। तुम्हारा रोग तो दूर हो जायगा।

हेमांगिनीकी आँखोंसे फिर आँसू बहने लगे। उसने कहा—क्यों रे किशन, मैं तो तेरी कोई नहीं हूँ। फिर मेरे लिए तुझे इतनी फिक्र क्यों?

भला, इस प्रश्नका उत्तर किशन कहाँ पावे? वह कैसे समझावे कि उसका पीड़ित और आर्त्त हृदय दिन-रात रो-रोकर अपनी माँको ढूँढ़ता फिरता है। उसने थोड़ी देर तक हेमांगिनीके मुखकी ओर देखकर कहा—तुम्हारा रोग जो दूर नहीं होता है मँझली बहन, छातीमें सरदी बैठ गई है!

हेमांगिनीने अबकी बार कुछ हँसकर कहा—मेरी छातीमें सरदी बैठ गई है, तो इससे तुझे क्या? तुझे इतनी चिन्ता क्यों है?

किशनने चकित होकर कहा—चिन्ता न होगी? मँझली बहन, छातीमें सरदी बैठ जाना बहुत खराब है। अगर बीमारी बढ़ जाय तो?

"तो फिर तुझे बुलवा भेजूँगी। लेकिन बिना बुलाये मत आना भइया।

"क्यों मँझली बहन?"

हेमांगिनीने दृढ़तापूर्वक सिर हिलाकर कहा—नहीं, अब मैं तुझे यहाँ नहीं आने दूँगी। बिना बुलाये अगर तू आयगा तो मैं बहुत नाराज होऊँगी।

किशनने उसके मुँहकी ओर देखकर डरते हुए पूछा—अच्छा तो बतलाओ कि कल सबेरे किस समय बुलवाओगी।

"क्या कल सबेरे ही फिर तुझे आना चाहिए?

किशन अप्रतिभ होकर कहा—अच्छा सबेरे न सही, दोपहरको आ जाऊँगा। ठीक है न मँझली बहन?

उस समय उसकी आँखों और मुखपर एक ऐसा व्याकुलतापूर्ण अनुनय फूट

पड़ा कि हेमांगिनीको मन ही मन बहुत कष्ट हुआ। लेकिन अब तो बिना कठोर हुए काम नहीं चल सकता। सभीने मिलकर इस निरीह और नितान्त असहाय बालकको जो यातना देना शुरू किया है, उसे और किसी कारणसे भी बढ़ा देनेसे काम नहीं चल सकता। शायद वह उसे सह सकता है, मँझली बहनके यहाँ आने-जानेका दण्ड चाहे जितना भारी हो, उसे सह लेनेसे तो शायद वह पीछे न हटेगा। परन्तु स्वयं हेमांगिनी यह कैसे सहेगी?

हेमांगिनीकी आँखोंसे फिर जल बहने लगा। फिर भी उसने मुँह फेर कर रुखाईसे कहा—मुझे तंग न कर किशन। यहाँसे चला जा। जब बुलाऊँ, तब आना। नहीं तो जब चाहे तब आकर मुझे तंग मत करना।

"नहीं, तंग तो मैं नहीं करता।"

इतना कहकर अपना भीत और लज्जित मुख नीचा किये किशन जल्दीसे चला गया।

अब तो हेमांगिनीकी आँखोंसे झरनेकी तरह आँसुओंकी धारा बहने लगी। उसे स्पष्ट रूपसे दिखाई पड़ने लगा कि यह निरुपाय, अनाथ बालक अपनी माँ गँवाकर मुझे अपनी माँ समझ रहा है। मेरे ही आँचलका थोड़ा-सा हिस्सा माथेपर खींच लेनेके लिए कंगालकी तरह न जाने क्या क्या करता फिरता है!

हेमांगिनीने आँखें पोंछकर मन ही मन कहा—किशन, तू तो यहाँसे ऐसा उदास मुँह बनाकर चला गया। भाई, लेकिन तेरी यह मँझली बहन तो तुझसे भी बढ़कर निरुपाय है। इसमें इतनी भी क्षमता नहीं है कि तुझे जबरदस्ती खींचकर कलेजेसे लगा ले।

उमाने आकर कहा—माँ, कल किशन मामा तगादेको न जाकर तुम्हारे पास आकर बैठ गये थे, इसलिए उन्हें तायाजीने ऐसा मारा कि नाकसे...।

हेमांगिनीने धमकाकर कहा—अच्छा अच्छा, हो गया, रहने दे। तू जा, भाग जा यहाँसे।

अचानक झिड़की खाकर उमा चौंक पड़ी। वह और कुछ न कहकर चुपचाप जा रही थी कि माँने पुकारकर कहा—अरे सुन तो। क्या नाकसे बहुत खून निकला है?

उमा लौटकर बोली—नहीं, बहुत-सा नहीं, थोड़ा-सा।

" अच्छा, तू जा । "

दरवाजेके पास पहुँचकर ही उमाने कहा—माँ, देख किशन मामा तो यहाँ ही खड़े हैं ।

किशनने यह बात सुन ली । जान पड़ता है कि इसे अपनी अभ्यर्थना समझ कर उसने मुँह बढ़ाकर सलज्ज हँसते हुए पूछा—मँझली बहन, कैसा जी है ?

क्षोभ, दुःख और अभिमानके मारे हेमांगिनीने पागलोंकी तरह चिल्लाकर कहा—यहाँ क्या करने आया है ? जा, जल्दी चला जा यहाँसे । कहती हूँ, दूर हो जा...

किशन मूढ़की तरह आँखें फाड़ फाड़कर देखने लगा । हेमांगिनीने और तीव्र स्वरसे कहा—कम्बख्त, तो भी खड़ा हुआ है ! गया नहीं ?

किशन सिर झुकाकर और सिर्फ ' जाता हूँ ' कहकर चला गया । उसके चले जानेपर हेमांगिनी निर्जीवकी तरह बिछौनेपर एक किनारे पड़ गई और अस्फुट स्वरसे कहने लगी—कम्बख्तसे सौ बार कह दिया कि मेरे पास मत आया कर, फिर भी वही ' मँझली बहन ' । उमा, जाकर शिब्बूसे तो कह दे कि अब उसे घरके अन्दर न आने दिया करे ।

उमाने कोई उत्तर नहीं दिया, वह चुपचाप बाहर चली गई । रातको हेमांगिनीने अपने स्वामीको बुलवाकर रुँधे हुए स्वरसे कहा—आज तक तो मैंने तुमसे कभी कुछ नहीं माँगा । लेकिन आज इस बीमारीके समय एक भिक्षा माँगती हूँ ।—बतलाओ, दोगे ?

विपिनने सन्दिग्ध कण्ठसे पूछा—क्या चाहती हो ?

हेमांगिनीने कहा—किशनको मुझे दे दो । वह बेचारा बहुत ही दुःखी है । उसके माँ-बाप नहीं हैं । वे लोग उसे मारे डालते हैं और यह मुझसे अपनी आँखोंसे देखा नहीं जाता ।

विपिनने कुछ मुस्कराकर कहा—तो आँखें मूँद लो । बस, सब झगड़ा मिट जायगा ।

स्वामीका यह निष्ठुर परिहास हेमांगिनीके कलेजेमें तीरकी तरह बिंध गया । और किसी अवस्थामें तो वह इसे न सह सकती, लेकिन, आज मारे दुःखके उसके प्राण निकले जा रहे थे, इसीलिए उसने सह लिया और हाथ जोड़कर कहा—

मैं तुम्हारी सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं उसे अपने पेटके लड़केकी तरह चाहती हूँ। मुझे दे दो। उसे पाल-पोसकर बड़ा करूँगी, खिलाऊँगी, पहनाऊँगी। इसके बाद तुम लोगोंकी जो इच्छा हो, वह करना। जब वह सयाना हो जायगा, तब मैं कुछ भी न कहूँगी।

विपिनने कुछ नरम होकर कहा—वह क्या कोई मेरी दूकानका धान या चावल है, जो मैं लाकर दे दूँगा। दूसरीका भाई है, दूसरेके घर आया है। तुम बीचमें पड़कर इतना दरद किस लिए महसूस करती हो?

हेमांगिनी रो पड़ी। थोड़ी देर बाद उसने आँसू पोछते हुए कहा—अगर तुम चाहो तो जेठजीसे कहकर और जेठानीसे कहकर मजेसे ला सकते हो। मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, उसे ला दो।

विपिनने कहा—अच्छा, मान लो कि ऐसा हो सकता है, तो भी हम कहाँके ऐसे बड़े आदमी हैं जो उसका पालन-पोषण करेंगे?

हेमांगिनीने कहा—आगे तो तुम मेरी एक तुच्छ बात भी नहीं टालते थे। अब मैंने ऐसा कौन-सा अपराध किया है जो तुमसे इस तरह कहती हूँ,—जतलाती हूँ, सचमुच ही मेरे प्राण निकले जा रहे हैं,—तो भी तुम मेरी यह मामूली-सी बात नहीं मानना चाहते हो? वह अभागा है, तो क्या तुम सब मिलकर उसे मार ही डालोगे! मैं उसे अपने यहाँ आनेको कहूँगी, देखूँ कि वे लोग क्या करते हैं।

विपिनने रुष्ट होकर कहा—मैं उसे खिला-पिला नहीं सकूँगा।

हेमांगिनीने कहा—मैं खिला-पिला सकूँगी। क्या मैं इस घरकी कोई नहीं हूँ जो अपने लड़केको खिला पहना न सकूँगी? मैं कल ही उसे बुलाकर अपने पास रखूँगी। और यदि जेठानी जोर करेंगी, तो मैं उसे थानेमें दारोगाके पास भेज दूँगी।

स्त्रीकी बात सुनकर बिपिन क्रोध और अभिमानसे क्षण-भरके लिए अवाक् होकर बोले—अच्छा, देखा जायगा।

और यह कहकर वे बाहर हो गये।

दूसरे दिन सबेरेसे ही वर्षा होने लगी थी। हेमांगिनी अपने कमरेकी खिड़की खोलकर आकाशकी ओर देख रही थी। सहसा उसे पाँचूगोपालका उच्च स्वर सुनाई दिया। वह चिल्लाकर कह रहा था—माँ, अपने गुनी भाईको देखो, पानीमें भींगते हुए हाजिर हो गये हैं!

"झाड़ू कहाँ है रे? मैं आती हूँ।" कहती हुई और हुंकार करती हुई कादम्बिनी तुरन्त बाहर निकली और सिरपर अँगोछा डालकर सदर दरवाजेपर जा पहुँची।

हेमांगिनीकी छाती मानो काँप उठी। उसने ललितको बुलाकर कहा—जा तो बेटा, जरा उस मकानमें और देख तो तेरे किशन मामा कहाँसे आये हैं।

ललित दौड़ा हुआ गया और थोड़ी ही देर बाद लौटकर बोला—पाँचू भइयाने उन्हें उकड़ूँ बैठा रखा है और उनके सिरपर दो ईंटें रखी हुई हैं।

हेमांगिनीने सूखे हुए मुँहसे पूछा—उसने क्या किया था?

ललितने कहा—कल दोपहरको उन्हें ग्वालोंके यहाँ तगादेके लिए भेजा तो वहाँसे तीन रुपये वसूल करके भाग गये और तीनों रुपये खर्च करके अभी आये हैं।

हेमांगिनीको इस बातपर विश्वास नहीं हुआ। उसने पूछा—किसने कहा है कि उसने रुपये वसूल कर लिये?

"लक्ष्मण खुद ही आकर कह गया है।"

यह कहकर ललित पढ़ने चला गया। कोई दो-तीन घण्टे तक फिर कोई शोर नहीं सुनाई दिया। दस बजेके लगभग रसोईदारिन कुछ रोटियाँ दे गई थी। हेमांगिनी उठकर बैठना चाहती थी कि इसी बीचमें उसके कमरेके बाहर ही कुरुक्षेत्रका दृश्य उपस्थित हो गया। बड़ी बहूके पीछे पीछे पाँचू गोपाल किशनका कान पकड़े घसीटता ला रहा है, साथमें विपिनके बड़े भाई भी हैं। विपिनको बुलानेके लिए दूकानपर आदमी भेजा गया है।

हेमांगिनीने घबराकर सिरपर कपड़ा डाला और उठकर कमरेमें एक किनारे खड़ी हो गई। तुरन्त ही जेठजीने तीव्र स्वरसे कहना आरम्भ कर दिया—मँझली बहू, देखता हूँ कि तुम्हारे कारण हम लोग इस मकानमें नहीं रह सकेंगे। विपिनसे कह दो कि हमारे मकानका दाम दे दे जिससे हम लोग और कहीं जा रहें।

हेमांगिनी मारे आश्चर्यके हत-बुद्धि होकर चुपचाप खड़ी रही। तब बड़ी बहूने युद्ध-परिचालनका कार्य अपने हाथमें ले लिया और दरवाजेके ठीक सामने आकर खूब हाथ-मुँह हिलाकर कहना शुरू किया—मँझली बहू, मैं तुम्हारी जेठानी हूँ। तुम मुझे कुत्ते और गीदड़की तरह समझा करती हो, से

अच्छा ही करती हो। लेकिन मैंने तुमसे हजार बार कहा कि झूठमूठका दिखौआ प्रेम दिखाकर मेरे भाईको चौपट मत करो। क्यों, जो कहा था, आखिर वही हुआ न ? दो दिनका दुलार सहज है, लेकिन हमेशाका बोझ तो तुम उठाओगी नहीं। वह तो हमें ही उठाना पड़ेगा।

यह केवल कटूक्ति और आक्रमण है, हेमांगिनीने सिर्फ यही समझा और कुछ नहीं। उसने बहुत कोमल स्वरसे पूछा—आखिर हुआ क्या है ?

कादम्बिनीने और भी ज़्यादा हाथ मुँह मटकाकर कहा—बहुत अच्छा हुआ है,—बहुत बढ़िया हुआ है। तुम्हारी सीख मिलनेसे वसूल किये हुए रुपये चुराना सीख गया है। और दो-चार दिन इसी तरह अपने पास बुलाकर सिखाओ-पढ़ाओ, तो सन्दूकका ताला तोड़ना और सेंध लगाना भी सीख जायगा।

एक तो हेमांगिनी बीमार है, तिसपर यह निन्दनीय विद्रूप और मिथ्या अभियोग ! सुनकर वह ज्ञान खो बैठी। आजसे पहले उसने कभी किसी कारणसे अपने जेठके सामने कोई बात नहीं कही थी। लेकिन आज उससे न रहा गया। उसने कोमल स्वरसे कहा—क्या मैंने ही उसे चोरी करना और डाका डालना सिखा दिया है जीजी ?

कादम्बिनीने कहा—मैं कैसे जानूँ, तुमने सिखलाया है या नहीं। लेकिन पहले तो उसका यह स्वभाव नहीं था। फिर आखिर तुम लोगोंमें छिप-छिपकर इतनी बातें क्या होती हैं और उसे इतना बढ़ावा क्यों दिया जाता है ?

जो सब कुछ देखते हैं, उन्होंने देख लिया कि बहुत दिनोंका इकट्ठा हुआ और रुका हुआ विद्वेष आज जरा-सा मार्ग पाकर बाहर निकल पड़ा है।

थोड़ी देरके लिए हेमांगिनी हतज्ञानकी तरह हो रही। मानो यह बात उसके मस्तकमें पैठ ही नहीं सकी कि एक मनुष्य कभी दूसरे मनुष्यपर इस प्रकारका निष्ठुर आघात और निर्लज्ज अपमान कर सकता है। लेकिन यह दशा केवल क्षण-भर ही रही। दूसरे ही क्षण वह मर्मान्तिक आहत सिंहनीकी तरह बाहर निकल आई। उसकी आँखें आगकी तरह जल रही थीं। जेठको सामने देखकर सिरपरका कपड़ा तो जरा आगे खींच लिया, लेकिन अपना गुस्सा वह न सँभाल सकी। उसने अपनी जेठानीको सम्बोधन करके मृदु लेकिन फिर भी अति कठोर स्वरमें कहा—तुम इतनी बड़ी चमारिन हो कि तुम्हारे साथ

बात करनेमें भी मुझे घृणा होती है। तुम इतनी बड़ी बे-हया हो कि इस लड़केको अपना भाई भी कहती हो। आदमी अगर एक जानवर पालता है तो उसे भी पेट-भर खानेको देता है। लेकिन इस अभागेसे सभी तरहके छोटेसे छोटे काम लेकर भी कभी तुमने इसे भर-पेट खानेको नहीं दिया। अगर मैं न होती तो अब तक यह भूखों ही मर गया होता। वह केवल पेटकी ज्वालासे मेरे पास दौड़ा आता है; दुलार-प्यार पानेके लिए नहीं।

कादम्बिनीने कहा—हम लोग खाने नहीं देते, खाली काम लेते हैं, और तुमने उसे खिला-खिलाकर बचा रक्खा है?

हेमांगिनीने उत्तर दिया—मैं बिलकुल ठीक कहती हूँ। आज तक कभी तुमने उसे दोनों समय भर-पेट खानेको नहीं दिया। सिर्फ मार-पीट की है और जहाँ तक करा सकी हो काम कराती रही हो। तुम लोगोंके भयसे मैंने हजार बार आनेके लिए मना किया है, लेकिन जब भूख बरदास्त नहीं होती, तब सिर्फ इसीलिए दौड़ा आता है कि यहाँ उसे पेट-भर खानेको मिल जाता है,—चोरी डकैतीकी सलाह लेने नहीं आता। लेकिन तुम लोग इतने ईर्षालु हो कि यह भी अपनी आँखों नहीं देख सकते।

अबकी बार जेठने जवाब दिया। उन्होंने किशनको सामने खींच लाकर, उसकी धोतीके छोरमेंसे केलेके पत्तेका एक दोना निकाला और क्रुद्ध होकर कहा—हम ईर्षालु लोग क्यों इसे अच्छी नजरसे नहीं देख सकते सो तुम्हीं अपनी आँखोंसे देख लो। मँझली बहू, तुम्हारे सिखानेका ही यह नतीजा है कि यह हमारे रुपये चुराकर तुम्हारे भलेके लिए न जाने किस देवीको पूजा देकर प्रसाद लाया है। यह लो।

इतना कहकर उन्होंने उस दोनेमेंसे दो सन्देश, कुछ फूल, बेलपत्र आदि निकालकर दिखा दिये।

कादम्बिनीकी आँखें कपालपर चढ़ गईं। उसने कहा—अरी मैया री! कैसा चुप्पा शैतान है। कैसा धूर्त लड़का है! ठीक तो है मँझली बहू, अब तुम्हीं बतलाओ न कि किस मतलबसे इसने चोरी की है? क्या मेरे भलेके लिए?

मारे क्रोधके हेमांगिनीको ज्ञान नहीं रहा। एक तो उसका अस्वस्थ शरीर, तिसपर ये सब मिथ्या अभियोग; उसने जल्दीसे आगे बढ़कर किशनके दोनों

गालोंपर जोरसे दो तमाचे जड़ दिये और कहा—हरामजादे चोर, मैंने तुझे चोरी करना सिखला दिया है ? कितनी बार तुझे मना किया कि मेरे यहाँ मत आया कर और कितनी बार तुझे भगा दिया है !—मुझे निश्चय मालूम होता है कि तू चोरी करनेके इरादेसे ही जब तब मेरे यहाँ आकर झाँका करता था !

इससे पहले ही घरके और सब लोग वहाँ आकर जमा हो गये थे। शिब्बूने कहा—माँ, मैंने अपनी आँखोंसे देखा है कि परसों रातको यह तुम्हारे कमरेके सामने अँधेरेमें खड़ा था और मुझे देखते ही भाग गया था। अगर मैं न आ पहुँचता तो जरूर तुम्हारे कमरेमें घुसकर चोरी करता।

पाँचू गोपालने कहा—वह जानता है कि चाचीकी तबीयत ठीक नहीं है, इसलिए सन्ध्याको ही सो जाती हैं। वह क्या कम चालाक है !

किशनके साथ मँझली बहूके आजके व्यवहारसे कादम्बिनी जितनी प्रसन्न हुई, उतनी गत सोलह बरसोंमें कभी नहीं हुई थी। उसने बहुत ही खुश होकर कहा—भीगी बिल्लीकी तरह खड़ा है ! भला मँझली बहू, मैं कैसे जानती कि तुमने इसे अपने घर आनेसे भी मना कर दिया है। यह तो सबसे कहता फिरता है कि 'मँझली बहू मुझे माँसे भी बढ़कर चाहती हैं।' इसके बाद उसने दौने समेत वह प्रसाद दूर फेंककर कहा—तीन रुपये चुराकर न जाने कहाँसे दो चार फूल-पत्तियाँ उठा लाया है। हरामजादा, चोर !

घर ले जाकर कादम्बिनीके पतिने चोरकोस जा देनी शुरू कर दी। उसपर बहुत ही निर्दय प्रहार होने लगे। लेकिन वह न तो मुँहसे कोई बात ही कहता है और न रोता ही है। जब इधर मारते हैं, तब उधर मुँह फेर लेता है और उधर मारते हैं तो हधर मुँह कर लेता है। बहुत भरी हुई गाड़ीमें जुता हुआ बैल कीचड़में फँसकर जिस तरह मार खाता है, उसी तरह किशनने भी चुपचाप मार खाई। यहाँ तक कि कादम्बिनी तकने स्वीकार किया कि हाँ, यह मार खाना सीखा था ! लेकिन भगवान जानते हैं कि यहाँ आनेसे पहले निरीह स्वभावके कारण कभी किसीने उसपर हाथ तक नहीं उठाया था।

हेमांगिनी अपने कमरेकी सभी खिड़कियाँ बन्द करके काठकी मूरतकी तरह चुपचाप बैठी है। उमा मार देखने गई थी। उसने लौटकर कहा—ताईजी कहती हैं कि किशन मामा बड़ा होकर डाकू होगा। उसके गाँवमें न जाने कौन देवी हैं...

" उमा ! "

अपनी माताका यह अश्रु-विकृत और भग्न स्वर सुनकर उमा चौंक पड़ी। उसने पास आकर डरते डरते पूछा—क्या है माँ ?

" क्यों री, क्या अब भी उसे सब लोग मिलकर मार रहे हैं ? "

इतना कहकर हेमांगिनी जमीनपर मुँहके बल लोट गई और रोने लगी। माँका रोना देखकर उमा भी रोने लगी। इसके बाद वह माँके पास बैठकर आँचलसे उसकी आँखें पोंछती हुई बोली—प्रसन्नकी माँ किशन मामाको बाहर खींचकर ले गई है।

हेमांगिनीने और कुछ नहीं कहा,—वह चुपचाप उसी जगह पड़ी रही। दोपहरको दो तीन बजेके लगभग उसे जाड़ा देकर बहुत जोरोंका बुखार हो आया। आज कई दिनोंके बाद वह पथ्य लेने बैठी थी—वह पथ्य तब भी एक किनारे पड़ा हुआ सूख रहा था। सन्ध्याके बाद विपिन उस मकानसे अपनी भाभीसे सारा हाल सुनकर बहुत ही क्रुद्ध भावसे अपने कमरेमें जा रहे थे कि उमाने पास आकर धीरेसे कहा—माँ तो बुखारमें बेहोश पड़ी हैं।

विपिनने चौंककर पूछा—हैं, यह क्या हुआ ? इधर तीन-चार दिनसे तो बुखार नहीं था !

विपिन मन ही मन अपनी स्त्रीको बहुत चाहते हैं। कितना चाहते हैं, यह चार-पाँच बरस पहले अपने भाई और भौजाईसे अलग होते समय मालूम हुआ था। वे घबराये हुए कमरेमें पहुँचे। देखा कि अभी तक वह जमीनपर पड़ी है। उन्होंने व्यस्त होकर पलंगपर लेटानेके लिए शरीरपर हाथ लगाया ही था कि उसने आँखें खोल दीं। थोड़ी देर तक उनके मुखकी ओर देखकर अकस्मात् उसने उनके दोनों पैर पकड़ लिये और रोते हुए कहा—किशनको आश्रय दे दो, नहीं तो मेरा यह बुखार नहीं छूटेगा। दुर्गामाई मुझे किसी तरह माफ नहीं करेंगीं।

विपिन अपने पैर छुड़ाकर उसके पास बैठ गये और सिरपर हाथ फेरते हुए सान्त्वना देने लगे। हेमांगिनीने पूछा—दोगे आश्रय ?

विपिनने हाथसे उसके सजल नेत्र पोंछते हुए कहा—तुम जो चाहोगी, वही होगा। तुम अच्छी हो जाओ।

हेमांगिनी बिना कुछ कहे उठकर बिछौनेपर जा लेटी। रातको ही बुखार उतर गया। दूसरे दिन सबेरे उठकर जब विपिनने देखा कि बुखार नहीं है, तब वे बहुत प्रसन्न हुए। वे नहा-धोकर और जल-पान करके दूकान जा रहे थे कि इतनेमें हेमांगिनीने उनके पास आकर कहा—मार पड़नेसे किशनको बहुत तेज बुखार आ गया है। उसे मैं अपने यहाँ ले आती हूँ।

विपिनने मन ही मन अत्यन्त विरक्त होकर कहा—उसे यहाँ लानेकी क्या जरूरत है? जहाँ है, वहीं रहने दो न।

हेमांगिनीने कुछ देर तक स्तम्भित रहकर कहा—कल रातको तो तुमने वचन दिया था कि उसे आश्रय दोगे?

विपिनने अवज्ञापूर्वक सिर हिलाकर कहा—वह कौन है जो उसे घर लाकर पालन-पोसना होगा? तुम भी खूब हो!

कल रातको अपनी स्त्रीको अत्यन्त अस्वस्थ देखकर जो स्वीकार किया था, आज सबेरे स्वस्थ देखकर उसीसे उन्होंने इंकार कर दिया। वे छाता बगलमें दबाकर उठ खड़े हुए और बोले—पागलपन मत करो। भइया और भाभी दोनों बहुत चिढ़ जायँगे।

हेमांगिनीने शान्त और दृढ स्वरसे कहा—वे लोग चिढ़कर क्या उसका खून कर डालेंगे? या मैं उसे ले आऊँगी तो दुनियामें कोई उसे रोक सकेगा? मेरे दो बच्चे थे, कलसे तीन हो गये हैं। मैं किशनकी माँ हूँ।

"अच्छा देखा जायगा।" कहकर विपिन चले जा रहे थे कि हेमांगिनी सामने आकर खड़ी हो गई और बोली—क्या उसे इस घरमें नहीं लाने दोगे?

"हटो, हटो। कैसा पागलपन करती हो!" कहकर और लाल आँखें दिखाकर विपिन चल दिये।

हेमांगिनीने शिब्बूको पुकारकर कहा—शिब्बू, जा तो, एक बैल-गाड़ी ले आ। मैं अपने मैके जाऊँगी।

विपिन सुनकर मन ही मन हँसे और बोले—ऊँह, डर दिखलाया जा रहा है! इसके बाद वे दूकान चले गये।

किशन चंडीमंडपके पास एक तरफ फटी हुई चटाईपर बुखारमें, शरीरकी

पीड़ाके कारण और शायद हृदयकी भी पीड़ाके कारण बेहोश-सा पड़ा था हेमांगिनीने पुकारा—किशन !

किशन इस तरहसे उठकर खड़ा हो गया कि मानो पहलेसे ही तैयार था और बोला, 'मँझली बहन!' इसके बाद ही सलज्ज हँसीसे उसका सारा मुख भर गया। मानो उसके शरीरमें कोई रोग या पीड़ा है ही नहीं, इस तरह वह बड़े उत्साहसे खड़ा हो गया और अपने दुपट्टेके छोरसे वह फटी हुई चटाई झाड़ता हुआ बोला—बैठो।

हेमांगिनीने हाथ पकड़कर उसे कलेजेसे लगा लिया और कहा—नहीं भइया, मैं बैठूँगी नहीं। तू मेरे साथ चल, आज तुझे साथ चलकर मुझे मैके पहुँचा आना होगा।

"चलो।" कहकर किशनने अपनी टूटी हुई छड़ी बगलमें दबा ली और फटा हुआ अँगोछा कन्धेपर रख लिया।

हेमांगिनीके घरके सामने बैल-गाड़ी खड़ी थी। किशनको साथ लेकर हेमांगिनी उसपर सवार हो गई। गाड़ी जब गाँवके बाहर निकल गई, तब पीछेसे पुकार और चिल्लाहट सुनकर गाड़ीवानने उसे रोका। पसीनेसे लथपथ और लाल मुँह लिये हुए विपिन वहाँ आ पहुँचे और डरते डरते पूछने लगे—कहाँ जा रही हो ?

हेमांगिनीने किशनको दिखलाकर कहा—इसके गाँव जाती हूँ।

"लौटोगी कब तक ?"

हेमांगिनीने गम्भीर और दृढ़ स्वरसे उत्तर दिया—जब भगवान लौटावेंगे तभी लौटूँगी।

"इसका मतलब ?"

हेमांगिनीने किशनको दिखलाते हुए कहा—इसे जब कभी कहीं आश्रय मिल जायगा तभी न अकेली लौटकर आ सकूँगी। नहीं तो इसे लेकर ही रहना पड़ेगा।

विपिनको याद हो आया कि उस दिन भी उन्होंने अपनी स्त्रीके मुखका यही भाव देखा था और ऐसा ही कंठ-स्वर सुना था जिस दिन मोती कुम्हारके निस्सहाय भानजेका बाग बचानेके लिए वह अकेली ही सब लोगोंके मुकाबलेमें

खड़ी हो गई थी। उन्हें यह भी याद हो आया कि अब यह वह मँझली बहू नहीं है जिसे आँखें दिखलाकर किसी कामसे रोका जा सके।

विपिनने नम्र स्वरसे कहा—अच्छा, अब माफ कर दो और घर चलो।

हेमांगिनीने हाथ जोड़कर कहा—नहीं, तुम्हीं मुझे माफ करो। काम पूरा किये बिना मैं किसी तरह घर नहीं लौट सकूँगी।

विपिन और एक मूहूर्त अपनी स्त्रीके शान्त परन्तु दृढ मुखकी ओर चुपचाप देखते रहे और तब सहसा उन्होंने सामने झुककर किशनका दाहिना हाथ पकड़कर कहा—किशन, अपनी मँझली बहनको घर लौटा ले चल भाई। मैं शपथपूर्वक कहता हूँ कि जब तक मैं जीता रहूँगा, तब तक दोनों भाई-बहनको कोई अलग न कर सकेगा। चल भाई, अपनी मँझली बहनको ले चल।

समाप्त